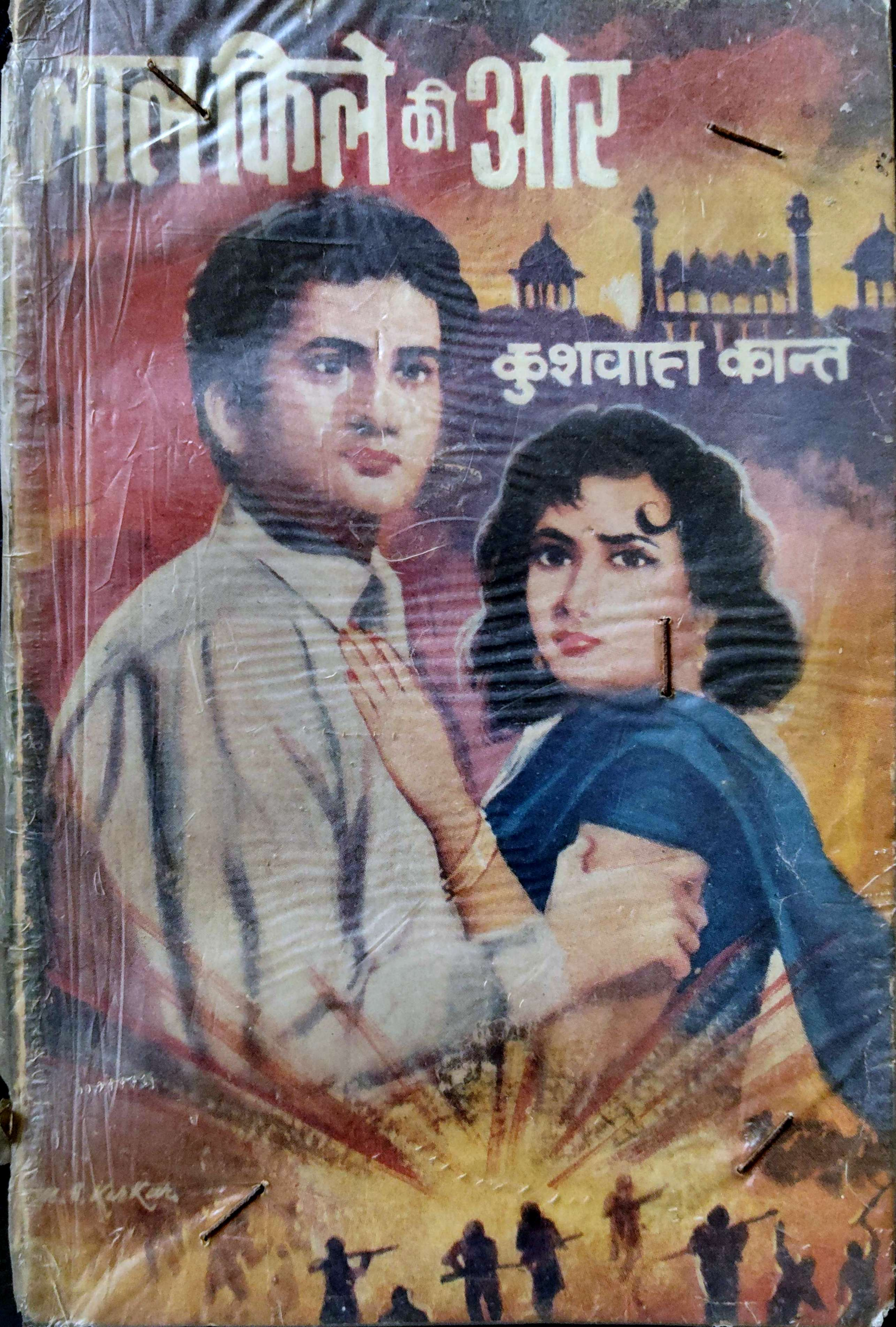

लाल किले की ओर
कुशवाहा कान्त

'लालकिले की ओर' कुशवाहा कान्त के सुप्रसिद्ध उपन्यास 'लाल-रेखा' का नाटकीय रूपान्तर है। अपने जीवनकाल में ही कुशवाहा कान्त ने एक फिल्म-कम्पनी के निमित्त इसे तैयार किया था। परन्तु कम्पनी की निष्क्रियता के कारण फिल्म का निर्माण नहीं हो सका।

कुशवाहा कान्त ने अपने इस रूपान्तर में हास्यरस का भी समावेश किया था। मूल कथावस्तु में विशेष परि-वर्तन न होते हुए भी, प्रस्तुत कृति की शैली अपने आप में अनूठा महत्व रखती है।

आशा है 'लालरेखा' के पाठकों के लिये 'लालकिले की ओर' भी कम आकर्षक न होगा।

मूल्य—छः रुपये मात्र



लाल किले की ओर

कुशवाहा कान्त

गहन अन्धकार। सहसा एक हल्की-सी प्रकाश-किरण लहरा उठती है और पहले मधुर फिर तीव्र संगीत के साथ कदम से कदम मिलाकर बीस-पचीस तरुणों का समूह, छाया रूप में पार्श्व से आगे बढ़ता हुआ दीख पड़ता है। समवेत कण्ठ-स्वर—

विजय-घोष घहरा दें।

स्वतन्त्रता के भीषण रण में, जन्मभूमि के विमल गगन में
जीर्ण-शीर्ण युवकों के तन में,
आत्म त्याग की आग फूंक कर धवल ध्वजा फहरा दें।
विजय-घोष घहरा दें।

वीर भावना हरित-भरित हो बलि वेदी की अग्नि ज्वलित हो
विरोधियों का दर्प दलित हो,
पराधीनता की बेड़ी से, माँ को मुक्त करा दें।
विजय-घोष घहरा दें।

समराङ्गण में बहे रक्त नित, हो भीषण संग्राम देश हित
शत्रु शक्ति हो जाये श्री-हत,
भारत भू में एक बार फिर जीवन-ज्योति जगा दें।
विजय-घोष घहरा दें।

द्वेष-दमन की लगन लगी हो, स्वतन्त्रता-रागिनी रँगी हो
नवजीवन की ज्योति जगी हो,
कर दें प्रलय रक्त की लहरें, लहर-लहर लहरा दें।
विजय-घोष घहरा दें।

रात की कालिमा में डूबा हुआ एक घना बाग। बड़ी-बड़ी झाड़ियाँ। बड़ा-सा फाटक। काफी पेड़।

बाग बहुत दिनों से बेमरम्मत पड़ा हुआ।

वर्दी पहने, रायफल लिए सिपाहियों की भगदड़ मच रही है। फायर की आवाजें आ रही हैं।

टार्च के नाचते हुए प्रकाश में कुछ आकृतियाँ स्पष्ट होती हैं। धाँय !....धाँय !!...

पकड़ो,...उधर गया,...उधर...(किसी सिपाही का स्वर) धाँय !....

चीख कर एक सिपाही लुढ़क जाता है।

फायर !....(किसी अफसर का स्वर)

दुम्म !....धाँय !!....दुम्म !!!...

रात्रि के अन्धकार में एक साथ पचीसों रायफलें गरज उठती हैं। मन्द समीरण का कलेजा बारूदी धुयें से भर जाता है। घोंसलों में सोये पक्षी बाहर निकल, भयभीत हो उड़ जाते हैं। जमीन पर पड़े पत्ते सिपाहियों की भगदड़ से परेशान हो उठते हैं।

●

हाथ में रिवाल्वर लिये सादी पोशाक पहने सार्जेण्ट रामलाल दौड़ता आकर एक घनी झाड़ी के पास खड़ा हो जाता है। परेशानी और डर से इधर-उधर देखता है। सुनसान देख कर सन्तोष की साँस लेता है। दूर-दूर पर फायर की आवाज।

रामलाल—बाईगाड, अजीब मुसीबत है। पुलिस की नौकरी करने के बदले झख मारना, मक्खियाँ मारना ठीक....

पास ही कहीं से फायर का धड़ाका सुनाई पड़ता है। रामलाल गिरते-गिरते बचता है। टोपी गिर जाती है उसकी। चश्मा नाक पर से उतर कर होठों पर आ जाता है।

रामलाल—बाईगाड, इतने फायर दनादन हो रहे हैं कि

धड़ाके से मर्द भी नामर्द बन जाय....तभी तो बाईगाड, अभी तक अपनी लाइफ में कोई वाइफ नहीं आई....

रामलाल जेब से एक नोट-बुक निकाल कर उसमें कुछ देखने लगता है। तभी किसी के दौड़कर आने की आहट होती है। रामलाल चौंक कर नोट-बुक जेब में रख लेता है और हाथ का रिवाल्वर जल्दी-जल्दी में उल्टा पकड़ कर उस ओर देखता है।

मिस्टर शर्मा दौड़े आते हैं हाथ में रिवाल्वर लिये। धौंकनी की तरह चलती साँस, तमतमाया चेहरा, आँखों में क्रोध की लाली।

टार्च के चमकीले प्रकाश में क्षणभर केवल वही दीखते हैं।

मि० शर्मा—(धीमा किन्तु दृढ़ स्वर) सार्जण्ट !

रामलाल—यस सर !....बाईगाड, मैं एकदम रेडी हूँ....

मि० शर्मा—किधर गया ?

रामलाल—बाईगाड, इधर ही तो आया था सर !....

मि० शर्मा—देखो, भागने न पावे....चाहे जिन्दा या मुर्दा, हमें उसको पकड़ना ही है आज....बड़ा परेशान कर रखा है बेईमान ने....

रामलाल—हम लोग पूरी कोशिश कर रहे हैं !....बाईगाड, हवा की भी मजाल नहीं कि बिना टक्कर खाये निकल जाय....

मि० शर्मा—शाबास ! ईनाम लेना हो तो हथेली पर जान लेकर खोजो...दस हजार कैश, पुलिस का ऊँचा ओहदा ! समझे ?

रामलाल—समझ गया सर !....अपनी सारी लाइफ तो बाई-गाड, समझते-समझते ही बीत रही है....

तभी—

धाँय ! धाँय.... !!....धाँय !!!....

मि० शर्मा—वह उधर गया....मैं देखता हूँ....तुम यहीं ठहरो सार्जण्ट !...

मिस्टर शर्मा हाथ में भरा रिवाल्वर लिए दौड़ पड़ते हैं।

सार्जेण्ट रामलाल खोजती आँखों से अन्धकार में इधर-उधर देखता है। पीछे की झाड़ी जरा-सी खड़कती है और जब तक उसका रिवाल्वर उस ओर घूमता है, तब तक उसकी गर्दन में किसी के रिवाल्वर की नली आ लगती है। धीमी किन्तु मजबूत आवाज आती है—"सार्जेन्ट रामलाल ! चुपचाप हाथ ऊपर कर दो....सीधे खड़े रहो....मुँह से जरा भी आवाज हुई कि मेरे रिवाल्वर की गोली और तुम्हारी जान साथ ही निकलेगी...."

रामलाल—(डर कर काँपते हुये) बाईगाड, मेरी तो जान एकदम निकल गई है....

रामलाल परेशान है। आक्रमणकारी की सूरत भी वह नहीं देख पाता है। जान लेने को तैयार रिवाल्वर उसकी गर्दन पर है। अन्धकार तो इतना घना है कि रामलाल की जान चुपचाप निकल जाय, और कोई देख भी न सके।

'दस हजार का ईनाम और पुलिस का ऊँचा ओहदा !'

एस० पी० मिस्टर शर्मा के ये वाक्य रामलाल के कानों में कीड़े बनकर रेंग रहे हैं। वह क्रान्तिकारी, जिसके पीछे सारे देश की पुलिस परेशान है, उसके पीछे खड़ा है। और उसका रिवाल्वर रामलाल की गर्दन छूकर कह रहा है जैसे, इन्सान की जान रुपयों और ओहदे से ज्यादा कीमती है।

क्या करे रामलाल ! अपनी जान सभी को प्यारी होती है। जान रहे तो रुपये और ओहदे भी काम आ सकते हैं, नहीं तो सारी चीजें बेकाम, व्यर्थ।

रामलाल—बाईगाड, तुम कौन हो माई डियर ?

युवक—यही तो सरकार भी जानना चाहती है....तभी तो दस हजार कैश और पुलिस का ऊँचा ओहदा !....बड़ी आसानी से पूछ रहे हो तुम मेरा परिचय, जैसे इतना बड़ा ईनाम स्वाती की बूँद बन कर तुम्हारे मुख में आ ही पड़ेगा....

युवक का सारा शरीर ग्रेट कोट से ढँका है।

रामलाल—यह बात नहीं है डियर !....बाईगाड, मैं तुम्हारी बहादुरी का लोहा मानता हूँ....

युवक—तुम्हीं क्यों, सारी गोरी सरकार मानती है....

रामलाल—तुम्हारे जैसा आदमी अगर पुलिस में हो तो बाई-गाड, बड़ी जल्दी आसमान छू ले....तुम क्या आसमान छूना नहीं चाहते? बाईगाड, आसमान में बहुत से तारे हैं....एक भी तोड़ लोगे तो जिन्दगी चमक जायगी तुम्हारी....

युवक—(तीखा स्वर) चुप रहो तुम सार्जण्ट रामलाल ! बहादुरों को भौंकने की आदत नहीं होती, वे हाथी की तरह चुपचाप चलते हैं....भौंकना तुम जैसे कुत्तों को ही मुबारक हो....

रामलाल—बाईगाड, तुम्हारी जबान बड़ी खतरनाक है डियर !...यू काल मी डाग ?

युवक—अपने गले पर रखे हुए इस रिवाल्वर का खतरा मत भूलो और जरा धीरे-धीरे बोलो....जानते नहीं, एक कुत्ते का भौंकना सुनकर दूसरे कुत्ते भी...ठीक से खड़े हो जाओ....शायद मिस्टर शर्मा आ रहे हैं। याद रखो जरा भी जुम्बिश खाई तो खोपड़ी आकाश पर उड़ जायगी....

रामलाल—बाईगाड, मेरी खोपड़ी आसमान पर न उड़ाकर जमीन पर ही रहने दो ब्रदर ! अरे यार, जरा अपना रिवाल्वर तो हटा लो....बाईगाड, गर्दन में भाले की तरह चुभा जा रहा है....

तभी पुनः किसी के आने की आवाज आती है।

युवक सजग हो जाता है। उसका रिवाल्वर रामलाल की गर्दन में चुभ-सा जाता है। युवक रामलाल के पीछे अन्धकार में अपने को छिपा लेता है।

तभी मिस्टर शर्मा हाथ में रिवाल्वर लिये पुनः आते हैं।

मि० शर्मा—रामलाल !

रामलाल—(कांपते हुए) यस सर! बाईगाड, यहाँ सब ठीक है....

मि० शर्मा—कुछ पता लगा ?....

युवक का रिवाल्वर धीरे से रामलाल की गर्दन पर रेंगता है।

रामलाल—जी....जी नहीं....बाईगाड, इधर तो एक मच्छर भी दिखाई नहीं पड़ा....

मि० शर्मा—(हैरान स्वर) उधर भी नहीं है....आखिर गया कहाँ....जगह का कोना-कोना हमने घेर रखा है....

रामलाल—बाईगाड, ये क्रान्तिकारी भी भूतों की तरह गायब हो जाते हैं। जिस तरह उस दिन गदहे की सींग खोजते-खोजते मैं परेशान हो गया, वही हाल आज भी है....भाग गया होगा सर!....

रामलाल के मुँह से उसकी गर्दन पर रखा हुआ युवक का रिवाल्वर बोल रहा है।

मि० शर्मा—भाग नहीं सकता वह रामलाल! हमें उसे पकड़ना है। याद रहे, यह हमला अगर व्यर्थ गया तो तुम्हारा बहुत बड़ा नुकसान होगा....आज के आक्रमण का सारा भार तुम्हारे ऊपर है....तुम्हीं ने तो पता लगाया था....

रामलाल— बाईगाड, मैंने बहुत ठीक पता लगाया था सर! आप जरा गौर से देखिये तो....बेहूदा आस पास ही कहीं होगा.... ओह, माई गुडनेस!....

रामलाल धीरे से चीख उठता है क्योंकि युवक अपना रिवाल्वर उसकी गर्दन में जोरों से चुभो देता है।

मि० शर्मा—क्या हुआ रामलाल ?....

रामलाल—कुछ नहीं सर! बाईगाड, कुछ नहीं हुआ....

मि० शर्मा—वह निकल भागा तो ठीक नहीं होगा....पकड़ने की पूरी कोशिश करो....

रामलाल— मैं बहुत कोशिश कर रहा हूँ सर ! बाईगाड, बदन का एक-एक रोआं इस जाड़े में पसीने से डूब गया है, मगर शैतान हवा बनकर बह चला....मैं खुद बहुत परेशान हूँ....उफ !...

रामलाल फिर धीरे से चीखता है।

मि० शर्मा—क्या है रामलाल ? बार-बार चीख रहे हो....

मिस्टर शर्मा रामलाल के पास आ जाते हैं।

रामलाल—कुछ नहीं सर ! बाईगाड, शायद गर्दन में कोई कीड़ा घुस गया था....

तभी अचानक मिस्टर शर्मा की दृष्टि रामलाल के पीछे खड़ी एक अस्पष्ट आकृति पर जा लगती है।

उनके रिवाल्वर को सजग होते देर नहीं लगती, परन्तु उनका प्रतिद्वन्द्वी उनसे भी अधिक तेज है। उसके दूसरे हाथ का रिवाल्वर मिस्टर शर्मा की पसली पर भिड़ गया है।

युवक—हाथ ऊपर करो मिस्टर शर्मा ! हाँ, अब ठीक .... अपना रिवाल्वर नीचे गिरा दो....तुम भी अपना रिवाल्वर रख दो सार्जण्ट रामलाल !....दोनों में से कोई भी कुछ बोला तो खैरियत नहीं....

रामलाल—बाईगाड, मैं एक लफ्ज भी नहीं बोलूँगा खैरियत हो चाहे सुपारियत....

मिस्टर शर्मा और रामलाल दोनों विवश हो जाते हैं।

क्रान्तिकारी युवक के दोनों हाथ इतने सजग हैं कि जरा-सा हिलते ही मौत के दूत बने तैयार।

युवक—आप लोग इसी तरह चुपचाप बाग के फाटक की ओर बढ़ें....मुझे बाहर जाना है....

रिवाल्वर की ठेस खाकर दोनों आगे बढ़ते हैं।

पीछे-पीछे वह निर्भय युवक चलता है, जिसने अपनी जान को मातृभूमि के सम्मान के हवाले कर दिया है।

बाग का फाटक आ जाता है।

बीसों सशस्त्र सिपाही वहाँ पहरे पर खड़े हैं।

युवक—सिपाहियों को दूर चले जाने का हुक्म दीजिये....

मिस्टर शर्मा की पसली से लगा हुआ युवक का रिवाल्वर जरा-सा और आगे सरकता है।

मि० शर्मा—(कांपता स्वर) तुम लोग उस तरफ चले जाओ और उसे खोजो....

मिस्टर शर्मा सिपाहियों को आज्ञा देते हैं। और वे आज्ञाकारी नौकर, अफसर का हुक्म पाकर वहाँ से तुरन्त हट जाते हैं।

युवक—अच्छा विदा सज्जनों! हो सका तो फिर मिलेंगे...

युवक बिजली-सा चमक कर कहीं लुप्त हो जाता है।

मिस्टर शर्मा और रामलाल के रिवाल्वर गरजते हैं मगर उसके पहले ही युवक की छाया ठिठुरते अन्धकार में लुप्त हो जाती है।

फायर का स्वर सुनकर सिपाही भी दौड़े आते हैं।

मिस्टर शर्मा हाँफते हुए खड़े हैं।

मि० शर्मा—(गरजते हुए) उधर दौड़ो....पूरी ताकत से। हाथ में आकर निकल न जाय....

फिर चारो तरफ भगदड़-सी मच जाती है।

मिस्टर शर्मा और रामलाल भी पूरी ताकत से उस ओर भागते हैं जिधर वह युवक दौड़कर लुप्त हुआ है।

● ●

दूर तक चली गयी चौड़ी, सुनसान सड़क, अगल-बगल लगे बिजली के बल्वों का प्रकाश ओस में भींग कर मनहूस-सा हो गया है।

शहर का बाहरी हिस्सा है। इधर मकान कुछ दूर-दूर पर हैं।

पुलिस सुपरिंटेंडेंट मिस्टर शर्मा की कोठी आसमान छूती हुई खड़ी है। उसी से सटा हुआ बगल में एक छोटा-सा घर भी है, कुछ इस तरह जैसे कोई ममतामयी माँ अपने छोटे बच्चे को बगल में दाब

कर खड़ी हो।

मिस्टर शर्मा के मकान की दूसरी मंजिल के छज्जे पर से एक धुंधली-सी छाया उतरती है और बगल वाले छोटे से मकान की छत पर कूद पड़ती है।

कोई आवाज नहीं होती। किसी ने देखा भी नहीं है।

छाया धीरे से छत का दरवाजा खोलती है और सतर्क गति से दबे पाँव सीढ़ी से नीचे उतरने लगती है।

मकान में अँधेरा है ही, निस्तब्धता भी कम नहीं है।

छाया नीचे पहुँच कर एक कमरे का दरवाजा खोलती है। अन्दर आकर स्विच दबाती है तो कमरे का छोटा-सा बल्व हँस पड़ता है प्रकाश बिखेरता हुआ।

वह धुंधली-सी छाया अब स्पष्ट आकृति बन जाती। सलोना सा गोरा चेहरा, बड़ी-बड़ी कजरारी आँखें, सोलह साल का शरीर कीमती साड़ी से लिपटा....ऐसा लगता है, जैसे उस सौन्दर्य के आगे बल्व की हँसी शाम का धुंधलका बन गई हो।

युवती एक नजर कमरे में घुमाती है।

कोई विशेष सामान नहीं है वहाँ। एक मेज और उस पर कुछ किताबें, दो-तीन कुर्सियाँ, बड़ा-सा आईना....बस !

युवती मेज के पास की एक कुर्सी पर बैठ जाती है, और एक पुस्तक उठाकर देखने लगती है। पुस्तक का नाम है 'क्रान्ति की ओर'

वह दो चार लाइनें पढ़ती है, फिर पुस्तक रख देती है। उठकर कमरे का निरीक्षण करने लगती है।

आलमारी खोलकर देखती है, उसमें पहनने के कपड़े हैं।

शीशे के सामने आ खड़ी होती है। देखने लगती है, अपने को, जैसे अपने यौवन को उसने पहले कभी देखा ही न हो। उसकी आँखें अपने ही सौन्दर्य पर रीझ जाती हैं।

फिर उसका ध्यान शीशे के तिरछे टँगने पर जाता है। अपने

आप ही कह उठती है—शीशा भी ठीक से नहीं टाँग सकते.... इतना बड़ा शीशा तिरछा होकर कितना बेढंगा हो गया है....

वह हाथ बढ़ाकर उसे ठीक से टाँगना चाहती है तो शीशा दीवाल से अलग होकर उसके हाथ में आ जाता है और उसके पीछे—

चौंक पड़ती है वह। शीशे के पीछे एक छोटी-सी आलमारी दीखती और उसमें रखे हुए हैं रिवाल्वर, तीन-चार-पांच।

गिनकर युवती का शरीर कांप-सा उठता है।

वह हाथ का शीशा धीरे से नीचे जमीन पर रख देती है और आलमारी के अन्दर गौर से देखने लगती है।

आलमारी के अन्दर पांच रिवाल्वर, चमकता हुआ काला रंग, भयावना आकार। काफी कारतूस। कुछ कागजात एक फाइल में रखे हुए और एक डायरी।

युवती धीरे से डायरी बाहर निकालती है। ऊपर ही सुस्पष्ट अक्षरों में नाम लिखा है—'लालचन्द्र बी० ए०'

डायरी खोलती है। नजरें दौड़ाकर और पढ़ने लगती है—

शहर पढ़ने आया हूँ, मगर गाँव का सुन्दर वातावरण यहाँ नहीं। आज माँ की चिट्ठी आई थी। लिखा था—लाल! तेरे बिना अकेला बुढ़ापा चल-फिर नहीं पाती। तू था, तो तेरे बहाने मैं भी खा लेती थी पका कर....तू नहीं है, तो रो-रो कर ही पेट भर लेती हूँ।....माँ भी कितनी पगली है। कैसे समझाऊँ उसे कि माँ की ममता से भी बढ़कर इस समय मेरे हृदय में देशभक्ति लहरें ले रही है ....

वह जल्दी-जल्दी कुछ पृष्ठ पलट देती है—

कालेज जाता हूँ, मगर पढ़ने में मन नहीं लगता। देश की राजनीतिक दशा भी आजकल बड़ी दुखद हो उठी है। गोरी सरकार पर विचार करता हूँ तो हृदय घृणा से भर जाता है। हृदय में क्रान्ति उठ खड़ी होती है। हाथ खून से होली खेलना

चाहते हैं, गोरों के लाल-लाल खून से। आजकल कालेज में भी गुलामी की मनोवृत्ति बढ़ानेवाली शिक्षा दी जाती है। कुछ समझ नहीं पाता कि क्या करूँ ?....

पुलिस सुपरिण्टेण्डेन्ट मिस्टर शर्मा की पुत्री रेखा मेरी सहपाठिनी है। बड़ी अच्छी लड़की है। उससे बातें करता हूँ तो बड़ा आराम मिलता है। उसमें अन्य लड़कियों की-सी उच्छृंखलता नहीं है, वह सौम्य-शान्त एवं सौन्दर्यमयी है। कोई भी उसकी ओर आकर्षित हो सकता है। मैंने उसके अन्दर एक अद्भुत शक्ति देखी है। काश, वह गोरी सरकार के अनुचर मिस्टर शर्मा की पुत्री न होती....

रेखा मुझे प्यार करती है। उसके प्यार में मादकता नहीं, स्निग्धता है। मुझे वह बड़ी प्रिय है। मेरे कष्टों का उसे बड़ा ध्यान है। आज कहती थी—मेरे बगल में मेरा एक छोटा-सा मकान खाली है। उसी में तुम चलकर रहो मुझे भी बड़ा सहारा रहेगा।....नारी तो पुरुष का सहारा चाहती ही है। मगर मुझ जैसा पुरुष रेखा को क्या सहारा दे सकता है? मैं रेखा से इनकार नहीं कर सकता, अतः अपनी स्वीकृति दे दी है....

वह डायरी के बहुत से पृष्ठ एक साथ पलट देती है—

....रेखा और मैंने साथ ही बी० ए० पास किया है। घर जाने की सोचता हूँ तो रेखा जाने नहीं देती। यों भी, मैं घर नहीं जा सकता। आजकल एक क्रान्तिकारी दल से मेरा सम्पर्क हो गया है। सरदार मुझे बहुत मानते हैं। उन्होंने भी मुझे यहीं रहने की सलाह दी है। इस दल के साथ रहने से मेरे हृदय की क्रांति को बड़ा सहारा मिलता है। जी-जान से मातृभूमि की सेवा में रत हूँ....मगर रेखा बड़ी शरारती लड़की है। कभी-कभी तो मैं उससे परेशान हो जाता हूँ। यदि वह जान जाय कि मैं ही वह क्रान्तिकारी हूँ, जिसके पीछे उसके पिता तथा कितने ही जासूस परेशान

हैं, तो जाने वह क्या सोचे। शायद वह अपने पिता से कहकर मुझे पकड़वा दे....सरदार कौन हैं, यह अब तक नहीं जान सका। वे बहुत बार कई भेष में मुझसे मिल चुके हैं परन्तु मुझे उनका परिचय नहीं मिल सका...पिछले हफ्ते दो दिन के लिए घर गया था। देखकर माँ रोने लगी। धीरज बँधाया तो बूढ़ी आँखें बादल बन चलीं। माँ का स्नेह भी बड़ा विचित्र होता है, परन्तु मैं तो जननी-जन्मभूमि की भक्ति में पागल हूँ आजकल....

पढ़ते-पढ़ते हाँफने लगती है वह। डायरी उस आलमारी में फेंककर दोनों हाथों से सिर का पिछला हिस्सा दबाने लगती है। फिर झटके से गर्दन सीधी करती है और मुँह से निकल पड़ता है—

उफ, लाल भैया....तुम क्या हो ? तुम्हारे इतने निकट होकर भी मैं नहीं जान पायी कि अपने अन्तर में तुम इतनी भीषण ज्वाला दबाये हो...

वह शीशा उठाकर उस आलमारी के सामने लगा देती है।

फिर कुर्सी पर आ बैठती है।

तभी बाहर की कुण्डी खटकती है, ताला खुलता है और दरवाजा खोलकर एक युवक दौड़ता-हाँफता कमरे में घुसता है। बिना इधर-उधर देखे वह दरवाजा भीतर से बन्द कर लेता है।

उसके लम्बे ओवरकोट पर गर्द पड़ी है।

हाथ में अब तक रिवाल्वर चमक रहा है।

युवक सन्तोष एवं छुटकारे की लम्बी साँस लेता है फिर अपने-आप ही कहता है—चलो बला टली....मगर कौन जाने यहाँ घुसते किसी ने देख.... तभी उसकी दृष्टि कुर्सी पर बैठी हुई उस युवती पर पड़ती है, जो एकटक उसकी ओर देखती हुई उसकी परेशानी पर गम्भीर हो रही है।

युवक चौंक पड़ता है। वह जल्दी से अपने हाथ का रिवाल्वर कोट की जेब में छिपा लेता है।

युवक—रेखा तुम ?....अच्छा ठहरो, मैं अभी आया....

तेजी से युवक बगल के कमरे में चला जाता है और दो ही मिनट बाद कमीज और पजामा पहने, बदन पर रैपर डाले आ पहुँचता है और सामने वाली कुर्सी पर हँसते हुये बैठ जाता है।

युवक—रेखा ! इतनी रात को यहाँ कैसे ?

रेखा—कितनी रात को ? लाल भैया ! हजार बार कह दिया कि तुम अपनी घड़ी ठीक रखा करो। अभी दस ही तो बजे हैं....

लाल—सिर्फ दस ! (कलाई घड़ी पर दृष्टि डालते हुये) ओह, हाँ ! दस ही तो हैं, लगता है जैसे रात ढल चली हो....मगर तुम यहाँ आई कैसे रेखा ! बाहर तो ताला बन्द था....

रेखा—ताला तो दूसरे के लिए है लाल भैया !....मैं तो अपनी छत से कूद कर तुम्हारे घर में घुसी हूँ....

लाल—आखिर क्यों ?

रेखा—क्या करती ?....पिताजी वर्दी से लैस होकर दौरे पर दौड़ गये शाम को ही, माताजी ने मुझे पैदा तो किया, मगर पाल नहीं सकीं कि ईश्वर का बुलावा आ गया, दाई भी सो गई.... अकेली थी, सो तबीयत न लगी। सोचा, चलकर तुम्हीं से कुछ बातें करूँ....मैं जानती थी कि तुम भीतर होगे भी तो परेशान होने के डर से दरवाजा नहीं खोलोगे, इसलिए जासूसी ढंग का ही सहारा लेना पड़ा...

लाल—क्यों नहीं, पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की बेटी क्या थोड़ी-सी जासूसी भी नहीं करेगी ?

तभी बाहर सड़क पर कुछ लोगों के दौड़ने की आवाज सुनाई पड़ती है। तत्पश्चात् लाल का दरवाजा जोरों से खड़कता है।

लाल के चेहरे पर केवल एक क्षण के लिए भय का पीलापन झलकता है, फिर वह दरवाजा खोलने को उठ खड़ा होता है।

रेखा—तुम बैठो....मैं दरवाजा खोलती हूँ लाल भैया....

वह झटपट एक किताब खोलकर हाथ में उठा लेती है और आकर दरवाजा खोल देती है। बाहर बीसों पुलिसमैन, सार्जेण्ट रामलाल तथा सुपरिण्टेडेण्ट मिस्टर शर्मा खड़े हैं।

मि० शर्मा—रेखा तुम यहाँ हो ?

रेखा—हाँ पिता जी !

मि० शर्मा—कब से ?

रेखा—बहुत देर से हूँ पिता जी !....दो घण्टों से....लाल भैया से 'टैगोर साहित्य' पर बहस चल रही थी....बात क्या है ?

मि० शर्मा—कुछ नहीं (कमरे के अन्दर आकर सतर्क दृष्टि से चारों तरफ देखते हुये) रेखा ! यहाँ कोई और तो नहीं आया था ?

रेखा—नहीं पिताजी ! केवल मैं और लाल भैया हैं....

लाल भी अपनी कुर्सी से उठकर उनके पास आ जाता है।

लाल—क्या बात है बाबू जी ?

मि० शर्मा—कुछ नहीं बेटा ! एक डाकू के पीछे पड़े हैं हम लोग। वह इधर ही कहीं भाग कर आया है। क्यों रामलाल ?

रामलाल—यस सर !....बाईगाड, इधर ही आया है। मैंने अपने चश्मे से देखा....

मि० शर्मा—खैर ! आज तो निराश होना पड़ा। कहाँ जायगा बच कर ?....चलो तुम लोग....रेखा ! मैं दो घण्टे बाद ही घर आ सकूंगा। तुम थोड़ी देर में चली जाना। वहाँ कोई न होगा....

रेखा—अच्छा पिताजी !

सब लोग चले जाते हैं। लाल कुर्सी पर आकर बैठ जाता है।

रेखा भी दरवाजा बन्द करके पास आकर बैठ जाती है।

रेखा—लाल भैया !

लाल—हूँ....

रेखा—तुम कुछ परेशान से हो ?....

लाल—नहीं तो ?

रेखा—नहीं तो कैसे....जरूर तुम परेशान हो। जाने भी दो, पुलिसवालों का काम बड़ा खराब होता है। अच्छा हुआ मैंने झूठ बोलकर उन्हें टाल दिया। अगर वे जान जाते कि तुम अभी ही कहीं से चले आ रहे हो तो व्यर्थ के सवाल पूछकर तुम्हें परेशान करते....है न लाल भैया !....

लाल—तुम बहुत चालाक होती जा रही हो आजकल....

रेखा—(मुस्करा कर लाल की ओर देखते हुए) चालाक तो नहीं, हां होशियार कह सकते हो....

लाल—रेखा ! अपनी मुस्कुराहट बन्द करो....

रेखा—क्यों ?

लाल—मुझे अच्छी नहीं लगती...

रेखा—तुम्हें तो अच्छा लगता है केवल वह बड़ा-सा मनहूस शीशा, जिसे सीधा टांगने का भी तरीका तुम्हें नहीं मालूम....एकदम टेढ़ा टाँग रखा था। देखो तो, मैंने सीधा टाँग दिया है....

लाल चौंक पड़ता है। चेहरे पर परेशानी स्पष्ट हो आती है।

लाल—तुमने उस शीशे को छुआ था ?

रेखा—(हँसते हुये) बिना छुए वह सीधा कैसे होता ?

लाल—रेखा ! तुम बड़ी शैतान हो। मेरी कोई भी चीज बिना मुझसे पूछे मत छुआ करो और मेरे घर में चोरी-चोरी घुसा भी मत करो....

रेखा—शैंतान तो तुम हो और चोर भी तो तुम्हीं हो। चोरी करके आ रहे थे, बचा दिया मैंने तो लगे मुझी को डांटने....

रेखा रूठ कर मुंह दूसरी ओर कर लेती है।

लाल—रूठ गई रेखा ?

रेखा—मैं नहीं बोलती तुमसे....

लाल—बोल तो रही है....

रेखा—अब नहीं बोलूंगी....

लाल—(रेखा की ठुड्ढी पकड़ कर) रूठो मत रेखा ! तुम मेरे जीवन की ज्वलन्त रेखा हो। तुम्हारे बिना मेरे अन्तर का सारा स्नेह सूखकर मेरा हृदय मरुस्थल बन जायगा.... बोलो रेखा ! रूठी नहीं हो नऽ ?

रेखा—तुम बड़े पाजी हो लाल भैया ! तुम मुझे डाँट क्यों देते हो ? मैं तुम्हारे घर में आऊँगी, सब कुछ उलट-पलट करूँगी, देखूं, मुझे कौन रोकता है ?

लाल—कोई नहीं रोकेगा तुम्हें....अब मैं कुछ नहीं कहूँगा....

रेखा—(हँसते हुये) हाँ !.... तो 'टैगोर साहित्य' के विषय में तुम्हारा क्या विचार है लाल भैया !

लाल—(गंभीर स्वर) छोड़ो उस बात को....साहित्य की बात मैं क्या जानूं ? अच्छा बहाना किया तुमने बाबूजी से.... किसी दूसरी चीज के विषय में बातें करो....

रेखा—एक चीज के विषय में पूछूं ?

लाल—पूछो !

रेखा—वह तुम्हारे हाथ में क्या था ?

लाल—कब की बात कहती हो ?

रेखा—जब तुम घबड़ाये हुए ताला खोल कर अन्दर आये थे....

रेखा के होठों पर तिरती मुस्कान की रेखा और गहरी हो उठती है।

सुनकर लाल का चेहरा सफेद पड़ जाता है।

लाल—मेरे हाथ में तो कोई चीज नहीं थी रेखा !....

रेखा—थी कैसे नहीं लाल भैया ! मुझसे उड़ते हो ?.... एस० पी० की बेटी रिवाल्वर भी नहीं पहचानेगी क्या....

लाल—रेखा ! वह तो खिलवाड़ था....

रेखा—तुम्हारे लिये वह खिलवाड़ हो सकता है लाल

भैया ! मगर कानून उसे खतरनाक समझता है। पिताजी की नजर अगर उस पर पड़ जाय तो वे मेरा ख्याल न करके तुमसे उल्टी चक्की पिसवा दें जेल में डालकर....समझे....

लाल — समझ गया, मैं उसे फेंक दूंगा....

रेखा मुस्कराती है, यह समझकर कि यह भयानक युवक अब तक उसे भोली बालिका ही समझता आ रहा है।

रेखा—लाल भैया ! मुझे भी रिवाल्वर चलाना सिखाओगे ?

लाल—क्या बकती है ?

रेखा—बकती हूँ....पिताजी से कहती हूँ तो वे हँसकर टाल देते हैं। तुमसे कहती हूँ तो तुम्हारा पारा ही चढ़ जाता है। क्या मैं रिवाल्वर भी नहीं चला सकती ?

लाल—जरूरत ही क्या है ?

रेखा—नारी को तुम इतनी कमजोर क्यों समझते हो ? मुझे सिखा दो तो अवसर आने पर रेखा का भी निशाना देख लेना कभी।

लाल—रेखा ! इस बात को बन्द करो....

रेखा—क्यों ?

लाल—मैं कहता जो हूँ....

रेखा—(खीझा स्वर) तुम क्यों कहते हो जी ? मुझे तुम निरी बच्ची ही मत समझो लाल भैया ! रेखा का दिल भी लाल के दिल की तरह फौलाद का बना है। लाल और रेखा दो नहीं, एक हैं। दोनों के दिलों में भावना, विचार तथा धारा एक है। समझो, चाहे न समझो। कभी समझ में आये तो आश्चर्य मत करना....

लाल—कैसी बातें कर रही है तू आज ?

रेखा की बातें सुनकर लाल हैरान-सा हो जाता है।

रेखा—कैसी भी तो नहीं लाल भैया ! नारी को अशक्त और अबला समझने वाले पुरुष से एक नारी अपनी दृढ़ता का इजहार

कर रही है, बस ! मैं चलती हूँ अब फिर कभी बातें होंगी....

लाल—घर जाओगी ?

रेखा—हाँ उस घर में, जहाँ गोरी सरकार की सम्पदा हर महीने वेतन के रूप में आती है। सच कहती हूँ लाल भैया ! उस घर का खाना मुझे जहर-सा लगता है। ऐसा जहर, जो जान लेने के बदले जीवन देता है। मजबूरी है। आज की हर नारी मजबूर है पुरुषों के हाथों। पिताजी का मोह है, नहीं तो सब मोह-माया छोड़कर तुम्हारा साथ देती। कभी-कभी अन्तर की क्रान्ति इतना विकराल रूप धारण कर लेती है कि पिताजी भी मेरी दृष्टि में निशाचर जैसे दिखाई पड़ने लगते हैं....

लाल—तू पागल हो गई है....

रेखा—(होठों पर म्लान हँसी) जरूर ! जो रिवाल्वर लेकर बाहर घूमने जाता है, जिसके पीछे पुलिस दौड़ती है हाथ में बन्दूक लेकर और जो इतना बड़ा शीशा भी सीधा टाँग नहीं सकता, उसके लिये एक नारी पागल से बढ़कर और हो ही क्या सकती है ?....

लाल—रे ा !

लाल का आश्चर्य उत्तरोत्तर बढ़ता ही जा रहा है।

रेखा—(उठकर खड़ी होती हुई) चलती हूँ लाल भैया !

लाल—(रेखा के सामने खड़े होते हुये) रेखा !....

रेखा—(दृढ़ नेत्रों से लाल की आँखों में देखते हुए) कहो क्या कहना चाहते हो ?

लाल—तुम पहेली हो रही हो आज ?

रेखा—तुम सशक्त हो, पुरुष हो और सशक्त पुरुष छोटी-मोटी बातों को पहेली समझ कर ही उपेक्षित कर देता है.... तुमने अपने जीवन में केवल दो ही नारियों की छाया देखी है। अपनी माँ की गोद में तुम पले परन्तु उसके अन्तर को समझने की चेष्टा नहीं की। मेरे साथ तुम पढ़े और मुझे पहेली समझ

कर दूर-दूर होना चाहते हो। तो तुम नारी का विशाल हृदय नारी की प्रेरक शक्ति देख ही कैसे सकते हो ?

लाल—मैंने सब कुछ देखा है रेखा ! मगर तुम्हारी जैसी लड़की नहीं देखा कभी....

रेखा—देखा होगा मगर समझ नहीं सके होगे। कभी हँसना, कभी रोना, कभी रोष, कभी रूठना, कभी सहारा, कभी गाड़ी के आगे काठ, कभी ईंट का जवाब पत्थर....नारी की हर हरकत तुम्हारे लिये पहेली ही तो है। क्या करोगे समझ कर ? जो इन्सान आँखें बन्द करके चलता है, वह कुछ समझ भी तो नहीं पाता....

लाल—(झल्लाहट से भरा स्वर) रेखा ! तुम चली जाओ.... अभी, इसी वक्त....

रेखा—(स्वर में थरथराहट) ऊब गये अपनी जीवन-रेखा से ? तभी तो कहती हूँ, तुम लापरवाह हो। मुझे जाने को कहकर तुम एकान्त चाहते हो। मगर एकान्त तुम्हें कुछ भी सहारा नहीं देगा। मेरे जाने पर तुम कुछ भी नहीं समझ सकोगे। नारी को पुरुष की जरूरत होती है तो पुरुष के लिये भी नारी का साथ जरूरी है। अकेला पुरुष अधूरा है। वह कुछ भी नहीं कर सकता। पुरुष शक्ति है तो नारी प्रेरणा—बिना प्रेरणा के शक्ति का मार्ग अन्धकार-पूर्ण है....लाल अग्नि है तो रेखा है उसकी ज्वाला, इसे न भूलो लाल भैया !....जाती हूँ। तुम जरा अपने उस बड़े-से शीशे का ख्याल रखना। कोई दूसरा उसे सीधा न करने पाये, नहीं तो पोल खुल जायगी....

रेखा दरवाजे की ओर बढ़ती है।

लाल उसका रास्ता रोक लेता है।

लाल—रेखा ! रुको अभी...

रेखा—मैं भाग नहीं रही हूँ, कहो....

लाल—तुमने उस शीशे को देख लिया....मेरा मतलब उसके पीछे....यानी तुमने सब कुछ देख लिया रेखा ?

रेखा—(स्थिर वाणी) मैंने केवल लाल को देखा है....और लाल को देख चुकने पर उसकी कोई भी चीज मेरे लिये अनदेखी नहीं रही....

लाल—उफ् रेखा, तुम मुझे क्या समझती होगी ?

रेखा—वही, जो पहले समझती आ रही थी....

लाल—अपने पिताजी से कह दोगी ?

रेखा—(तीव्र स्वर) लाल भैया ! रेखा के लिये पिता और भाई का दर्जा बराबर है। वह दो में से किसी को भी खोना नहीं चाहती, यही तो नारी के मोह की विवशता है। कभी समझोगे भी इसे या नहीं....

रेखा दरवाजा खोलकर एकदम बाहर आ जाती है।

उस समय चन्द्रमा की रोशनी से बाहर का अन्धकार कुछ-कुछ उजला हो चला है। आदमी सो रहे हैं, कुत्ते जाग रहे हैं। सड़क की छाती पर पेड़ों की परछाईं भूत बनकर लोट रही है। हवा बर्फ का तीर बनकर शरीर में चुभती जा रही है जैसे।

रेखा ने देखा, बाहर के धुंधले अन्धकार में कोई भद्दी-सी छाया लाल के दरवाजे पर खड़ी है। वह डरकर पीछे भी नहीं लौटती।

रेखा—(तेज स्वर) कौन है ?....वहाँ कौन खड़ा है ?....

रेखा उसके नजदीक आकर देखती है कि वह एक भिखारी है।

भिखारी—(करुण स्वर) कुछ मिल जाय बेटी !....

रेखा—(बिगड़कर) क्या मिल जाय पत्थर ? ऐसी रात में तो पत्थर भी नहीं दीखेंगे। चले जाओ....

भिखारी—भिखारी को भीख चाहिये बेटी !....पत्थर से पेट थोड़े ही भरेगा....

रेखा—तुम भिखारी हो, इतनी रात में भला कौन भीख

देगा तुम्हें ? पूरे अवसरवादी हो। आये थे चोरी करने, कुछ हाथ नहीं लगा तो भीख ही सही....

रेखा की आवाज सुनकर लाल भी बाहर निकल आता है।

लाल—क्या है रेखा !....

रेखा—देखो न लाल भैया ! यह भीख मांग रहा हैं....इतना जाड़ा पड़ रहा है कि जवान भी बूढ़ा बन जाय और यह बूढ़ा होकर भी भीख मांगने निकला है...जाओ भाई, अपना रास्ता देखो। दिखाई न देता हो तो चलो मैं ही कुछ दूर तक पहुँचा दूं....

लाल ध्यान पूर्वक भिखारी को देखने लगता है।

तभी भिखारी दाहिने हाथ की ऊँगली मस्तक पर रखकर खुजलाता है। लाल चौंककर एक कदम पीछे हट जाता है।

लाल—रेखा ! तुम घर जाओ....मैं इसे कुछ देकर अभी बिदा करता हूँ....

रेखा—अच्छी बात है, मैं चली, तुम इस भिखारी की पूजा करो....मैं बाहर न निकली होती तो यह तुम्हारी दीवार में सेंध लगा चुका होता....

कहती हुई रेखा चली जाती है।

लाल सतर्क दृष्टि से अपने चारों ओर देखता है।

लाल—अन्दर आइये....

भिखारी और लाल चुपचाप अन्दर आते हैं। लाल दरवाजा भीतर से बन्द कर लेता है, फिर दोनों कुर्सी पर आ बैठते हैं।

लाल—(चकित वाणी) आप....और इस वेश में ?

भिखारी—हाँ ! काम बहुत जरूरी था....समय बहुत कम है। मुझे अभी लौट जाना है....यह लड़की कौन थी ? जबान की बड़ी तेज मालूम होती है....

लाल—हाँ ! रेखा थी, मिस्टर शर्मा की बेटी....

भिखारी—(कड़ी आवाज) लाल ! तुम्हारे पास यह लड़की

क्यों आई थी ?

लाल—(नम्र स्वर) सरदार ! आप कुछ दूसरा ख्याल न करें। रेखा मेरी प्रेरणा है। रेखा से अलग मेरा कोई अस्तित्व नहीं...

भिखारी—मानता हूँ....मगर क्रान्तिकारियों के लिये नारी की प्रेरणा गतिरोध उत्पन्न करनेवाली होती है। फिर यह तो दुश्मन की बेटी है, इसका क्या भरोसा ?

लाल—जिस दिन रेखा पर से मेरा विश्वास उठ जायगा उस दिन सारी दुनिया ही मेरे लिये विश्वासहीन हो जायगी सरदार !...मैं अपने चरित्र पर विश्वास करता हूँ। सात्विक प्रेम चरित्र को और भी उन्नत करता है....

भिखारी—बस करो लाल ! यहाँ मैं प्रेम की व्याख्या सुनने नहीं आया हूँ। तुम मेरी सूरत नहीं पहचानते मगर मेरा उग्र स्वभाव जानते हो। अगर किसी भी दिन मुझे मालूम हुआ कि तुम्हारा हृदय क्रान्ति का चिन्तन छोड़ कर प्रेम का चिन्तन करने लगा है, तो मेरा रिवाल्वर तुम्हारी जान लेने में जरा भी नहीं हिचकेगा। मैं तुम्हें सावधान करता हूँ, क्योंकि तुम मंडल के एक साहसी कार्यकर्त्ता हो। मैं तुमसे हाथ धोना नहीं चाहता....

लाल—आप विश्वास रखें सरदार !....

भिखारी—मुझे विश्वास है....हाँ ! आज तो तुम पकड़े जाने से बच गये। पुलिस को कैसे पता लग गया, मालूम नहीं। मगर भविष्य में सावधान रहना। ऐसा न हो कि जरा-सी असावधानी से तुम उन कुत्तों के पंजों में आ जाओ....

लाल—मैं सावधान रहूँगा सरदार ! आज भी मैं कम सावधान नहीं था....आप विश्वास रखें, कुत्ते अगर पायेंगे भी तो केवल मेरी लाश ! जिन्दा लाल उनके पंजे से हमेशा बाहर रहेगा।

भिखारी—कल चन्द्रनाथ के मुकदमे का फैसला है....चन्द्रनाथ भी बड़ा ही सावधान युवक था मगर पुलिस के हाथों पड़ ही गया।

देखो, कल क्या होता है ?....

लाल—उसके विरुद्ध सबूत बहुत तगड़ा है सरदार ! उसे फांसी तो अवश्य ही होगी....

भिखारी—लाल ! अगर उसे फांसी की सजा हुई तो जज के लिये भी तुम अपना रिवाल्वर तैयार रखो । भारत को ऐसे न्यायकर्त्ताओं की आवश्यकता नहीं, जो गोरी सरकार की हँसी के पीछे अपने देश के आँसू भूल जाँय । तुम मेरा मलतब समझ गये न ? कल कचहरी में तुम उपस्थित रहोगे....

लाल—बहुत अच्छा....

भिखारी—चन्द्रनाथ को कल फांसी की सजा अगर हुई तो रात को जज साहब भी तुम्हारे हाथों आसमान पर पहुँच जाँय, इसका ख्याल रखना....ठीक है न लाल !....

लाल—जी हां ! मैं तैयार रहूँगा....

भिखारी—शाबास ! तो मैं चलता हूँ....

दोनों उठ खड़े होते हैं ।

भिखारी—एक बात है लाल !....

लाल—कहिये....

भिखारी—क्या तुमको चन्द्रनाथ पर विश्वास है ?

लाल—जिस पर आपका विश्वास हो, उस पर मुझे अविश्वास करने का कोई कारण नहीं दीखता सरदार !

भिखारी—ठीक है.... अभी तक तो उसने अपनी जबान बन्द ही रखी है, मगर अपनी जान सभी को प्यारी होती है लाल ! कहीं फांसी की सजा सुनकर उसकी मजबूती गिर न पड़े....

लाल—इसे तो आप ही समझ सकते हैं....मैं क्या बताऊं ?

भिखारी—खैर, देखा जायगा....तुम मेरे दाहिने हाथ हो लाल ! इसे कभी न भूलो....

लाल—मैं इसे हमेशा रटता रहता हूं सरदार ! और मैं इस

प्रयत्न में हूँ कि केवल आपका दाहिना हाथ ही न होकर आपका दिल, दिमाग सब कुछ हो जाऊँ....

भिखारी—(धीरे से हँसकर) तुम बड़े शैतान हो...

लाल भिखारी के पैर छूता है।

भिखारी बाहर आकर तेजी से एक ओर को चला जाता है। लाल दरवाजा बन्द कर चारपाई पर पड़ रहता है। मंडल के सरदार को उसने भिखारी-वेश में कभी नहीं देखा था। वह सोचता रहता है, कौन हैं सरदार, क्या करते हैं, कहाँ रहते हैं तभी जागृति का फाटक बन्द कर उसकी पलकों में नींद आ बैठती है।

● ●

लाल के मकान से निकल कर रेखा अपने दरवाजे पर आ खड़ी होती है। बगल में ही उसका भव्य भवन है। दरवाजा बन्द है।

दरवाजे पर लगे बल्ब से सड़क पर पर्याप्त प्रकाश है।

रेखा—(पुकारती हुई) दाई ! ओ दाई !!

दाई उस बूढ़ी औरत का नाम है, जो रेखा के घर में अपनी जवानी से ही नौकरी कर रही है। रेखा की माँ के मर जाने पर उसी ने अपने दुग्ध से उसे जीवन दिया था।

रेखा—(चिल्लाती हुई) दाई !...मर गई क्या ?

तभी बड़बड़ाती हुई दाई दरवाजा खोलती है।

दाई—तुझे पाल-पोश कर बड़ी कर दिया, अब केवल मरना ही तो रह गया है मुझे....जिस दिन मरी नहीं कि तेरी आँखों में नदी न आ जाय तो कहना....

रेखा—(अन्दर आकर) पिताजी आये ?

दाई—उनकी भी पिस्तौल कहीं गरज रही होगी....अभी क्यों लौटने लगे....यह पुलिस की नौकरी मुझे जरा भी पसन्द नहीं। न तन को आराम, न मन को चैन। इन्सान क्या हुआ, गली का कुत्ता बन गया, जरा से पेट के लिये दरवाजे-दरवाजे सूँघना....

राम-राम ! यह नौकरी क्या है मेरी मौत ! बाप-बेटी के चलते दिन भर हाय-हाय करूँ और रात भर जागूँ ....

दाई ने रेखा और उसके पिता के साथ बहुत उपकार किये हैं। इसी कारण आज वह नौकरानी नहीं, घर की बड़ी-बूढ़ी भी है।

रेखा—दाई ! मुझे खाना दे दो....नींद आ रही है....

दाई—कहाँ थी इतनी देर तक ?....उसी लाल के घर न ? कल आवे वह लाल का बच्चा, तो उसे पीला करके छोड़ूँ, तो कहना....हाँ नहीं तो....

तभी दरवाजे पर से किसी की आवाज सुनाई पड़ती है—मैं आ गया हूँ दाई ! क्या बात है ?

दाई—अरे तुम ?....लाल बेटा ! आओ-आओ....ओह, आप ?

दरवाजे पर मिस्टर शर्मा हैं, लाल नहीं।

मि० शर्मा—क्या बात है रेखा ?

रेखा—यह दाई रोज रात में मर जाती है पिताजी ! दरवाजा जल्दी नहीं खोलती....

दाई—और तू जीती रहती है तो उस लाल-पीले के घर क्यों चली जाती है ? देखिये न, अभी को परेड करके आ रही है। फूल-सी देह, न समय पर खाना, न सोना....देख लेना, एक दिन बीमार बनकर पड़ रहेगी तो दाई याद आयेगी इसे....

मि० शर्मा—अच्छा, जाने भी दो....चलो, खाना लाओ....

दाई खाना सजाती है। बाप-बेटी दोनों खाने लगते हैं।

रेखा—पिताजी !....

मि० शर्मा—बोलो....

रेखा—आप यह नौकरी छोड़ दीजिये पिताजी !

मि० शर्मा—क्यों ?....बात क्या है ?

रेखा—लोग पुलिसवालों को बुरा आदमी समझते हैं....

मि० शर्मा—(गंभीर स्वर) समझा करें....पुलिस ही तो जनता

की रक्षक है, नहीं तो उसका सांस लेना भी मुश्किल हो जाय.... इन्सान पर अगर कानून की बन्दिश न हो तो हर आदमी मुजरिम बन जाय रेखा !

रेखा—सरकार के कानून आपको पसन्द आते हैं पिताजी ?

मि० शर्मा—क्यों नहीं ! और तुझे ?....

रेखा—मैं तो कानून को शासक का जुल्म समझती हूँ....

मि० शर्मा—रेखा ! मैं सरकारी आदमी हूँ और हर सरकारी नौकर अपनी नमकहलाली का पाबन्द होता है। मेरे कानों में फिर ऐसी बातें न जांय....

रेखा—आप सरकारी आदमी भी हैं और मेरे पिता भी। और हर बेटी पिता के सामने अपने विचारों को प्रकट करने के लिये आजाद है....आजादी किसे प्यारी नहीं लगती पिताजी ! अपना देश स्वतन्त्र होता तो कितना अच्छा था....

मि० शर्मा०—क्या अच्छा था ?

रेखा—तब हर आदमी अपने देश और शासन के प्रति अपनी जिम्मेदारी समझता, जुर्म कम होते और आपको भी कम काम करना पड़ता। पराधीन देश में पढ़ने-लिखने तथा बोलने तक की मुमानियत है....ऐसा क्यों है पिताजी ?....

मि० शर्मा—रेखा ! मैं आज थका हूँ। बोलने का जी नहीं चाहता। अब तुम चुपचाप खाओ....

रेखा—थके तो आप रोज ही रहते हैं पिताजी !

दाई—(मिस्टर शर्मा से) इसे बोलने दीजिये....आप चुप रहियेगा तो यह भी चुप हो जायेगी। इसके साथ बोलते चलियेगा तो इसके ग्रामोफोन की चाभी भरती जायगी और रेकार्ड की तरह बजती चलेगी यह....

रेखा—तुम चुप रहो दाई ! मैं तुमसे तो बोलती नहीं....जाओ, अब हम लोग कुछ नहीं लेंगे....

तभी टेलीफोन की घंटी बज उठती है।

मिस्टर शर्मा तेजी से खाना छोड़कर उठ जाते हैं।

वे मुँह-हाथ धोकर रिसीवर उठा लेते हैं—

हलो....हाँ! शर्मा स्पीकिंग....क्या ?....आपके पास ?.... आश्चर्य है....तब तो बड़ा बुरा हुआ....डर की कोई बात नहीं.... हाँ! अभी तो मैं खाना खा रहा था....मेरी नींद में कोई बाधा नहीं पहुँचेगी....हाँ! आप अभी आ सकते हैं....रामलाल वहाँ है ? ठीक है, उसी के साथ चले आयें....

मिस्टर शर्मा रिसीवर रख देते हैं।

उनके मस्तक पर चिन्ता की रेखायें उभर आती हैं।

रेखा—कौन था पिताजी ?

मि० शर्मा—सेशन्स-जज मिस्टर सक्सेना थे....

रेखा—क्या कह रहे थे ?....

मि० शर्मा—कुछ नहीं....तुम जाकर सो रहो....सरकारी बातें सभी से नहीं बताई जातीं....

मिस्टर शर्मा अपने कमरे में चले जाते हैं।

थोड़ी ही देर बाद दरवाजे पर एक कार आकर रुकती है।

सेशन्स-जज और सार्जन्ट रामलाल भीतर आते हैं।

मि० शर्मा—आइये !

दोनों कोच पर बैठते हैं। जज साहब बहुत परेशान हैं।

मि० शर्मा—तुम जज साहब के पास कैसे पहुँच गये रामलाल ?

रामलाल—पूछिये मत सर ! जासूसों का काम तो बाईगाड, बस यही है कि कुत्तों की तरह हर जगह की मिट्टी सूँघा करें.... जज साहब के पास पहुँचा तो ऐसी बुरी खबर सुनने को मिली कि अब तक मेरा रिवाल्वर अप एण्ड डाउन कर रहा है....

मि० शर्मा—(जज साहब की तरफ आंखो से इशारा करते हुये रामलाल से पूछते हैं) आप बहुत डर गये हैं क्या ?

रामलाल—बाईगाड, हजूर ! डरने की बात ही है। मौत की खबर सुनकर बहादुर से बहादुर आदमी की भी धोती ढीली हो जाती है। ऐसा लगता है हजूर कि गले में लगी हुई यह टाई अपने आप गला कसती जा रही हो....

जज—(गम्भीर स्वर) डरने की तो कोई बात नहीं, चिन्ता जरूर हो गई है। क्रान्तिकारियों के गिरोह ने तो सरकार की नाक में दमकर रखा है....

मि० शर्मा—वह धमकी का पत्र आपको कब मिला ?

जज—ज्योंही मिला, मैंने पढ़कर आपको फोन किया.... अपनी जान का डर तो सभी को होता है। फिर मैं तो सरकारी अफसर हूँ। मेरी रक्षा का भार आपको लेना ही पड़ेगा....

मि० शर्मा—(सान्त्वना देते हुये) आप निश्चिन्त रहिये.... मैं आपकी हिफाजत के लिये कुछ उठा नहीं रखूंगा....

रामलाल—बाईगाड, हजूर ! जज साहब की हिफाजत होनी ही चाहिये। जान है तो जहान है, जज साहब हैं तो कानून भी सलामत है....

मि० शर्मा—आप वह पत्र अपने साथ लाये हैं ?

जज—जी हां !

जज एक छोटा-सा कागज उनके सामने रख देते हैं।

मिस्टर शर्मा पत्र लेकर पढ़ने लगते हैं।

छोटा-सा पतला कागज टाइप किये हुए सुस्पष्ट अक्षर—

जज मिस्टर सक्सेना को सावधान किया जाता है कि अगर उन्होंने कल चन्द्रनाथ को फांसी की सजा दी तो रात तक उन्हें भी मौत की तैयारी कर लेनी पड़ेगी।

जज—देख लिया आपने ?

मि० शर्मा—जी हाँ !....

रामलाल—और मैं तो बाईगाड, पहले ही देख चुका हूँ....

छोटा-सा कागज क्या है पूरी आफत है सर ! मेरा तो माइण्ड डिस्टर्ब हो गया है....

जज—अब तक इन बदमाशों ने जो धमकी दी, उनमें से एक भी झूठी नहीं निकली। ये शैतान अपना काम कर ही गुजरे और सरकार की सारी ताकत फेल होकर रह गई....

मि० शर्मा—हम लोग तो पूरी कोशिश करते ही हैं जज साहब !

रामलाल—कोशिश भी ऐसी कि बाईगाड, पैर का पसीना नाक से बहने लगता है....

जज—कहीं आपकी कोशिश नाकामयाब रही तो मुझे जान से ही हाथ धोना पड़ेगा। आपका एक्सपेरिमेंट होगा और मैं तो मिट ही जाऊँगा। इससे अच्छा तो यह है कि मैं अपना फैसला ही बदल दूँ....

रामलाल—आप सोच लीजिये बाईगाड, अण्डर कंट्रोल है....

जज—मगर फैसला भी अब बदला नहीं जा सकता....लोग कहेंगे डर कर हिम्मत हार गये....

मि० शर्मा—आप धीरज रखिये....मैं अभी फोन करके आपके बँगले पर और आपके साथ हथियारबन्द पुलिस का प्रबन्ध किये देता । कोर्ट में भी कल आपके चारों ओर पुलिस....आप विश्वास रखें, कोई भी संदिग्ध आदमी आपके पास तक नहीं आ सकेगा। कल रात भर मैं खुद आपके बँगले पर रहूँगा....

जज—धन्यवाद !....

मिस्टर शर्मा फोन करने दुसरे कमरे में चले जाते हैं। रामलाल वही पहले वाली नोट-बुक अपनी जेब से निकालता है और गौर से उसमें न जाने क्या देखने लगता है। रह-रह कर वह चुपके-चुपके जज की ओर भी देख लेता है। जज साहब उल्टी-सीधी साँसें लेते हुए कुर्सी पर बैठे हैं। ऊपर से वे चाहे जितने भी गम्भीर बने हों, उनका अन्तर भय से काँप रहा है। कमरे की हर चीज उन्हें

रिवाल्वर-सी ही दिखाई दे रही है। उनका मस्तिष्क धीरे-धीरे असीम भय से विकृत होता जा रहा है। उस कमरे में अब बैठ पाना उनके लिये असम्भव हो गया है।

वे मिस्टर शर्मा के पास जाने के लिए उठने लगते हैं कि किसी की तेज आवाज उनके कानों में पड़ती है—खबरदार! जरा भी बदन हिला या आवाज निकली तो ठीक नहीं होगा....

आवाज सुनकर ही रामलाल की कुर्सी उलट जाती है। उठकर वह अपनी नोट-बुक जेब में रख काँपने लगता है। जज साहब भी मुर्दा जैसे हो जाते हैं। चिल्लाना चाहते हैं मगर जैसे जबान तालू से जा सटी हो। भय से उनके अंग-अंग निश्चल हो गये हैं। वे न बैठ सकते हैं, न उठ ही सकते हैं। आधा उठे, आधा झुके हुए बेचारे हाथ चुपचाप ऊपर कर दिये हैं। यही हाल रामलाल का भी है। उसके भी हाथ ऊपर तने हैं।

तभी कमरे में रेखा दाखिल होती है।

रेखा—अरे! यह क्या?....

रेखा जज साहब के सामने आ जाती है मगर वे वैसे ही आधा उठे आधा बैठे रहते हैं, हाथ ऊपर की ओर किये।

रेखा—(हँसती हुई) चाचाजी! यह आप कौन-सी कसरत कर रहे हैं?

रामलाल भी भयभीत आँखों से इधर-उधर देखता, आधा उठा और आधा बैठा हाथ ऊपर किये है।

रामलाल—बाईगॉड, यह कसरत नहीं मिस रेखा! हम लोग हैड्स-अप किये हैं....तुम भी जल्दी छिप जाओ। कोई बदमाश आ गया है अन्दर...

तभी मिस्टर शर्मा टेलीफोन करके वापस लौटते हैं।

मि० शर्मा—क्या बात है रेखा!....अरे, यह आप क्या कर रहे हैं जज साहब?....और तुम्हें क्या हो गया है रामलाल?....

रामलाल—बड़ी डेंजरस बीमारी हो गई है सर ! कोई तड़प कर बोला—'खबरदार !' तमाशे हमारी यह कण्डीशन है....खबरदार की ऐसी-तैसी !....आधा अप और आधा डाउन किये-किये कम्बख्त टाँगें भी पस्त हो गईं....

कहकर धप्प से बैठ जाता है वह।

जज साहब भी आश्वस्त हो सोफे पर बैठकर हाँफने लगते हैं।

थोड़ी देर बाद—

जज—किधर गया ?

मि० शर्मा—कौन ?

जज—वही मिस्टर शर्मा ! वही !....कातिल....मुझसे बोला, खबरदार ! जरा भी बदन न हिले....

रेखा—(हँस कर) चाचाजी ! वह तो मैं बोली थी। दाई की बिल्ली को मैं उधर बाँध आई हूँ। शैतान रात भर दौड़ लगाकर चूहे पकड़ा करती है....

रामलाल—बाइगॉड, मिस रेखा, उधर तुमने बिल्ली को डाँटा इधर हमारी तो नानी मर गयी....

मिस्टर शर्मा हँसने लगते हैं।

जज साहब की जान में जान आती है।

● ●

कोर्ट का बाहरी हिस्सा दिखाई पड़ता है। सवेरे के ग्यारह बजे हैं। वातावरण में विचित्र-सा आतंक छाया हुआ है। एक ओर पाँच-सात वकील खड़े गुपचुप-चर्चा में व्यस्त दीख रहे हैं।

आज कोर्ट में बड़ी भीड़ है। जितनी संख्या दर्शकों की है, उससे कुछ ही कम सशस्त्र पुलिस की है। जजी कचहरी को पुलिस दल ने चारों ओर से घेर रखा है।

सफेदपोश जासूसों की संख्या भी कम नहीं दीख पड़ती। सभी सतर्क हैं। जनता की भीड़ पुलिस की भीड़ को

देखकर भेड़ बनी जा रही है। कचहरी के आस-पास सभी मँडरा रहे हैं परन्तु भीतर जाने का कोई साहस नहीं कर पा रहा है।

न्यायालय के दरवाजे पर स्वयं मिस्टर शर्मा खड़े हैं और जो कुछ इने-गिने लोग भीतर जाने का साहस कर रहे हैं, उनकी तलाशी ले रहे हैं। किसी व्यक्ति पर थोड़ी भी शंका होने पर ही उसे पूछताछ के लिये जासूसों के हवाले कर दिया जाता है।

धोती-कुर्ते में एक सुन्दर युवक मिस्टर शर्मा के सामने आ खड़ा होता है। मिस्टर शर्मा उसे देखते हैं।

मि० शर्मा—लाल बेटा! तुम भी मुकदमा देखने आये हो?

लाल—हाँ, बाबूजी! बैठा था सो इधर ही चला आया....

मिस्टर शर्मा लाल की जेब देखते हैं, उसकी कमर टटोल इत्मीनान कर लेने पर अन्दर जाने की आज्ञा देते हैं।

भीतर आकर लाल दर्शकों के मध्य में बैठ जाता है।

अपराधी चन्द्रनाथ कटघरे में खड़ा है। पीछे दो बन्दूकधारी हैं। चन्द्रनाथ के हाथ में हथकड़ी और पैरों में बेड़ी पड़ी है। देश की आजादी का स्वप्न देखनेवाला, कानून के शिकंजे में पड़कर आज स्वयं पराधीन बन बैठा है।

चन्द्रनाथ लाल को देखता है और लाल चन्द्रनाथ को। दोनों एक दूसरे को कुछ देर तक देखते रहते हैं। चन्द्रनाथ की आँखों में उपेक्षा एवं घृणा का भाव स्पष्ट है। जैसे उसके अन्तर में कोई तीव्र तूफान उठ रहा हो, जैसे उसकी आँखें कह रही हों—'मेरी मौत का तमाशा देखने आये हो?....मंडल ने मेरे लिये क्या किया? देश को आजाद देखने के पहले ही मैं मरना नहीं चाहता....अगर मुझे फांसी हुई तो याद रखो, तुममें से कोई भी नहीं बचेगा....मैं सब बता दूँगा....सब कुछ कह दूँगा....'

लाल को ऐसा लगता है, जैसे चन्द्रनाथ का भीषण अट्टहास उसके कानों में गूँज रहा हो। वह अपनी आँखें दूसरी ओर फेर लेता है।

फिर एक गहरी साँस लेकर चुपचाप बैठा रहता है।

जज साहब अभी नहीं आये हैं। न्यायालय में पूर्ण निस्तब्धता है। चन्द्रनाथ आज कुछ चंचल नजर आ रहा है। कोर्ट के बाहर विचित्र तरह का दबा हुआ-सा शोर गूँज रहा है।

ग्यारह बजते ही बगल का दरवाजा खुलता है और जज साहब भीतर आते हैं। अगल-बगल चार सशस्त्र सिपाही हैं। वातावरण शान्त हो जाता है। जज साहब के स्वागत के लिये सभी उठ खड़े होते हैं और उनके बैठते ही पुनः बैठ जाते हैं।

जज साहब फाईल में से फैसला उठा खड़े हो जाते हैं।

केवल एक ही वाक्य में अपना फैसला सुनाते हैं—

"मुजरिम चन्द्रनाथ का जुर्म हर तरह से साबित हो चुका है इसलिये उसे कोड़े मारते-मारते मौत की सजा दी जाती है...."

लाल दाँत पीसता है। दर्शक स्तब्ध हो जाते हैं, चन्द्रनाथ कुछ कहना चाहता है, मगर जज साहब बाहर जा चुके हैं।

लोग बाहर आने लगते हैं। लाल भी बाहर आता है।

वह चारों ओर दृष्टि डालकर उस भिखारी की खोज करता है मगर भिखारी कहीं दिखाई नहीं पड़ता।

मिस्टर शर्मा न्यायालय के दरवाजे पर अब तक खड़े, गौर से बाहर निकलनेवाले लोगों का चेहरा पढ़ रहे हैं।

तभी एक सफेदपोश जासूस के रूप में रामलाल आता है।

रामलाल—(धीरे से, मिस्टर शर्मा के कान में) बाइगॉड, सर! मुजरिम जुर्म का इकबाल करना चाहता है....

मि० शर्मा—(चौंकते हुये) तुम चलो, मैं अभी आया....

रामलाल चला जाता है।

दृश्य झटके के साथ ब[illegible]लता है

मिस्टर शर्मा को देखकर हवालात का ताला खोल दिया जाता है। मिस्टर शर्मा अन्दर घुसते हैं। चन्द्रनाथ हवालात के कमरे

में सर नीचा किये हुए टहल रहा है। चेहरा पीला पड़ गया है। हाथ की मुट्ठियाँ कसी हुई हैं। बड़ा बेचैन लग रहा है वह।

मि० शर्मा—(रोबीली आवाज) क्या कहना चाहते हो?

चन्द्रनाथ—ओह! आप?... आइये... मैंने ही आपको बुलाया.... मैं....मुझे कुछ कहना है....

चन्द्रनाथ उद्वेग से बोल नहीं पा रहा है।

मि० शर्मा—क्या कहते हो....कहो!

चन्द्रनाथ—मैं सब कुछ कहना चाहता हूँ....सब कुछ कह दूँगा....मैं सारा भेद जानता हूँ....

मि० शर्मा—तुम इकबाल करना चाहते हो?....

चन्द्रनाथ—जी हाँ! अगर मेरी जान छोड़ दी जाय....

मि० शर्मा—अपनी जान सुरक्षित समझो तुम! किसी बात का डर नहीं। मैं आज रात जेल में तुमसे भेंट करूँगा... तुम तब तक अपनी जबान काबू में रखना....मेरे सिवा एक शब्द भी किसी से मत कहना, नहीं तो सारा किया-कराया मिट्टी हो जायगा....

चन्द्रनाथ—बहुत अच्छा!....मगर मेरी जान तो छोड़ दी जायगी न?

मि० शर्मा—जरूर!

चन्द्रनाथ—आप मुझसे कब मिलेंगे?

मि० शर्मा—रात में आठ बजे के बाद किसी भी समय....

कहकर मिस्टर शर्मा घूम पड़ते हैं। बाहर आते हैं तो उनके मस्तक पर चिन्ता और सन्तोष, दोनों भाव रहते हैं।

● ●

लाल अपने कमरे में परेशान बैठा है। उसके सामने चन्द्रनाथ की वीभत्स सूरत नाच रही है। कभी चन्द्रनाथ की सूरत लुप्त हो जाती है, कभी अट्टहास करके कहती है—'मैं सब कुछ कह दूँगा लाल! मंडल ने मेरी जान नहीं बचाई....मुझे फाँसी की

सजा हो गई....मगर मैं फांसी नहीं चाहता....मुझे फांसी नहीं हो सकती....मैं सब कुछ बता दूँगा—हा-हा-हा !'

लाल परेशान हो कमरे में टहलने लगता है। कुछ देर बाद कुछ शान्ति मिलती है। अपने-आप से ही कहने लगता है—खैर ! भेद खुल जाने से मुझ जैसे सौ-पचास युवकों को फांसी जरूर हो जायगी मगर सरदार साफ बच जायेंगे....उन्हें कोई नहीं जानता....वे फिर ऐसा ही गिरोह बना लेंगे....

टहलता रहता है वह। थोड़ी देर बाद—खोल दो भेद चन्द्रनाथ ! मगर तुम्हें फांसी देनेवाला जज आज मेरे हाथों से बच नहीं सकता। हमारे देश के पूज्य नेता गुलामी को दूर करने के लिए बेताब हैं मगर कानून की नकाब पहने आज के न्यायकर्त्ता मातृ-भूमि की बेड़ी को और जकड़ते जा रहे हैं....ऐसे न्यायकर्त्ता देश के शत्रु हैं...इन्हें जिन्दा रहने का कोई हक नहीं....

धीरे-धीरे सन्ध्या का आँचल फैल रहा है। लाल अपनी गुप्त आलमारी खोलकर, उसमें से दो भरे रिवाल्वर निकाल जेब में रखता है। फिर आलमारी बन्द कर देता है।

रिवाल्वर जेब में रख कर पीछे घूमता है। चौंक पड़ता है, रेखा खड़ी है। शिकारी चुस्त पाजामा, ऊनी कोट और खुले बाल में।

लाल—रेखा ! तुम कब आई ?

रेखा—अभी तो चली आ रही हूँ लाल भैया ! जब तुम उस शीशे में अपना मुँह देख रहे थे....

लाल—(बिगड़ कर) तुम्हारा सर देख रहा था....

रेखा—(हँसते हुये लाल के सामने खड़ी हो जाती है) अच्छा ! शीशे में तुम अपना चेहरा देखते हो तो दिखाई पड़ता है मेरा सर !....अजीब बात है लाल भैया !....

लाल—रेखा ! तू यहाँ क्यों आई है ?

रेखा—तुम कहीं घूमने जा रहे हो न लाल भैया !....मैं भी तो

इसी इरादे से आई थी। शाम के समय घूमना मुझे बड़ा अच्छा लगता है, जानते तो हो....

लाल—मगर मुझे घूमने की फुर्सत नहीं, तुम जाओ। मैं एक जरूरी काम से जा रहा हूँ। गले पड़ोगी तो ठीक नहीं होगा....

रेखा—(गम्भीर स्वर) मैं भी जरूरी काम से तुम्हारे साथ चलूँगी....तुम्हारा निशाना अगर चूकेगा तो मैं उसे सम्हाल दूँगी....

लाल—चुप रह! बेकार सर खाये जा रही है....

रेखा—लाल भैया! तुम्हारा सर क्या तरबूज हो गया कि मैं खाये जा रही हूँ...इधर बहुत दिनों से तुम्हारा सर खाने लगी हूँ....

लाल—रेखा! मैं आज परेशान हूँ। मुझे अकेला छोड़ दो....

रेखा—(संजीदा स्वर) च्छी बात है लाल भैया! जाओ तुम अकेले ही घूमने...मगर याद रखो, तुम अपनी जीवन-रेखा को छोड़कर ज्यादा दूर तक आगे नहीं जा सकते.... आज नहीं तो कभी तुम्हें मेरी जरूरत पड़ेगी ही....हाँ, लाल भैया! तुमने कुछ सुना?

लाल—क्या?....

रेखा—एक क्रान्तिकारी को फाँसी की सजा हुई है आज!

लाल—तो?....

रेखा—और क्रान्तिकारीदल वाले आज रात में जज साहब की जान लेंगे....

सुनकर लाल चौंक पड़ता है।

सोचने लगता है, क्या रेखा ने कल छिपकर भिखारी और उसकी सारी बातें सु ली थीं।

लाल—तुझे कैसे मालूम हुआ रेखा?

रेखा—अभी कल रात में जज चाचा आये थे और पिताजी से बहुत देर तक बातें करते रहे....बहुत डर गये थे बेचारे....

लाल—तू आजकल बहुत बात बनाना सीख गई है रेखा!

रेखा—तुम्हारे साथ चलूँ तो रिवाल्वर चलाना भी सीख जाऊँ लाल भैया !....यही एक साध रह गई है मन में कि मैं तुम्हारे साथ चलने योग्य बन सकूँ....कोशिश तो कर ही रही हूँ....

लाल—रेखा ! मैं कहता हूँ, मुझे एकान्त चाहिये....तुम अभी यहाँ से चली जाओ....

रेखा—(आर्द्र स्वर) जाती हूँ लाल भैया ! मुझे तुम्हारा साथ चाहिये और तुम्हें चाहिये एकान्त....मुझे जाना ही पड़ेगा... क्या तुम्हें मेरा कुछ भी मोह नहीं लगता लाल भैया ? पहले तो ऐसे नहीं थे तुम....जब से तुम उस बड़े से शीशे में अपना मुँह देखने लगे हो, तभी से मुझ पर बात-बात पर बिगड़ जाते हो। कभी मुझे भी उस शीशे में अपना मुँह देखने दो। मैं भी तो देखूँ, देश की गुलामी का बन्धन कितना खुल चुका है। बड़ा अच्छा शीशा है यह लाल भैया !

लाल—तुम्हारी जबान अगर तलवार होती तो अच्छा था....

रेखा—तलवार की लड़ाई तो पुरानी पड़ गई है लाल भैया ! आज कल तो गोली की मार चलती है। जिस दिन मेरी बोली में गोली की तेजी आ जाय, तभी मानोगे मुझे....

लाल खीझ उठता है। आगे बढ़कर रेखा की बाँह पकड़ उसे ढकेल कर बाहर कर देता है।

लाल—निकल यहाँ से शैतान कहीं की....

रेखा—पहले बाँह पकड़ते हो, फिर धक्का देते हो.... पुरुषों की यह आदत छूटेगी नहीं कभी....तुम्हारी यह आदत न छुड़ा दी तो मेरा नाम रेखा नहीं....

रेखा चली जाती है। लाल परेशान-सा कुर्सी पर बैठ जाता है।

वह अपने आप ही कह उठता है—शैतान जब आती है, तब तूफान लेकर। इतना भेद जान चुकी है मगर न जाने कौन-सी आशा लेकर अभी तक चुप है। मिस्टर शर्मा से कह दे तो तुरन्त

हथकड़ी पड़ जाय....मगर रेखा ऐसी नहीं....और कुर्सी पर बैठा-बैठा वह चिन्तन में खो जाता है। बैठे रहना बोझ-सा मालूम होता है तो उठकर टहलने लगता है। रेखा उसके मानस में झंझावात बनकर घुमड़ रही है....यह उसकी मुख-मुद्रा से स्पष्ट हो रहा है।

शून्य में निहारते हुए वह काँपते स्वर में मन ही मन पुकारता है—तू क्या है रेखा! कुर्सी से ठोकर लगती है। तो चौंककर अपनी उद्भ्रान्त अवस्था पर झुँझला उठता है।

रेखा घर आती है तो मिस्टर शर्मा कहीं जाने को तैयार हैं।

रेखा को देख कर वे मुस्कुराते हैं।

मि० शर्मा—घूम कर आ गई बेटी!

रेखा—गई तो थी इसी इरादे से मगर लाल भैया लाल-पीले हो पड़े। अब नहीं जाऊँगी घूमने पिताजी!

मि० शर्मा—मैं जज साहब के बँगले पर जा रहा हूँ....कोई फोन आवे तो बता देना....

और वे घूम पड़ते हैं। रेखा उनकी कार की आवाज सुनती है।

• •

जज साहब परेशान बैठे हैं।

हाथ में पिस्तौल लिये रामलाल विचित्र गति से टहल रहा है।

जज—रामलाल!....

रामलाल—यस सर!....

जज—(बेचैन स्वर) मिस्टर शर्मा अभी तक नहीं आये?

रामलाल—बाइगॉड, आते ही होंगे सर! रास्ते में कार का पहिया पंचर हो गई होगी....ओल्ड माडेल की कार है न?

जज—तुम लोगों की यह लापरवाही ठीक नहीं रामलाल!

रामलाल—बाइगॉड, बिल्कुल बेठीक है हजूर! इधर आपकी जान पर पिस्तौल तनी है, उधर मिस्टर शर्मा अभी तक आये नहीं!....लीजिये, वह आ गये....

मिस्टर शर्मा कमरे में दाखिल होते हैं।

जज—आपने आने में बड़ी देर कर दी ?...

मि० शर्मा—मुझे माफ कीजिये....अभी मुझे फिर जाना है....

जज—कहाँ ?

जज साहब का चेहरा पीले से बदल कर सफेद हो रहा है ।

मि० शर्मा—मैं बहुत जल्द लौटूंगा....जेल जाकर उस मुज-रिम चन्द्रनाथ से भेंट करनी है....शायद कुछ काम की बातें निकल आयें....

जज—अच्छा ! मगर जल्दी लौटियेगा....मेरा केवल आप पर ही विश्वास है....

मि० शर्मा—आप जरा भी चिन्ता न करें...रामलाल ! तुम बराबर यहीं रहो, और एक मिनट के लिये भी जज साहब को अकेला मत रखना....

रामलाल—बाईगॉड, सर ! मुझे खुद अकेले में डर लगता है। मैं बराबर पिस्तौल के घोड़े पर ऊंगली रखे रेडी रहूंगा....

मिस्टर शर्मा बाहर आकर कार पर जा चढ़ते हैं।

विद्युत-प्रकाश की लहर में मिस्टर शर्मा की भागती हुई कार सिमट जाती है और धीरे-धीरे जेल का दृष्य स्पष्ट होने लगता है—

मि० शर्मा—मैं चन्द्रनाथ से भेंट करना चाहता हूँ....अकेले ही....पोशीदा बातें करनी हैं...

जेलर से कहकर वे जेल के अन्दर चले जाते हैं।

मिस्टर शर्मा अन्दर आते हैं तो सन्तरी सलाम ठोंकता है।

चन्द्रनाथ चिन्तित मुद्रा से उन्हें देखता है।

मि० शर्मा—(सन्तरी की तरफ देखकर) तुम जाओ....

मिस्टर शर्मा का हुक्म पाकर सन्तरी वहाँ से चला जाता है।

चन्द्रनाथ काल-कोठरी में रखा गया है। आस-पास दूसरे बैरक नहीं हैं। रात के आठ बज रहे हैं।

अन्धकार गाढ़ा हो चला है।

चन्द्रनाथ—आप आ गये ?....देखिये, मैं जो भेद बताने जा रहा हूँ, वह सरकार के बड़े काम की चीज है। इसके बदले में केवल मेरी जान ही बख्शी जाय, मैं यह नहीं चाहता....

मि० शर्मा—तब क्या चाहते हो ?

चन्द्रनाथ—कोई सरकारी ओहदा !

मि० शर्मा—मिलेगा, मैं सिफारिश कर दूँगा...हाँ, तो तुम बलवाइयों का सारा भेद जानते हो ?

चन्द्रनाथ—जी हाँ ! एक-एक आदमी का नाम-पता बता दूँगा....

मि० शर्मा—इस गिरोह का सरदार कौन है, जानते हो ?

चन्द्रनाथ—यही एक भेद नहीं जानता...उससे मिल चुका हूँ मगर वह कौन है, इसे कोई नहीं जानता....मगर क्या मेरी इतनी मदद काफी नहीं ?

मि० शर्मा—बहुत है....तुम थोड़ी देर रुको। मैं फोन करके जज साहब को भी पहरे के अंदर यहीं बुलाता हूँ। उनके सामने ही तुम्हारा बयान लेना ठीक होगा....

चन्द्रनाथ—जो कुछ करना हो जल्दी कीजिये....आप मण्डल की ताकत नहीं जानते....मुझे अपनी जान का खतरा है....

मि० शर्मा—चन्द्रनाथ ! यह न भूलो कि यह जेल है और यहाँ पर जो क्रांतिकारी आयेंगे, वे हाथों में हथकड़ी पहन कर ही....

कहकर मिस्टर शर्मा चले जाते हैं।

जंगले के भीतर खड़ा हुआ चन्द्रनाथ अंधकार में घुलती हुई उनकी आकृतिक देखता रहता है, फिर काल-कोठरी में व्यग्र-भाव से टहलने लगता है।

दो ही मिनट बाद—

चन्द्रनाथ !.... (किसी का बड़ा ही गम्भीर स्वर)

चन्द्रनाथ—क्या है सन्तरी ?

चन्द्रनाथ ने सोचा शायद सन्तरी लौट आया है। मगर जंगले के बाहर देखते ही उसकी आँखों का आसमान फट पड़ता है।

एक धुंधली-सी छाया, काले कपड़ों से ढँकी।

हाथ में एक भयानक रिवाल्वर।

चन्द्रनाथ का शरीर तूफान का झोंका बन जाता है।

चन्द्रनाथ—तु....तुम....आप कौन हैं ?

छाया हाथ की ऊँगली से अपना मस्तक खुजलाती है।

खबरदार ! जोर से बोलने की कोशिश मत करना.... (छाया का गम्भीर स्वर)

चन्द्रनाथ—(हताश स्वर) ओह !....सरदार, आप ?.... यहाँ....मुझे छुड़ाने आये हैं ?

सरदार—आया था छुड़ाने ही मगर अब तुम्हें यहीं दफन करके जाऊँगा....क्रान्ति के दूत जेल में नहीं सड़ सकते....मगर तुम तो कुत्ते निकले चन्द्रनाथ !...मेरा भी भय न लगा तुम्हें ?....देश के प्रति वफादारी का वादा तो तुम भूल ही गये थे, सरदार के रिवाल्वर की ताकत भी तुम्हें याद न रही....

चन्द्रनाथ—मुझे माफ कीजिये...मुझे यहाँ से ले चलिए.... मैंने अभी उन्हें कुछ भी नहीं बताया है....अब भी समय है....

सरदार—समय बीत चला....अब कुछ नहीं हो सकता....

चन्द्रनाथ—कुछ नहीं ?

सरदार—(दृढ़ स्वर) नहीं....

चन्द्रनाथ—तो तुम भी यहाँ से नहीं भाग सकते....मैं चिल्लाऊँगा....शोर करूँगा....तुम्हारी गोली खाकर भी मरते दम तक चिल्लाता रहूँगा मैं....तुम भाग नहीं सकते....भाग नहीं सकते सरदार !....

सरदार—चन्द्रनाथ ! चिल्लाओ मत, कोई सुन नहीं सकता। सन्तरी को बाँधकर मैं उधर छोड़ आया हूँ....कोई मुझे रोक भी

नहीं सकता ...खैर ! इसे छोड़ो ...क्या तुम्हें अपने किये पर पछतावा है ? क्या तुम बाहर निकल कर अब भी ईमानदारी से मण्डल की सेवा करोगे ?

चन्द्रनाथ—सरदार ! मुझे यहां से ले चलिये....

सरदार—फिर तो तुम दगा नहीं दोगे ?

चन्द्रनाथ—नहीं सरदार ! कभी नहीं....कभी नहीं....

सरदार—मैं सब तैयारी करके आया हूँ....मगर यहां से निकलने के पहले तुम्हें अपने कसूर की सजा भुगतनी पड़ेगी....

चन्द्रनाथ—मैं तैयार हूँ....

सरदार—इधर आओ...जँगले के पास....

चन्द्रनाथ जँगले के पास आ जाता है।

सरदार—मुँह खोलो और अपनी जीभ बाहर निकालो....

चन्द्रनाथ—(आज्ञा पालन करते हुये) लीजिये....

सरदार—ठीक है....

सरदार के हाथ में कोई चीज चमकर विद्युत गति से आगे बढ़ती है और चन्द्रनाथ चीख पड़ता है।

उसकी जीभ कट कर सरदार के हाथ में आ जाती है।

सरदार—अब खूब चिल्लाओ....बता दो जितना भेद तुम्हें बताना हो....कुत्ते ! इसी मौत के काबिल थे तुम...अब तुम्हारे दोनों हाथ भी तोड़ दूँ, ताकि तुम लिखकर भी कुछ बता न सको... मरो, मरना ही तुम्हारे हक में अच्छा है....मगर मेरे हाथों नहीं, सरकारी कुत्तों के हाथों मरो....

सरदार का रिवाल्वर सजग होता है।

धांय !धांय !....सन्नाटा गूँज-गूँजकर रह जाता है।

और चन्द्रनाथ के दोनों हाथ नीचे लटक पड़ते हैं। वह धुंधली छाया तेजी से एक ओर जाकर विलीन हो जाती है।

एक ही मिनट बाद मिस्टर शर्मा दौड़े आते हैं।

शायद गोली की आवाज उनके कानों में पड़ी है।

मि० शर्मा—क्या हुआ ?....क्या हुआ चन्द्रनाथ ?....

मगर चन्द्रनाथ बोले तो कैसे बोले ? पीड़ा से छटपटाता हुआ जमीन पर लोट रहा है वह। तभी जेलर तथा कई वार्डन भी दौड़े आते हैं। साथ में कई लालटेनें भी हैं।

जेलर—यह गोली की आवाज कैसी थी ?....

मि० शर्मा—मैं इससे बातें करके आफिस की ओर आ रहा था कि गोली की आवाज सुनकर इधर दौड़ा आया....इसे किसी ने गोली मार दी है...

काल-कोठरी का ताला खोला जाता है।

देख कर सभी सन्न रह जाते हैं।

मि० शर्मा—(हताश स्वर) इसकी जीभ काट ली गई है और दोनों हाथ तोड़ डाले गये हैं कि यह कोई भेद न बता सके....

जेल में खतरे का घण्टा बज उठता है। चारों ओर पुलिस के दल दौड़ पड़ते हैं। जेल में दिन-सा प्रकाश फैल जाता है। मगर उनके हाथ कोई नहीं लगता है। टेलीफोन भी खटक रहे हैं।

जासूसों की दौड़-धूप शुरू हो जाती है।

मि० शर्मा—(जेलर से) मैं चलता हूँ...मुझे जज साहब की भी खबर लेनी है....

और वे घूम पड़ते हैं।

जेल की हलचल, वातावरण में देर तक गूँजती रहती है।

● ●

अन्धकार और प्रकाश की आँख-मिचौनी—

जज साहब के मकान से थोड़ी ही दूर पर एक पतली-सी अँधेरी, बदबूदार गली है, जहाँ मनुष्य के पैर शायद ही कभी पड़ते हों। दो नकाबपोश एक मकान के पिछवाड़े छिपे खड़े हैं। कभी-कभी दोनों अपने चारों ओर गौर से देख लेते हैं।

लैम्पपोस्ट दूर पर है।

सरदार—लाल !....

लाल—जी हाँ !....

सरदार—तैयार हो तुम ?....

लाल—बिल्कुल सरदार ?....

सरदार—दिल में कोई हिचक, कोई डर तो नहीं ?

लाल—जी नहीं....

सरदार—चन्द्रनाथ का अन्त तुम सुन चुके हो...रास्ते से बाहर पैर रखते ही तुम्हारी भी वही गति होगी....समझ गये ?

लाल—मुझे अपने पैरों पर यकीन है, वे कभी रास्ते से दूर नहीं जा सकते....

सरदार—तुमने चेहरा बदल लिया है न, मुँह पर दाढ़ी मूँछें....

लाल—मैं बिल्कुल तैयार हूँ सरदार !

सरदार—तो देखो ! इस वाटर-पाइप के सहारे तुम इस मकान की छत पर पहुँचोगे....छत ही छत जज साहब के बँगले की छत पर पहुँच कर रोशनदान से,....

लाल—मैं समझ गया....

सरदार—भागते वक्त सावधान रहना....उधर कोने में एक मोटर सायकिल खड़ी है....उसमें काफी पेट्रोल है....देख लिये गये तो दूर भागना, दो-चार दिन में वापस आना....अगर कोई देख न सके तो तुरन्त अपने घर चले जाना....अब मैं चलता हूँ....

सरदार धीरे-धीरे चला जाता है।

लाल अपनी नकाब ठीक कर वाटर-पाइप के सहारे धीरे-धीरे ऊपर चढ़ने लगता है।

थोड़ी ही देर में वह उस मकान की छत पर पहुँच जाता है।

चारों ओर से सिमटता हुआ दृश्य सेशन्स-जज के बँगले के रूप में परिवर्तित हो जाता है। हाई पावर के बल्बों के प्रकाश में

बंगला नहा उठा है। आर्म्स पुलिस के दस्ते मुस्तैद दीख पड़ रहे हैं।

सेशन्स-जज मिस्टर सक्सेना आज अपनी जान हथेली पर रखे कमरे में कोच पर बैठे हैं। उन्हें अपने बचने की तनिक भी आशा नहीं है। उन्हें पुलिस और जासूसों पर जरा भी विश्वास नहीं है।

कमरे के बाहर पुलिस का जाल बिछा है। सभी सतर्क हैं।

तभी मिस्टर शर्मा बदहवास-से वहाँ आते हैं।

जज साहब उन्हें देख कर सन्तोष की साँस लेते हैं।

जज—आपने तो बड़ी देर कर दी मिस्टर शर्मा! एक-एक मिनट काटना मेरे लिए भारी हो रहा है....

रामलाल—बाईगाड, इस वक्त का एक मिनट चौबीस घंटों से भी हाई हो गया है....

मि० शर्मा—मैं बड़ा परेशान हूँ मिस्टर सक्सेना!....जेल में आज बड़ी हैरत अंगेज घटना घट गई है....

जज—(भयभीत स्वर) क्या हुआ ?

मि० शर्मा—मैं चन्द्रनाथ से मिला तो उसने सारा भेद बताना मंजूर कर लिया....मैं जेलर के आफिस की ओर बढ़ा आपको फोन करने के लिये कि बीच ही में रिवाल्वर की आवाज आई। दौड़कर गया तो देखा, किसी ने चन्द्रनाथ की जीभ काट ली है और उसके दोनों हाथ तोड़ डाले हैं....

जज—(उल्टी साँसें लेते हुये) उफ्!....क्या होगा मिस्टर शर्मा?....न जाने क्या होना चाहता है?....आप क्या जेलर के आफिस तक नहीं पहुंच पाये थे....

मि० शर्मा—जी नहीं....पाँच मिनट तो मुझे जाते-जाते ही लग गए और पहुँचने के पहले ही....जेलर का आफिस काल कोठरी से दूर भी तो है....

जज—आपके जाने बाद चन्द्रनाथ के पास और कोई नहीं था क्या?....वार्डन क्या सब मर गये थे ?

रामलाल—बाईगाड, मर ही गये होंगे, तभी तो इतनी बड़ी घटना घट गई और बेवकूफों के कानों पर कीड़े तक नहीं रेंगे।

मि० शर्मा—रास्ते से वार्डन को मैंने उधर भेज तो दिया था....

बैकग्राउन्ड एक हलका पर मनहूस गत की आवाज से सिहर-सा उठता है, तब दीख पड़ता है—

कमरे के ऊपर चारो ओर चार रोशनदान हैं। इन्हीं में से एक रोशनदान के पास छिपा हुआ लाल उपस्थित है। उसने अपना रिवाल्वर निकालकर हाथ में ले लिया है और रोशनदान की राह लक्ष्य कर रहा है। तभी वह चौंक पड़ता है।

उसके मुख से चीख निकलते-निकलते बचती है।

वह देखता है, उसके सामने वाले दूसरे रोशनदान से निकला हुआ एक दूसरा रिवाल्वर भी जज साहब की खोपड़ी का लक्ष्य कर चुका है। वह हैरान हो जाता है।

दूसरे रोशनदान के पास कौन है, वह नहीं देख पाता है।

क्या सरदार को उस पर विश्वास नहीं था, जो उन्होंने दो व्यक्तियों को एक ही कार्य पर तैनात कर दिया ?

अभी वह इस पर विचार कर ही रहा है कि----

धांय !

उस ओर के रोशनदान से आवाज आती है और वह रिवाल्वर लुप्त हो जाता है। हत्या लाल के हाथों नहीं हो पाती, फिर भी लाल को सन्तोष है कि कार्य पूरा हो गया है।

अब वह भागने की ताक में लगता है।

तीव्र ध्वनि में कोई वाद्य यंत्र मरण-राग अलाप रहा है।

घोर अन्धकार। दौड़ते हुए पैरों की आवाज।

नीचे बड़ा शोर मच जाता है। जज साहब की खोपड़ी टूट चुकी है और उनके प्राण उड़ चुके हैं। मिस्टर शर्मा हाथ मल रहे हैं और दाँत पीस-पीस कर सिपाहियों को हुक्म दे रहे हैं।

मि० शर्मा—(चिल्लाते हुये) गोली रोशनदान से चलाई गई है....उधर देखो....दौड़ो जल्दी....

सिपाही भागने-दौड़ने लगते हैं।

उसी समय रेखा दौड़ी आती है।

रेखा—पिताजी ! दाई की तबीयत एकाएक खराब हो गई है। जल्दी चलिये....(तभी उसकी दृष्टि खून से लथपथ जज साहब की लाश पर पड़ती है) अरे ! चाचाजी को क्या हुआ ?....बाप रे बाप !

वह चीख पड़ती है।

मि० शर्मा—(घबराया हुआ स्वर) रेखा ! तू किसी डाक्टर को लेकर घर जा....मैं अभी नहीं चल सकता....जज साहब का खून हो गया है....

रेखा की आँखों में आँसू आ जाते हैं।

रेखा—आप यहाँ से चले चलिये, यहाँ खतरा है पिताजी !

मिस्टर शर्मा प्यार से रेखा का सर सहलाते हैं।

मि० शर्मा—पगली ! ऐसा तो होता ही रहता है....तू घर चली जा। डाक्टर को साथ लेती जाना और दाई को ठीक से दवा दे देना....आज तो शायद मैं घर न आ सकूँ....

रेखा चली जाती है।

तभी—

वह है....वह भागा जा रहा है....(सिपाही चिल्ला उठते हैं)

मि० शर्मा—(गरज कर) पकड़ो....जाने न पावे बेईमान....

छत-छत भागता हुआ लाल देख लिया जाता है। पुलिस भी छत ही छत उसका पीछा करती है। आखिरी मकान पर पहुँच कर लाल धड़ाम से नीचे कूद पड़ता है। छत नीची है, अतः चोट अधिक नहीं आती उसे। पास ही खड़े हुए दो सिपाहियों ने लाल को पकड़ना चाहा है मगर लाल का रिवाल्वर उन्हें सुला देता है। दौड़-

कर लाल मोटर सायकिल पर जा चढ़ जाता है।

मोटर सायकिल भाग चलती है।

पुलिसवाले भी असावधान नहीं है। थोड़ी ही देर बाद लाल को मालूम हो जाता है कि एक पुलिस जीप पूरी तेजी से उसका पीछा कर रही है। लाल अपनी स्पीड और तेज कर देता है। रात का समय, चारों ओर सन्नाटा। लाल की मोटर सायकिल शहर का रास्ता छोड़कर देहाती मार्ग पर भाग चलती है।

पीछेवाली जीप काफी पीछे है परन्तु उस पर से चलाई जाती हुई गोलियाँ लाल तक पहुँच रही है।

डर है कि कोई गोली लाल की खोपड़ी न छेद दे।

सड़क पक्की है। दोनों ओर लहराते हुए गेहूँ-जौ के खेत हैं।

तभी लाल का पिछला पहिया धड़ाके के साथ बर्स्ट हो जाती है। लाल गिरते-गिरते बचता है। वह मोटर सायकिल का मोह छोड़ तेजी के साथ बगल के खेत में घुसकर भागने लगता है।

गेहूँ के पौधे काफी बड़े हैं। लाल को छिप कर भागने में विशेष असुविधा नहीं होती है। लाल अपना काला लबादा और नकाब उतार कर फेंक देता है।

भागने की धुन में उसे ध्यान ही नहीं रहता कि पुलिस की एक गोली से उसका बायाँ पैर भी जख्मी हो गया है। घाव साधारण ही हैं। गोली माँस छीलती हुई निकल गई है।

पुलिस की कार लाल की बेकाम मोटर सायकिल के पास आकर रुक जाती है। टार्च के सहारे आस-पास के खेतों में प्रकाश फेंका जाने लगता है परन्तु लाल का पता नहीं लगता।

लाचार पुलिस की जीप लाल की मोटर सायकिल लादकर लौट पड़ती है। दो-चार कांस्टेबलों के साथ, खेतों के बीच एक भयंकर क्रान्तिकारी का पीछा करने का साहस सी० आई० डी० इस्पेक्टर नहीं कर पाता है।

● ●

मिस्टर शर्मा का बँगला।

रेखा दाई की तीमारदारी में परेशान हो रही है।

दाई—रेखा!....ओ रेखा!....

रेखा—(पलंग पर लेटे-लेटे) अब सो जाओ दाई! आधी रात तो बीत गई। चिल्लाती रहोगी तो डाक्टर की दवा का असर कैसे होगा?

दाई—(चीखकर) तुझसे उठा नहीं जाता? जिन्दगी बिता दी इसके पालने-पोसने में और आज जब खुद मरने लगी तो इसकी जबान को गरुड़-पुरान सूझ रहा है....उठती है या नहीं?

रेखा—लो उठ गई....बोलो क्या कहती हो?

दाई—एक गिलास पानी दे मुझे....

रेखा—जाड़े में इतना पानी पीती हो कि पेट में जाकर बर्फ बन जाता है....और तब लगती हो चिल्लाने पेट-दर्द से....डाक्टर भी क्या खाक दवा करेगा....

दाई—तेरा डाक्टर गया भाड़ में....ओ रेखा! सुनती है... तेरा डाक्टर....अरी, मेरी बिल्ली को दूध पिलाया या नहीं?....

रेखा—बिल्ली गई भाड़ में, यह बुढ़ापा भी जवानों के लिये काल है....आज चारपाई पर पड़ी तो दुनिया भर का काम....

दाई—अरे तू भी कभी बूढ़ी होगी रे रेखा!....तब देख लेना, चारपाई तेरे लिए चुम्बक न बन जाय तो कहना....पानी पिलाती है मुझे या नहीं?....

रेखा—(खीझकर) देती हूं दाई!... तुम तो जैसे भूडोल मचा देती हो....

दाई—जोर से न चिल्लाऊँ तो तेरे कान पर कीड़े भी न रेंगे।

रेखा उठकर उसे पानी देती है। दाई एक घूंट पानी पीती है।

दाई—(चीखकर)भगवान् भला करे इस लड़की का। बूढ़ों को पानी भी देती है तो बर्फ डालकर....

रेखा—बर्फ नहीं डाला है दाई ! नल का पानी है यह तो... तुम्हारे लिये कुआँ खोदकर पानी कहाँ से लाऊँ ?

रेखा बेटी !...(बाहर से मिस्टर शर्मा की आवाज आती है)

रेखा दौड़कर दरवाजा खोलती है।

रेखा—आ गये पिताजी !

मि० शर्मा—(अन्दर आते हुये) दाई की कैसी तबीयत है ?

रेखा—ठीक है....

और दरवाजा बन्द कर रेखा अन्दर आ जाती है।

मिस्टर शर्मा सीधे अपने कमरे में चले जाते हैं।

पीछे-पीछे रेखा भी आती है। वह देखती है, आज उसके पिता का चेहरा अतिशय गम्भीर है।

रेखा—खाना लाऊँ पिताजी ?

मि० शर्मा—आज नहीं बेटी !....इच्छा नहीं है....अब सोना चाहता हूँ....

और मिस्टर शर्मा पलंग पर जा पड़ते हैं।

रेखा—कुछ पता लगा ?

मि० शर्मा—किसका ?

रेखा—खूनी का....

मि० शर्मा—नहीं बेटी !....वह हाथ से निकल गया....अब तुम जाओ....

रेखा चली जाती है।

मिस्टर शर्मा सोने का उपक्रम करने लगते हैं।

● ●

लखनपुर गाँव में ढोलक ठनक रही है। एक स्थान पर रात के समय कुछ गाँव वाले इकट्ठे हैं। एक युवक, एक युवती के साथ गाता हुआ नाच रहा है। चारों ओर ग्रामीण स्त्री-पुरुषों की भीड़ है। सभी अलमस्त, प्रसन्न दीख पड़ते हैं।

युवक—लिए नैनों में कटार, किये सोलहो सिंगार
सुनो जी कहाँ को चली ?
युवती—गोरी बहियाँ मोर मरोरी, तोरी ऐसी बरजोरी
सैंया लागे न भली।
युवक—नैनों में कजरा की डोरी, नागिन जैसे बाल
सोहे नकिया में नकबेसर, लाल गुलाबी गाल
सुनो जी कहाँ को चली ?
लिये नैनों में कटार, किये सोलहो सिंगार
सुनो जी कहाँ को चली ?
युवती—गोरी बहियाँ मोर मरोरी, तोरी ऐसी बरजोरी
छैला लागे ना भली।
युवक—मैं बसन्त का मस्त झकोरा
युवती—मैं पूनम की रात
युवक—मैं हूँ बादल नील गगन का
युवती—मैं भींगी बरसात
युवक—सुनो जी बेला की कली
युवती—मैं तो हो गई बदनाम, लेते-लेते तेरा नाम
मगर तू निकला राजा अजब छली।
युवक—लिये नैनों में कटार, किये सोलहो सिंगार
सुनो जी कहाँ चली ?
युवती—गोरी बहियाँ मोर मरोरी, तोरी ऐसी बरजोरी
रसिया लागे ना भली।

गाना समाप्त होता सब लोग उठकर चल देते हैं। नाचने वाली युवती नयना भी अपने घर की ओर अकेली चल पड़ती है। नाचने वाला युवक मनोहर भी उसके साथ हो रहा है।

मनोहर—आज तो कमाल कर दिया तूने गोरी! पैरों की पायल तेरी ऐसी बज रही थी कि हवा तक झूम-झूम उठी।

नयना—(घृणा से) तू अपने रास्ते जा मनोहर ! आज तेरे साथ नाच दी तो तेरी हिम्मत बढ़ गई ?

मनोहर—रूठो मत अलबेली ! कब से तुम्हारे लिये कलेजा दबाये बैठा हूं । तू तो चांद है नयना....

नयना—छोड़ दो मेरा हाथ....

और झटक कर वह चली जाती है ।

● ●

लखनपुर गांव इस समय सो रहा है । चारों ओर सन्नाटा है ।

झींगुरों की झनकार से वातावरण रह-रहकर थिरक उठता है तो लगता है सन्नाटा मधुर रूप में मुखरित हो उठा है ।

अपनी जीर्ण-शीर्ण झोपड़ी में बूढ़ा जियावन अभी तक जाग रहा है । चारपाई पर कथरी ओढ़े पड़ा वह नारियल पी रहा है ।

नयना चुपचाप अपने बूढ़े बाप जियावन का पैर दबा रही है ।

एक कोने में दीवट पर जल रहे दीये की लौ सहसा कांपकर गुल हो जाती है ।

नयना—बापू !...

जियावन चुप रहता है । ध्यानमग्न, चिन्तित ।

नयना—सो गये क्या बापू ?

जियावन—ऊं....नहीं तो बिटिया ! क्या बात है ?

नयना—नींद नहीं आ रही है क्या बापू ?

जियावन—नींद अब नहीं आयेगी नयना !....अब तो आयेगी भी तो वही, महानिद्रा कि मोह-माया सब कुछ छुड़ाकर बोलता पंछी उड़ा ले जायगी अपने साथ....

नयना—तुम कैसी बातें करते हो बापू ? मुझे नहीं सुहातीं ऐसी बातें....आज तुमने कुछ खाया भी नहीं । ऐसे कब तक चलेगा ?....

जियावन—अरे पगली !....अभी तो दोपहर की लिट्टियां ही पेट में पत्थर बन रही हैं....पेट की आग भी तो अब जलते-जलते

बूढ़ी हो चली बिटिया ! अब खाना क्या इतना जल्दी-जल्दी पचेगा। तू ही क्यों नहीं खा लेती ? मेरी मुँह कब तक देखती रहेगी ?

नयना—मुझे भी भूख नहीं है, लिट्टियाँ रखी हैं, कल खा लेंगे...

फिर दोनों चुप हो जाते हैं।

नयना पैर दाबती रहती है। जियावन पड़ा रहता है।

नयना—बापू !

जियावन—क्या है ?

नयना—मनोहर बड़ा वैसा आदमी है बापू !

जियावन—कौन मनोहर ?....भोला का छोकरा ?

नयना—हाँ बापू !

जियावन—कैसा है वह ?

नयना—बड़ा वैसा....बहुत खराब है वह बापू !....मुझसे ऐसी बातें करता है, जो कभी किसी ने नहीं कही....उसे मना कर दो तुम बापू !....

जियावन—(स्वर में आवेश) क्या कहता है वह बेईमान ?

नयना—मैं क्या जानूँ ?....मुझे देखकर जाने क्या-क्या बकने लगता है....शहर से थोड़ा पढ़ के क्या आया है कि बात करता है तो पहेली बनाकर कि कुछ समझ में ही नहीं आता...कहता है 'तुम चाँद हो'....भला जमीन का इन्सान भी कभी आसमान का चाँद बन सकता है बापू ?....

जियावन—नहीं रे नहीं ! वह जो कहता है, उसका मतलब मैं समझता हूँ। कल उसे ठीक कर दूँगा....भोला ने छोकरे को नाक का बाल बना डाला है कि कोई छू भी न सके....मैं सब जानता हूँ। यह भोला भी कम नहीं है....

नयना—अब सो जाओ बापू !....रात बहुत बीत चली है.... मैं भी सोऊँ न ?

जियावन—हाँ, तू भी सो जा....

बाप-बेटी सोने की चिन्ता में लग जाते हैं। नयना तो पड़ते ही सो जाती है। जियावन भी धीरे-धीरे खर्राटे भरने लगता है।

घंटे भर बाद झोंपड़ी का दरवाजा कोई खटखटाता है।

जियावन—नयना !....बिटिया !....

मगर नयना नहीं जागती।

तभी झोपड़ी का दरवाजा फिर खटकता है।

जियावन कराहता हुआ उठता है।

जियावन—आता हूँ भाई !.... जिन्दगी क्या है कि रात में भी न चैन, न आराम....और नयना तो ऐसो सो जाती है कि इसका बाप भी जवानी में इस तरह घोड़े न बेचता रहा होगा....

वह दरवाजा खोलता है तो बाहर एक परदेसो दिखाई देता है।

परदेसी—बाबा ! रात भर के लिये शरण दे दो....बड़ा उपकार होगा....पैर में चोट लगी है, चल नहीं सकता....आधी रात को किसे पुकारूँ ?

जियावन—मुझे पुकार लिया है, यही बहुत है बेटा ! रात भर ही क्यों, दो-चार दिन रह सकते हो....आओ, अन्दर आओ.... नयना ! ओ बिटिया !....उठती है या नहीं ?

नयना—उठ गई बापू !....कौन है ? दीया जला दूँ ?

जियावन—हां बिटिया ! एक परदेसी है....जला दे दीया।

नयना दीपक में तेल डालकर उसे जलाती है।

मद्धिम रोशनी झोपड़ी में फैल जाती है।

नयना अपरिचित को देखती है—

पुष्ट शरीर, गर्द से भरे कपड़े, मुँह पर घनी दाढ़ी-मूँछें।

परदेसी—बाबा ! यह तुम्हारी बेटी है ?

जियावन—हां बेटा !....अभी नासमझ है। नींद में होती है, तो गाज गिरने पर भी नहीं उठती....आओ बैठो....

परदेसी बैठ जाता है।

जियावन—तमाखू पीते हो ?

परदेसी—नहीं बाबा !

जियावन—भूखे हो ?

परदेसी—रहने दो बाबा ! इन्सान की भूख भी क्या कभी मिट सकती है ?....पेट न हो तो इन्सान पंगु बनकर बैठा रहे... इतनी रात में खाना भी क्या अच्छा लगेगा ?

जियावन—देखो बेटा ! तुम यहाँ आ पड़े हो तो हमारा धरम निभेगा ही....रूखी-सूखी हो सही....नयना ! रोटियाँ रख छोड़ी है न ?....ला दे मेहमान को....

नयना चली जाती है।

परदेसी—बाबा !....तुमने शरण देकर मेरा बड़ा उपकार किया....मैं बहुत ऋणी हूँ तुम्हारा....

जियावन—छोड़ो तुम इन बातों को... तुम्हारे पैर में चोट लगी है क्या ?

परदेसी—है तो, मामूली-सी....

जियावन—लाओ देखूँ, हो सके तो पट्टी बाँध दूँ...

वह अपने पैर का घाव दिखाता है। बूढ़ा दीपक की रोशनी में उस घाव को देर तक देखता रहता है।

उसकी आँखें आश्चर्य से फैल जाती हैं।

जियावन—बेटा !

परदेसी—हाँ बाबा !

जियावन—यह घाव कैसे लगा तुम्हें ?

परदेसी—गोली से....

जियावन—गोली से...किसकी गोली ?

परदेसी—पुलिस की....

जियावन—तुम चोर हो ?...डाकू हो ?...क्या हो तुम ?.... बोलो, बोलो....?

परदेसी —मैं चोर-डाकू नहीं बाबा !... विश्वास करो मुझ पर....तुम कहो तो मैं अभी चला जा सकता हूँ....किसी पर बोझ बनने से क्या लाभ ?

जियावन—परदेसी ! बोझ ढोते-ढोते ही तो मेरी जवानी का यह रूप हो गया है तो जरा से बोझ से अब क्यों घबड़ाऊँगा....हम गाँव वाले इन्सान की जबान का विश्वास करते हैं। तुम चोर-डाकू नहीं हो तो रहो। पुलिस की क्या बात ? वह तो भले आदमियों की मौत बन रही है आजकल....

जियावन उसके पैर में फिटकिरी की पट्टी बाँध देता है।

तभी नयना छोटी-सी थाली में रोटियाँ ले आती है।

वह खाने लगता है। नयना उसका खाना देखती रहती है।

नयना—बापू ! परदेसी मेहमान को हमारा यह खाना पसन्द नहीं। शहरी दाँत जरा कमजोर होते हैं। गाँव का खाना कैसे अच्छा लगे ?

परदेसी—नहीं नयना ! तुमने बड़ी अच्छी रोटियाँ पकाई हैं। अब तो दो-चार दिन रहकर ही टलूँगा....

जियावन—अरे बेटा ! तुम हमेशा के लिए यहीं रुक जाओ तो हमारा बुढ़ापा भी कट जाय और मेरी अर्थी को कंधा लगाने वाला भी मिल जाय....

नयना—परदेसी-मेहमानों का क्या ठिकाना बापू ?....आज यहाँ, तो कल वहाँ....

परदेसी—ठीक कहती हो नयना तुम ! मेरा शरीर बिका न होता तो तुम लोगों के हाथ बेदाम बेच देता....फिर भी तुम लोगों को कभी-कभी याद तो करूँगा ही....

खाना समाप्त होता है। नयना परदेसी का हाथ धुलाती है।

परदेसी खाट पर सोता है और नयना तथा जियावन जमीन पर पड़ रहते हैं।

आकाश से टूटकर एक तारा तेजी से जमीन की ओर गिरता दीख पड़ता है और क्षण भर के लिए सारा गाँव उसके प्रकाश से उज्ज्वल होकर पुनः अन्धेरे में डूब जाता है।

•

मुर्गों की कुकड़ूँ-कूँ और चिड़ियों की चहचहाहट। दूर के मन्दिर से आती हुई घण्टे-घड़ियाल की आवाज।

सिन्दूरी सूरज की मासूम किरणें, नयना की झोपड़ी को चूमती हुई-सी दीख पड़ती हैं और नयना का उनींदा स्वर—बापू.... बापू....उठो...उठ गये क्या ?

झोपड़ी में सबेरे का प्रकाश बिखरा हुआ है। एक अँगड़ाई के साथ कथरी पर से उठ पड़ती है वह। जियावन नहीं है। खेत चला गया है शायद। उसकी दृष्टि सहसा ही चारपाई पर खर्राटे ले रहे परदेसी की ओर उन्मुख हो जाती है और तब जैसे वह चीख पड़ने की-सी हो जाती है। घबरा कर खड़ी हो जाती है।

रात वाला परदेसी, जो दाढ़ी-मूँछों की वजह से जाने कैसा लगा था, अब सफाचट्ट चेहरे में एक सुन्दर युवक बन गया है। अपनी आँखें मींचकर जैसे वह विश्वास कर लेना चाह रही है कि सपना तो नहीं देख रही है ? तभी बगल में रातवाली दाढ़ी-मूँछें पड़ी दीख जाती हैं और तब वह झपट कर उसके ऊपर झुक जाती है, फिर धीरे से पायताने बैठकर अपलक निहारने लगती है। परदेसी की नींद टूट जाती है। नयना को पायताने बैठा देख, हड़बड़ा कर उठ बैठता है।

परदेसी—अरे सबेरा हो गया ?

नयना—हाँ जी, परदेसी ! तुम बहुत अच्छा जादू जानते हो। ये दाढ़ी-मूँछे मुँह पर कैसे जमा लेते हो जी ?

परदेसी झटपट दाढ़ी-मूँछे चेहरे पर जमा लेता है।

परदेसी—(घबराया स्वर) किसी से कहना मत यह बात....

नयना—कौन-सी बात ?

परदेसी—इसी जादू की....

नयना—बापू से भी नहीं कहूँगी ?

परदेसी—नहीं ! किसी से भी नहीं....

नयना—नहीं कहूँगी परदेसी !....तुम जो चाहोगे, वही करूँगी....अगर तुम जादू की दाढ़ी न लगाया करो तो तुम्हारा चेहरा बड़ा सुन्दर लगे....भला, यह झाड़-झंखाड़ काहे को लगाते हो जी ?

परदेसी—(आश्वस्त-सा होता हुआ)—तुम्हें बगैर दाढ़ी-मूँछ के मैं अच्छा लगता हूँ नयना ?

नयना—चाहो तो मेरी आँखों से पूछ लो, दिल तो तुम मेरा देख सकते नहीं, सुन सकते हो तो सुन लो....तुम मुझे बहुत अच्छे लगते हो। जो चाहता है, हमेशा तुम्हारे साथ ही रहकर तुम्हारा जादू देखूँ....

नयना परदेसी का हाथ पकड़ लेती है।

परदेसी—नयना !

नयना—परदेसी !....तुम चले जाओगे ?....चले जाओगे न ?

परदेसी—आनेवाले को एक न एक दिन जाना ही पड़ता है नयना ! यह मजबूरी तो हर इन्सान के साथ है....

नयना—जिन्दगी में बहुत-से लोग आते हैं मगर आँखों में बहुत कम बस पाते हैं परदेसी !....और जो आँखों में घर बना लेते हैं वे जल्दी निकाले नहीं निकलते। ऐसा कभी तुम्हारे साथ भी हुआ है ?

परदेसी—(घबराकर) यह तो रोग है....इसका ईलाज कठिन है। मुझ केवल एक ही रोग है और वह है देश की चिन्ता....

नयना—अपने गाँव और देश की चिन्ता किसे नहीं होती परदेसी ?....और गाँव-देश में कुछ अपने लोग भी तो रहते हैं।

उनका मोह क्या नहीं होता ?

परदेसी—होता है, मगर देश-प्रेम के आगे एक इन्सान का प्रेम याद नहीं पड़ता....

नयना—तुम पता नहीं क्या कहते हो ! एक बात पूछती हूँ, बताओगे न ? ....तुम्हें एक पल देखकर ही पलकें निहाल हो गई हैं, ऐसा कैसे होता है भला ?

परदेसी—इसे तो तुम ही जानो नयना !

नयना—परदेसी ! तुम बड़े भोले हो...शहर में रहते हो, मगर इतनी जरा-सी बात भी नहीं जानते ?....शहरी लड़कियों की भी ऐसी ही आँखें होती हैं ?

परदेसी—कैसी आँखें ?....

नयना—मेरी तरह, कि किसी को एक पल देखते ही निहाल ? परदेसी ! तुम न जाओ तो कैसा हो ? हम लोगों के पास रहो तो हम भी खुश रहें। बापू तो तुमको अपना ही बना लें....

परदेसी—मेरा बहुत हर्ज होगा नयना !

नयना—हर्ज तो होगा ही मगर मेरी खुशी जो मर जायगी तुम्हारे जाते ही....जाने दो परदेसी ! किसकी-किसकी खुशी का ख्याल करोगे तुम ?....तुम्हारे तो बहुत हैं, मुझे तो एक तुम ही मिल पाये हो। चले जाओगे तो दिल पर रखने के लिए यहाँ पत्थरों की कमी नहीं....

नयना की आँखें गीली हो जाती हैं।

परदेसी अपनी हथेली से नयना के आँसु पोंछ देता है।

नयना परदेसी का हाथ पकड़कर अपनी आँखों पर जोरों से दाब लेती है।

नयना—परदेसी !....

परदेसी—बोलो नयना !

नयना—आँखों से आँसु क्यों बह चलते हैं ?

परदेसी—दिल पर जब कोई चोट लगती है, तब आँखें बरस ही पड़ती हैं ....

नयना—चोट दिल पर लगती है और बरसती हैं आँखें। तो क्या आँखों और दिल के बीच कोई डोर है परदेसी ?....क्या आँखों में आकर लोग दिल तक पहुँच जाते हैं ?....क्या आँखों में देखने से दिल की सूरत दिखाई पड़ सकती है ?....अगर ऐसा है परदेसी तो एक बार तुम मेरी आँखों में देखो....

परदेसी उसकी आँखों की ओर देखता है।

नयना—कुछ देखा ?

परदेसी—मैं ही तो हूँ....

नयना—हाँ ! तुम्हीं हो....आँखों की डोर पकड़कर दिल तक उतर आये हो। और दिल तक जब आ चुके हो तो बाहर नहीं निकल पाओगे परदेसी ! गाँव के लोग किसी को घर में बसा कर फिर बाहर नहीं निकालते। अपने से तुम भले ही चले जाओ। ठोकर मारने से दूसरों को चोट लगती ही है मगर ठुकरानेवाला क्या कभी रुकता है, अपनी दी हुई चोट देखने के लिए ?

परदेसी—नयना ! चाँद दूर आसमान पर हँसता है और उसे देखकर लोग पाने की लालच से जमीन पर खड़े हाथ मलते हैं परन्तु इससे जमीन और आसमान की दूरी तो कम नहीं होती। आसमान की चीज जमीनवालों को कैसे मिल पाये ? इतनी मजबूरी न हो तो दुनियां के लिये आँसू का मोल ही क्या ?

नयना—ठीक कहते हो परदेसी !....तुम चांद हो और मैं जमीन की धूल ! मगर यह न भूलो कि धूल भी हवा के साथ उड़कर कभी आसमान छूने का सपना देख सकती है और सपने हमेशा झूठे भी तो नहीं होते....

परदेसी नयना के सिर पर स्नेहपूर्वक हाथ फेरता है।

परदेसी—नयना !....पता नहीं तुम मुझसे क्या चाहती हो ? मेरा परिचय जान पाओ तो डर से कांप उठो। पुलिस हमेशा मेरी खोज में पड़ी रहती है। मैं अगर अधिक दिनों तक यहाँ रहा तो तुम लोगों पर भी आफत आ सकती है....

नयना—(स्वर में कम्पन) आफत का नाम लेकर तुम मुझे डराना चाहते हो परदेसी ?....कभी देख सको तो देख लेना कि तुम्हारे सामने नयना पर अगर बज्र भी गिर पड़े तो वह तुम्हें देखते-देखते सह लेगी। मुँह से आह भी नहीं निकालेगी....

परदेसी—मैं मजबूर हूँ नयना ! तुम इतनी भोली हो कि मेरी मजबूरी बताने पर भी नहीं समझ सकोगी। अपने दिल को बहता पानी न बनाकर कठोर पत्थर बनाओ। पानी ढाल पाते ही बह चलता है मगर पत्थर तो अपनी जगह पर अडिग रहता है....

नयना—परदेसी बाबू ! आँखों में अगर आँसू की नदी उमड़े तो पत्थर का कलेजा भी बह निकलता है....तुमने शहर के कठोर पत्थर देखे होंगे। गाँव की पहाड़ी चट्टानें तो दिन-रात रोती रहती हैं। विश्वास न हो तो चलो, उस तरफ एक सोता है, तुम्हें दिखा दूँ। पत्थर की आँखों से निकला पानी कितना मीठा होता है और इन्सान की आँख का पानी खारा !....पत्थर रोते हैं तो कितनों की प्यास बुझती है और इन्सान तो रोकर खुद अपने दिल की भी प्यास नहीं बुझा पाता....

परदेसी—(उठते हुये) नयना ! चलो, उसी सोते के किनारे चलकर बैठें....

नयना—चलो....

सूरज की सिन्दूरी किरणों में खेलते हुए पहाड़ी ग्राम का दृश्य विद्युतगति से कौंध जाता है। परदेसी और नयना धीरे-धीरे जाते दीख पड़ते हैं। सहसा अपने सामने एक हट्टे-कट्टे युवक

को देख नयना चौंक पड़ती है।

नयना—मनोहर, तू ?....

मनोहर—हाँ-हाँ, मैं ही हूँ। पहचानती नहीं क्या ?

नयना—क्या है ?

मनोहर—नयना ! यह कौन है तेरे साथ ?

नयना—मेहमान !

मनोहर—मेहमान साहब ! तुम जरा दूर चले जाओ। मुझे नयना से कुछ बातें करनी हैं....

मनोहर अजीब नजर से परदेसी को देखता है।

नयना—नहीं जी ! तुम यहीं खड़े रहो, इसे जो कहना है तुम्हारे सामने ही कहेगा....

परदेसी—नहीं-नहीं, मैं हट जाता हूँ....

परदेसी कुछ दूर जाकर खड़ा हो जाता है।

नयना—बोल, क्या कहता है ?

मनोहर—नयना ! हमसे आँखें मोड़कर यह किस दढ़ियल को बसा रही हो अपनी आँखों में ?

नयना—तुझे इससे क्या ?....मैं बहुत बार कह चुकी हूँ मनोहर ! मुझे तेरी बातें अच्छी नहीं लगतीं....ज्यादा दिक करेगा तो बापू से कह दूँगी....

मनोहर—अब और क्या कहेगी अपने बापू से ?....जो कहना था सो तो कह ही चुकी....आज सबेरे ही तेरे बापू मेरे यहाँ आये थे और आग बबूला होकर बापू से मेरी शिकायत कर गये। बापू ने भी मुझे दो-चार चाँटे मार लिये मगर प्रेम की राह में दो-चार चाँटे काँटे की तरह थोड़े ही चुभते हैं....

नयना—(बिगड़कर) तू चला जा मनोहर ! नहीं तो अच्छा नहीं होगा....

मनोहर—जाता हूँ, मगर तू यह याद रख कि चम्पा में

जब ज्यादा महक आ जाती है तो लोग उसे हरी-हरी डालों के बीच से खोज कर तोड़ ही लेते हैं....तेरी महक भी अब क्या कम रंग ला रही है। बूढ़े बाप के बल पर मत ऐंठ। उसे तो जभी चाहूँ, तभी....

मनोहर परदेसी पर एक तीव्र दृष्टि डालता हुआ एक तरफ चला जाता है।

नयना परदेसी के पास आ जाती है।

दोनों साथ-साथ पुनः चलने लगते हैं।

परदेसी—कौन था यह नयना ?

नयना—था एक मनोहर का बच्चा ! मुए ने नाक में दम कर रखा है। गाँव में खस की टट्टी भी नहीं कि दिन भर घर में बन्द रहूँ। जब निकलती हूँ तो न जाने कहाँ से आ पहुँचता है, जैसे शैतान दिन-रात मेरी ही छाया बना फिरता हो....वह बड़ा खराब आदमी है परदेसी बाबू !

परदेसी—वह तो उसकी शकल ही कहती है....

नयना—लो देखो, कितना अच्छा सोता है.. कभी देखा है ऐसा अच्छा पानी ?

परदेसी झाँककर देखता है। दोनों छोटी-छोटी पहाड़ियों से घिरी सुन्दर घाटी में आ गये हैं।

पास ही एक मनोरम सोता फुहारे फेंकता बह रहा है।

दोनों एक चट्टान पर बिल्कुल पास-पास बैठ जाते हैं।

नयना अपना एक हाथ परदेसी के कन्धे पर रखकर अपने शरीर का आधा बोझ उसके हवाले कर देती है।

नयना—परदेसी ! तुम्हें यह जगह पसन्द है ?

परदेसी—बहुत....

नयना—और मैं ?

परदेसी—(उदास स्वर) ऐसे स्थान पर तुम्हारा साथ भी

अच्छा ही समझा है...

मयना—यह बंदर की बात कैसी परदेसी ?—पत्थर के आँसू तुम्हारी नजरों में इतने कीमती हैं और जैसे मेरे आँसू का कुछ मोल ही नहीं ? बड़े-अच्छे सौदागर हो बाबू !

परदेसी—मैं ऐसे बाजार में कभी नहीं आया था मयना ! जहाँ मुझे कुछ खरीदने की जरूरत महसूस हो...मैं प्रकृति के बाजारों में घूमा हूँ, जहाँ की हर चीज बेदाम मिलती है। मातृभूमि का प्रेम भी मुझे बेदाम ही मिला है। अगर कभी कुछ मूल्य चुकाना भी पड़ा तो प्राण तक हाजिर रहेंगे...

मयना—मातृभूमि को तुम इतना चाहते हो परदेसी !

परदेसी—हाँ...

मयना—और मातृभूमि के बाद ?

परदेसी—उसके बाद सभी को...

मयना—मुझे भी ना ?

परदेसी—हाँ...

मयना—(आकुल स्वर) मेरे अच्छे बाबू !

और मयना उछलकर बाँहों में झूल पड़ती है।

उसकी रुनझुन हँसी देर तक गूँजती रहती है।

● ●

धूप लम्बी-तिरछी हो गयी है। सामने खेत में कुछ ग्रामीण तरुणियाँ समवेत स्वर में गाती हुई रुनझुन-ताल दे धुन रही हैं—

तोरे कारन बदनाम रे संवलिया
जैसे कचहरी में कागज जानु है
  जैसे काजल लोरा जाय रे संवलिया
जैसे सड़क पर एकका जानु है
  जैसे काजल लोरा जाय रे संवलिया
जैसे कुंजन में चढ़ा झुमकु है

कैसे डुबबि तोरा साथ रे सँवलिया
तोरे कारन बदनाम रे सँवलिया....

उनकी ओर लुब्धदृष्टि से देखता हुआ दूर पर मनोहर खड़ा दातून कर रहा है।

तभी किसी से धक्का लगता है। घूमकर देखता है तो सादे वेश-भूषा में रामलाल भीत दृष्टि से देखता हुआ खड़ा मिलता है।

मनोहर—(आगे बढ़कर, क्रुद्ध स्वर) क्यों बे, अन्धा है क्या ?

रामलाल—बाईगाड, वेरी बैड....देख नहीं रहे हो सेन्ट-पर-सेंट आँखों वाला हूँ....

मनोहर—(रामलाल की गर्दन पकड़ कर) उठाकर पटक दूँगा साले, पके बेल की तरह छितरा जायगा....

रामलाल—(घबरा कर) बाईगाड, माइ ब्रदर, तुम्हारा शरीर स्टील का है....गला तो ऐसा पकड़े हो डियर कि बस, जस्ट लाइक जोंक....

मनोहर—चुप रह बे !

रामलाल—बाईगाड, मैं मर जाऊँगा....

मनोहर—(गला छोड़ कर) अच्छा, बोल साले ! इधर क्या करने आया है...गाँव की लौंडियाँ घूरने ? शहर में कई बार तुझे छोकरियों की चप्पलें खाते देख चुका हूँ....

रामलाल—(लम्बी साँस लेकर) नो, नो, डियर ! अपना पेशा तो बाईगाड, पिस्तौल खाने का है। तुमने जिसे देखा होगा, वह कोई स्टुडेंट रहा होगा...हाँ, एक बात बताओगे डियर !

मनोहर—(रामलाल की हास्यास्पद मुद्रा से मजा लेता हुआ) बोलो प्यारे ! क्या पूछ रहे हो ? हाँ तो तुम हो कौन ?

रामलाल—(शान से) बाईगाड, मैं पुलिस का आदमी हूँ। बड़े-बड़े अफसरों को तुम्हारी दया से घिर्री खिलाता हूँ....

मनोहर—वह तो तुम्हारी सकल ही बता रही है....

रामलाल—एकाध दिनों पहले कोई डाकू इस गाँव में आया है ?

मनोहर—डाकू !....बेटा, फिर लगे बहकने । एक ही झापड़ में समझ लो मिर्गी आ जायेगी....

रामलाल—(जल्दी से) नो-नो, क्या डेंजरस किस्म के आदमी हो....हाँ, कोई अजनबी दीखा था ?

मनोहर—(चौंकता हुआ) अजनबी, हाँ हाँ, दाढ़ी-मूँछों वाला एक....

रामलाल—ओह, बाईगाड, वह कोई बकरा रहा होगा....

मनोहर—नहीं बे !

रामलाल—(गम्भीर स्वर) तो चलो, उसे मुझे दिखा दो, जरूर वही साला क्रान्तिकारी होगा....

मनोहर—(चलता हुआ) चलो....

रामलाल—वेरी गुड....

दोनों उस घाटी की ओर बढ़ जाते हैं ।

तरुणियों का कंठ-स्वर अब भी थिरक रहा है—

तोरे कारन बदनाम रे सँवलिया

● ●

अपने बँगले के ड्राइङ्ग रूम में मिस्टर शर्मा फोन का रिसीवर लिये बातें कर रहे हैं—

हलो !...हाँ, शर्मा स्पीकिंग !...अभी आया है ?...लखनपुर में ?....आप उसे रोक रखिये, मैं अभी आता हूँ ?....लखनपुर थाने का हल्का है ...ठीक है....सब कुछ हो जायगा...आज ही शाम को....जी हाँ ! बिल्कुल ठीक ! ऐसा कभी नहीं हो सकता....जी ! मैं कोशिश तो करूँगा ही....इसमें क्या शक है ?

मिस्टर शर्मा फोन का रिसीवर रख तेजी से कपडे बदलने लगते हैं ।

तभी रेखा आ जाती है ।

मि० शर्मा—कहाँ से आ रही हो बेटी ?

रेखा—लाल भैया के यहाँ गई थी....कल तीन बार गई थी और आज चार बार....मगर एक बार भी भेंट नहीं हुई....ये लाल भैया भी कभी-कभी गदहे की सींग हो जाते हैं पिताजी !

मि० शर्मा—तो तू उस गदहे के पीछे क्यों परेशान रहती है ?

रेखा—देखिये न ! कल से ही शेक्सपियर के साहित्य पर एक नोट लिखकर उनसे बहस करने को तैयार हूँ मगर वे मिलें तब तो ?....गये होंगे अपने गाँव, माँ से मिलने....आप कहाँ चल दिये पिताजी ?

मि० शर्मा—कलेक्टर साहब का फोन आया था, उन्होंने मुझे बुलाया है....

रेखा—और यह क्या ? आपने पूरा भोजन भी नहीं किया ?

मि० शर्मा—आधा ही खाया था कि फोन आ पहुँचा....

रेखा—तो अब खाकर जाइये....

मि० शर्मा—सरकारी नौकरी है बेटी ! वफादार नौकर के लिये काम पहले और खाना बाद में....

रेखा—जी हाँ ! खाली पेट काम भी तो खूब होता है पिताजी !....पुलिसवालों को तो खाना ही नही चाहिये। दौड़ने-धूपने के लिए पेट हल्का रखना चाहिये...

मि० शर्मा—बड़ी शरीर लड़की है....

हँसते हुए मिस्टर शर्मा हैट उठा चल पड़ते हैं।

• •

कलक्टर के पास ही रामलाल खड़ा है।

कलक्टर—देखिये ! मि० रामलाल खबर लाये हैं कि लखनपुर गाँव में इन्हें किसी बूढ़े किसान के घर एक दाढ़ी मूँछवाला संदिग्ध व्यक्ति दिखाई पड़ा है....

रामलाल—बेशक, मैं तो आपके ही पास आ रहा था मगर

साहब का बंगला सामने पड़ गया तो यहीं से फोन कर दिया....

मि० शर्मा—लखनपुर है कहां ?....

रामलाल—उस जगह से सिर्फ दो मील दक्खिन, जहां जज साहब के खूनी की मोटर साईकिल पाई गई थी....

मि० शर्मा—ठीक है ! तुमने उस आदमी को देखा ?

रामलाल—जी हां ! देखने में हट्टा-कट्टा, मुंह पर घनी दाढ़ी-मूंछें, गांववालों से एकदम अलग-थलग मालूम पड़ा....

मि० शर्मा—तुमने पता नहीं लगाया ?

रामलाल—लगाया था। मनोहर नाम के एक जवान ने बताया कि वह उस गांव में पहले कभी नहीं आया था। उसकी कोई रिश्तेदारी भी वहां नहीं है। जज साहब के हत्या की रात ही वह वहां आया है....

मि० शर्मा—(मुठ्टी मेज पर पटकते हुए) ठीक है, तुम ठीक खबर लाये हो....अभी मोटर साइकिल से जमनापुर थाने जाकर थानेदार से मिलो। मैं फोन पर उन्हें सभी बातें समझा देता हूं। देखो, होशियार रहना....

रामलाल—ब्राइगाड, मैं तो हजूर, इतना होशियार रहूंगा कि नाक पर मक्खी तक न बैठ सकेगी....

कलक्टर— मिस्टर शर्मा ! आपका क्या ख्याल है ?

मि० शर्मा—अगर धावा अचानक और ठीक मौके पर हुआ तो आसामी गिरफ्तार हो जायगा....

कलेक्टर—जज साहब की हत्या ने तो और भी हम लोगों के सर पर आफत ला दी है....सच कहता हूं, अब तो रात में नींद भी ठीक से नहीं आती। कभी-कभी सपने में भी क्रांतिकारियों से मुठभेड़ करने लगता हूं....जागता हूं तो बड़ी हंसी आती है....

रामलाल—ब्राइगाड, मुझे भी बड़ी हंसी आती है हजूर ! कल रात की बात है। मालूम हुआ कि कोई क्रान्तिकारी मेरा गला

दबा रहा है। मैंने जोर-जोर से चिल्लाना शुरू किया। बेचारे पड़ोसी तुरन्त दौड़े आये। देखा तो मैंने खुद ही अपने हाथों से अपना गला दबा रखा था....

कलक्टर—सुना मिस्टर शर्मा ! अपने जासूसों की बहादुरी। इस रामलाल को सी० आई० डी० डिपार्ट में क्यों रखा गया है, मेरी समझ में नहीं आता। निकाल बाहर करो इसे और इस जैसे मसखरे हरामखोरों को....

रामलाल के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगती हैं।

मि० शर्मा—साहब ! पुराना आदमी है। मसखरापन तो इसकी पैदाइशी आदत है....

कलक्टर—खैर, मारो गोली। अब इन हजरत को सब कुछ समझाकर जल्दी से जमनापुर की ओर रवाना कर दीजिये और आप भी...इन क्रान्तिकारियों ने तो नींद हराम कर रखी है....

मि० शर्मा—आप चिन्ता न करें, मैं सारी व्यवस्था किये देता हूँ....रामलाल !

और वे फोन की ओर बढ़ जाते हैं।

रामलाल—(प्रसन्न होकर) बाइगाड, आप हजार बरस जीयें, एक-एक बरस के हजार....

मि० शर्मा—शटअप, नान्सेंस !

मिस्टर शर्मा फोन करने लगते हैं। जमनापुर के थानेदार को सारी स्थिति समझा, रामलाल को भेजकर वे पुनः साहब के सामनेवाली कुर्सी पर बैठ जाते हैं।

कलक्टर—हो गया सब ?

मि० शर्मा—जी हाँ !

कलक्टर—(दीर्घ निश्वास लेते हुये) कुछ अक्ल काम नहीं करती मिस्टर शर्मा !....जहाँ तक मेरा विचार है, सरकार की इतनी बड़ी ताकत से लोहा लेनेवाला कोई मामूली दिमाग का आदमी

नहीं है। इस गिरोह का सरदार दिमागदार आदमी है....देखिये, हम कब उसे पकड़ पाते हैं ?

मि० शर्मा—अभी तो उसके पकड़ने का सपना देखना बड़ा कठिन है साहब ! जबकि उसके मामूली आदमी तक पकड़ में नहीं आ पाते। इसी जज साहब के हत्यारे को देखिये। हम लोगों ने उसे चारों ओर से घेर लिया था....मगर शैतान उतनी ऊँची छत से कूद कर भाग निकला....सिपाहियों ने पीछा भी किया, उसकी मोटर सायकिल भी बेकाम कर दी गई, फिर भी निकल ही गया। मोटर सायकिल भी ऐसी कि उसमें लाइसेंस का प्लेट ही नहीं....

● ●

सन्ध्या के सितारे आसमान पर चमकने लगे हैं। लखनपुर के ग्रामीण जगह-जगह आग जलाकर अपना बदन गर्म कर रहे हैं।

नयना—परदेसी ! आज मैंने एक सपना देखा, बड़ा अजीब मगर बड़ा लुभावना....

परदेसी—कैसा था वह सपना ?

नयना—पूछो मत परदेसी ! चारों ओर खिले फूल, हँसता चाँद, धीरे-धीरे बहती हुई हवा और गलबहियाँ डाले बैठे थे हम-तुम....

और नयना क्षणभर के लिये स्वप्न की उस मादक अनुभूति में खो-सी जाती है। परदेसी की मुद्रा अत्यन्त गम्भीर हो उठती है।

नयना—(खोया स्वर) तुम न जाओ तो क्या नहीं बनेगा ?

परदेसी—नहीं नयना !....कभी रुक सकने लायक हुआ तो जरूर तुम्हारे दरवाजे तक आऊँगा....

नयना—(भींगा स्वर) तो कब जा रहे हो तुम ?

परदेसी—शायद कल सुबह चला जाऊँ...

तभी—

बच्चा ! बूढ़े को भीख मिल जाय....(दरवाजे पर से किसी की आवाज आती है)

आवाज सुनकर परदेसी चौंक पड़ता है। दौड़कर बाहर आता है। एक बूढ़ा भिखारी खड़ा है। एक ऊंगली से वह अपना मस्तक खुजला रहा है।

नयना—कौन है परदेसी !

परदेसी—भिखारी है नयना ! कुछ हो तो लाकर दे दो....

नयना भीतर जाकर दीपक जलाने लगती है।

भिखारी परदेसी के निकट आ जाता है।

भिखारी—बेटा लाल ! जरा भी समय नहीं है। जमनापुर से पुलिस चल चुकी है। तुम भागो यहाँ से.... अभी भागो....लो ये कपड़े, रास्ते में पहन लेना....दाढ़ी-मूँछें फेंक देना....उधर बरगद के पीछे एक साइकिल रखी है....जल्दी करो....

तभी एक कटोरे में थोड़ा-सा आटा लेकर नयना पहुँचती है।

नयना—क्या कह रहा है यह भिखारी परदेसी ?

परदेसी—कुछ नहीं, बेचारा दिन भर का भूखा है....

भिखारी भीख लेकर दुआयें देता हुआ चला जाता है।

नयना और परदेसी अन्दर आते हैं।

परदेसी—मैं चल रहा हूँ नयना !

नयना—कहाँ ?....किधर ? क्यों ?

परदेसी—जहाँ भाग्य ले जाय !...अब मैं रुक नहीं सकता.... मुझे जाना ही होगा....अभी, इसी वक्त...

नयना—तुम तो कल सबेरे जाने को कह रहे थे परदेसी !.... रात के अँधेरे में ठोकर खा जाओगे। रुक जाओ, दिन के उजाले में चले जाना....

परदेसी—नहीं नयना ! मैं इसी समय जाऊँगा। मुझे रोकोगी तो बहुत बुरा होगा....

नयना—(रुआँसा स्वर) परदेसी !....नहीं रुकोगे तो रोकूँगी भी नहीं....कल बसन्त की बहार लेकर आये और आज पतझड़ देकर

जा रहे हो, इसे याद रखना। दूर देश में कभी दिल के कोने में मेरी छाया झाँके तो याद कर लिना....बस!

परदेसी—नयना! मैं तुम्हारा उपकार कभी न भूल सकूँगा...

नयना—निर्मोही! नयना के उपकार की याद करके क्या करोगे? नयना की याद आये तभी समझूँगी कि मेरी आँखों के आँसू सफल हुए, नहीं तो समझ लूँगी कि खारे जल से नहलाने पर पत्थर के देवता नहीं पसीजते....

परदेसी—तो चलूँ नयना! मुझे देर हो रही है....

नयना—जाओ....आँखों से दूर जा रहे हो, मगर दिल से भी निकल जाओ तब जानूँ....

परदेसी दरवाजे की ओर बढ़ जाता है।

नयना असीम वैकल्य से भर अपने हाथ कलेजे पर दाब लेती है।

नयना—परदेसी!....मेरे बाबू!....जरा सुन लो....

परदेसी—(रुक कर) क्या कहती हो नयना?

नयना—कहने को तो बहुत कुछ हैं परदेसी! मगर कहूँगी सिर्फ एक बात....एक बार....केवल एक बार परदेसी! तुम जादू की दाढ़ी हटाकर अपनी वह जादूभरी सूरत दिखा दो। बड़ा उपकार मानूँगी बाबू! तुम्हें बाँध न सकी तो तुम्हारी सूरत ही बाँध कर रखूँगी नयनों में....

परदेसी—लो, देखो....

लाल अपनी दाढ़ी-मूँछे हटाकर नयना को अपनी असली सूरत दिखाता है। नयना विभोर होकर देखती रहती है। आँखों से आँसू की धारा बहती रहती है।

नयना—मेरे परदेसी! मेरे बाबू!

दौड़कर नयना उससे लिपट जाती है। परदेसी उसका सर सहलाने लगता है। उसकी काली लटों का चुम्बन लेता है।

परदेसी— (रुँधा स्वर) नयना !....खुश रहो....

लाल अपनी दाढ़ी-मूँछें पूर्ववत लगा बाहर निकलजाता है।

नयना के सिसकने की आवाज देर तक सुनाई पड़ती है।

अंधेरे में किसी के भागने की आवाज के साथ ही गाँव की कच्ची सड़क दीख पड़ती हैं।

लाल चला जा रहा है, तेजी के साथ, कभी-कभी दौड़ भी पड़ता है। कुछ दूर जाकर वह अपनी दाढ़ी-मूँछें उतार फेंकता है और जल्दी-जल्दी कपड़े भी बदल डालता है।

भिखारी के कथनानुसार बरगद के पीछे एक सायकिल भी मिल जाती है। अंधेरी रात है और सुनसान पगडण्डी। रास्ता ऊबड़-खाबड़ जरूर है मगर लाल के पैरों का जोर पाकर सायकिल पूरी तेजी के साथ भागने लगती है।

एकाएक लाल की सायकिल की पिछली पहिया खड़खड़ाने लगती है। वह उतर पड़ता है। देखता है हवा निकल गई है।

रात के समय पंचर बने तो कैसे, लाचार लाल पैदल ही सायकिल ठेलता हुआ आगे बढ़ता है।

पगडंडी के दोनों ओर दीर्घाकार वृक्ष हैं, जिससे और भी अन्धकार हो रहा है। लाल को अगर डर है तो केवल यह कि पुलिसवाले देख न लें। सहसा किसी की तड़प सुनाई पड़ती है—खबरदार ! रुक जाओ....

लाल चौंक कर रुक जाता है। बगल के पेड़ों के पीछे से खड़खड़ाहट होती है और दूसरे ही चण लाल के चारों ओर पचीसों सशस्त्र कांस्टेबल आ खड़े होते हैं।

एक टार्च तीव्र प्रकाश फेंकती, लाल के मुख पर जल उठती है।

कौन हो तुम ? कहाँ से आ रहे हो ? (एक रोबीला स्वर)

लाल—(स्थिर स्वर) आप लोग कौन हैं ?

सामने एक पुलिस खड़ा हैं, हाथ में रिवाल्वर ताने।

पुलिस—(आगे बढ़ते हुए) पुलिस के आदमी ... मैं जमनापुर थाने का थानेदार हूँ...

लाल—मेरा नाम लालचन्द है और मैं मिस्टर शर्मा के बगल में रहता हूँ...

थानेदार—आप कहाँ से आ रहे हैं ?

लाल—अपने गाँव गया था, रास्ते में सायकिल ंचर हो गई। बड़ी दूर से पैदल ही चला आ रहा हूँ....अगर आप लोगों के पास सामान हो तो मेरी मदद कर दें। बड़ी कृपा होगी....

थानेदार—देखिये....हम लोग एक खूनी की तलाश में हैं। आपको हमारे साथ चलना होगा। हम मिस्टर शर्मा से आपका परिचय जानकर ही आपको रिहा कर सकते हैं....

लाल—बहुत परेशान हूँ....अगर जाने दें तो बड़ी मेहरबानी....

थानेदार—हम मजबूर हैं मिस्टर लालचन्द !

लाल—तो जैसी आपकी इच्छा....

थानेदार इशारा करता है।

दो सिपाही लाल के दोनों तरफ तेजी से चल पड़ते हैं।

रात के सन्नाटे में उतने पैरों की सम्मिलित आवाज बड़ी भयानक लगती है।

● ●

सोया पड़ा लखनपुर कोलाहलमय हो उठता है। स्त्री-बच्चों के बीच, पुलिसवालों के मुख से निकली अश्लील गालियाँ।

बरतनों के टूटने-गिरने की आवाज।

मशालों की रोशनी से दिन-सा उजाला फैल गया है। गाँव के बीचो-बीच, मैदान में बीसों सशस्त्र कान्सटेबिलों से घिरे, जमनापुर के थानेदार, सामने कतार में खड़े किये गये ग्रामीणों से कुछ पूछ-ताछ कर रहे हैं।

पास ही अपनी टूटी सायकिल से टिका लाल खड़ा है, मुख

पर शान्ति की आभा लाने की चेष्टा करता हुआ।

उसी समय एक नायब दस-पन्द्रह कान्सटेबिलों के साथ आता है। थानेदार साहब को सलाम करता है।

पीछे-पीछे पचीसों ग्रामीण भय से कांपते हुए आ रहे हैं।

थानेदार—कुछ पता लगा नायब साहब ?

नायब—जी नहीं....हम पूरे गाँव की तलाशी ले चुके हैं.... (नायब एक ग्रामीण की ओर इशारा करता है) यह आदमी कहता है कि उसने बूढ़े जियावन के घर में एक दाढ़ी-वाले आदमी को देखा था....

थानेदार उसके पास आता है।

थानेदार—तुम्हारा नाम ?

वह—मनोहर, सरकार !....मैंने देखा था माई-बाप ! झूठ नहीं कहता....जियावन काका के घर में वह कल रात और आज दिन भर तक रहा....

थानेदार—(जियावन की ओर बढ़ते हुये) ठीक है....

मनोहर की बगल में ही नयना खड़ी है।

नयना लाल को देखती है। पहचान भी जाती है एक ही नजर में, फिर भी वह अपनी नजरें इस तरह से घुमा लेती है, जैसे वह आदमी उसके लिये एकदम अपरिचित हो।

अगर वह सावधानी न दिखाती तो उसकी बगल में खड़ा हुआ चालाक मनोहर अवश्य ही सारा भेद जान जाता।

मनोहर—नयना !....

वह फुसफुसाते हुए नयना का हांथ पकड़ लेता है।

नयना—क्या है ?

मनोहर—वह आदमी डाकू था, शाम तक उसे मैंने तेरे साथ देखा था....तू जरूर जानती है कि वह कहां भागा है। अगर मैं पुलिस से यह बात कह दूं तो वह तुझसे अच्छी तरह से समझ ले

....बोल, मेरी बनेगी या नहीं ?

नयना—(घृणापूर्वक) तेरी बने मेरी जूती...चुप रह, नहीं तो मैं चिल्ला पड़ूंगी....

थानेदार जियावन के सामने खड़ा है।

थानेदार—क्यों बूढ़े ! वह आदमी कौन था ?

जियावन—क्या जानूं सरकार ! परदेसी समझ कर ही जगह दे दी थी....जानता होता कि वह ऐसा आदमी है, तो कभी टिकने नहीं देता....

थानेदार—वह गया कब ?

जियावन—शाम को खेत पर से जब मैं लौटा तो बिटिया ने बताया कि वह चला गया....

थानेदार—(ऊँचे स्वर में) इसकी बेटी कौन है ?

नयना सामने आ खड़ी होती है। थानेदार उसे देखता है।

थानेदार—क्यों री छोकरी ! तू उस आदमी को जानती है ?

मनोहर—यह जरूर जानती है सरकार ! वह इसका चहेतू है। खूब घुल-मिल कर रहते थे दोनों....

थानेदार—यह बात है....नायब साहब ! गाँववालों को जाने दो, सिर्फ इस बूढ़े और छोकरी को रोक लो....

भीरु ग्रामीण आज्ञा पाते ही भाग जाते हैं।

थानेदार—देखो....वह आदमी डाकू और खूनी है। उसका पता बता दोगे तो काफी ईनाम मिलेगा....

जियावन—सरकार ! जानता होता तो जबान खोल देता... मैं कुछ भी नहीं जानता हजूर ! दुहाई है सरकार के इकबाल की....

थानेदार—चुप रह....तू शायद नहीं जानता बूढ़े कि उसे अपने घर में रखकर तूने कितना बड़ा जुर्म किया है....अब से भी अच्छा है कि बता दे, नहीं तो इसका नतीजा बहुत बुरा होगा...

जियावन—जो हो सरकार ! मर्जी आपकी...हम बेकसूर

है....उसका नाम तक तो जानते ही नहीं....

थानेदार—तू भी कुछ नहीं बतायेगी छोकरी ?

नयना—मैं क्या जानूं सरकार ?

नायब—ये ऐसे नहीं मानेंगे, लात के देवता बात से नहीं मानते

थानेदार—ठीक है, दानसिंह ! तुम जरा इस बूढ़े की झोपड़ी को मशाल से गर्म तो कर दो....

एक सिपाही मशाल लेकर आगे बढ़ता है।

घास-फूस की झोपड़ी मशाल चूम कर ज्वाला फेंकने लगती है। सारा गाँव लाल-लपटों से उजाला हो उठता है।

जियावन चुपचाप अपने बुढ़ापे की छाँह को धुआँ बनते देखता रहता है। नयना भी निश्चल है। लाल भी स्तब्ध खड़ा रहता है।

थानेदार—(गरजकर) अब भी नहीं बतायेगा ? दो आदमी इस छोकरी के दोनों पाँव पकड़ लो और दो आदमी दोनों हाथ....हाँ, ठीक है....अब खींचो अपनी-अपनी ओर....देखो, गिरने न पावे....

नयना चीखने लगती है। जियावन राम-राम जपने लगता है।

नयना की असहाय दृष्टि एक क्षण के लिए लाल की आँखों से मिलती है। लाल अपने नेत्र बन्द कर लेता है।

थानेदार—(चीखकर) और खींचो....

जलती झोंपड़ी की लपटें नयना की चीखों से काँपने लगती हैं। लाल दाँत पीसता है। नयना का अपने लिए असीम त्याग देखकर, उसका क्रान्तिकारी हृदय भी डिग उठता है।

थानेदार—छोड़ दो उसे....अब इस बूढ़े को पेड़ पर उल्टा टाँग कर कोड़े लगाओ...

कोड़े लगने लगते हैं। चार-पाँच बार तक तो जियावन चिल्लाता है, फिर चीखें बन्द हो जाती हैं। कोड़े बराबर बरसते रहते हैं।

थानेदार—ठहरो....अरे, यह बूढ़ा तो मर गया। नायब

साहब देखो तो....

नायब देखता है।

नायब—जी हाँ...मर गया....

नयना रोने लगती है। थानेदार ठठा कर हँस पड़ता है।

थानेदार—चलो सब लोग....बूढ़े की लाश भी ले लो...इस छोकरी को हिफाजत से ले चलो....

पुलिस जियावन की लाश उठाने के लिए गाँव के चार-छः आदमियों को ले लेती है। नयना की आँखों से आँसू सूख चुके हैं। लाल की ओर देखती है तो अनजाने ही दो-एक बूँदे झलक उठती हैं। पर अहसास होते ही वह अपने को झकझोर-सी डालती है। एक लम्बी साँस के साथ ही आँखों का गीलापन सूख जाता है, फिर वहीं शून्यता घिर आती है। पुलिस से घिरा, धीरे-धीरे चलते लाल के अन्तर का कोना-कोना नयना के अपूर्व और महान् बलिदान से हाहाकार कर उठता है पर वह तनिक भी अस्थिर नहीं दीख पड़ता।

जियावन की जली हुई झोपड़ी से अब भी धुआँ निकल रहा है।

थानेदार—मिस्टर लालचन्द !

लाल—हूँ....

थानेदार—यह सब देखकर दुख होता है आपको ?

लाल—नहीं, आप लोग तो अपना कर्त्तव्य कर रहे हैं....

उसका स्वर विद्रूप और पीड़ा से तनिक तीव्र हो आता है।

थानेदार पुनः कुछ नहीं कहता। नयना एक बार घूर कर लाल की ओर देखती है। लाल सहम जाता है।

गाँव में मौत का-सा सन्नाटा छा जाता है। मशालें चमकती रहती हैं। पुलिस वालों की बूटें चहकती रहती हैं।

● ●

प्रातःकाल लाल जमनापुर के थानेदार के सामने पेश किया

जाता है।

थानेदार—(एक कुर्सी की ओर इशारा करते हुये) बैठिये....

लाल बैठ जाता है।

थानेदार—आपका कहना है कि आप मिस्टर शर्मा के पड़ोसी हैं?

लाल—जी हाँ....उनकी बेटी रेखा मेरी मित्र है....

थानेदार—ठीक है, मिस्टर लालचन्द! आप बुरा न मानें। हम आपको पुलिस के साथ मिस्टर शर्मा के पास भेज रहे हैं। वे जो उचित समझेंगे, करेंगे....

लाल—कृपा होगी आपकी....

थानेदार—देखिये, आप बुरा न मानेंगे। हमारा फर्ज बड़ा खतरनाक होता है। आपको जो तकलीफ हुई उसके लिए माफी चाहता हूँ....हम भी तो गुलाम ठहरे। कल गाँव में जो कुछ भी जुल्म किया गया, उसका हमें हुक्म मिल चुका था....आप चाय तो पीते ही होंगे?

लाल—धन्यवाद! आप तकलीफ न करें....मैं जल्द से जल्द घर पर पहुँचना चाहता हूँ....

थानेदार—अच्छी बात है....ओ दानसिंह!

एक लम्बा-चौड़ा कांसटेबिल आ खड़ा होता है।

थानेदार—देखो....तुम मिस्टर लालचन्द को लेकर एस० पी० साहब के पास जाओ और उनसे कल की सारी घटना बता देना....और उस छोकरी के बारे में जो हुक्म हो, जल्द लेकर आना....

दानसिंह—(झुककर सलाम करते हुये) जो हुक्म...

लाल और दानसिंह के मुड़ते ही सामने, दूर पर मिस्टर शर्मा का बँगला दिखाई पड़ता है। बँगले के सामनेवाली सूनी सड़क पर सूरज की किरणें खेल रही हैं।

सड़क पर एक भिखारी तानपूरे पर गाता हुआ जाता दीख

पड़ता है। वह अत्यन्त मधुर स्वर में गा रहा है—

श्री रामचन्द्र कृपालु भजुमन हरण भव-भय दारुणं,
नव कंज-लोचन, कंज-मुख, कर-कंज, पद कंजारुणं।
कंदर्प अगणित अमित छवि, नवनील नीरद सुन्दरं,
पट पीत मानहु तड़ित रुचि शुचि नौमि जनक सुतावरं।
भजु दीनबन्धु दिनेश दानव-दैत्य वंश-निकंदनं,
रघुनंद आनंदकंद कोशलचंद दशरथ-नंदनं।
सिर मुकुट कुण्डल तिलक चारु उदारु अंग विभूषणं,
आजानु भुज शर-चाप-धर, संग्राम-जित-खरदूषणं।
इति वदति तुलसीदास शंकर-शेष-मुनि-रंजनं,
मम हृदय कंज निवास कुरु, कामादि खल-दल-गंजनं।

राग गौरी पर सधा हुआ तुलसी का राम-स्तवन वातावरण को पावन बना रहा है।

उसी समय दानसिंह के साथ आता लाल दीख पड़ता है। भिखारी का गाना रुक जाता है।

चकित-भाव से लाल की ओर देखता है वह।

लाल—बाबा, प्रणाम!

भिखारी—आयुष्मान् भव वत्स!

भिखारी खड़ा रह जाता है, लाल और दानसिंह मिस्टर शर्मा के बँगले की ओर बढ़ते हैं।

उधर मिस्टर शर्मा के कमरे में रेखा परेशान तथा झुँझलाई-सी दाखिल होती है।

रेखा—पिताजी! देखिये न, लाल भैया अभी तक नहीं आये....सौ बार तो दौड़ चुकी, ताला बन्द तो बन्द। छत पर से कूद कर जाती हूँ तो बिगड़ते हैं....आज तो मैं आपसे ही शेक्स-पीयर के साहित्य पर बहस करूँगी....

मिस्टर शर्मा चाय पी रहे हैं। वे रेखा को अपने पास बैठा

लेते हैं।

मि० शर्मा—तू तो पता नहीं किस चीज की बनी है रेखा। साहित्य की बात तो लाल ही तुमसे कर सकता है....नैपोलियन की बहादुरी पर बहस कर, तो मैं तैयार हूं....

रेखा—आप इतिहास जानते हैं पिताजी ?

मि० शर्मा—बी० ए० में मैंने हिस्ट्री ही ले रखी थी....

रेखा—अच्छा तो अंग्रेज हिन्दुस्तान में कब आये, कैसे आये, क्यों आये....१८५७ का गदर कब हुआ, कैसे हुआ ? बताइये....

मि० शर्मा—चुप रह रेखा !...अंग्रेज चाहे जैसे आये, उनका शासन यहाँ पर होना बहुत जरूरी था....उनके आने के पहले यह देश फूट और आपसी दुश्मनी से बरबाद हो रहा था। आज तो शेर और बकरी साथ-साथ पानी पीते हैं....

रेखा—शेर की आत्मा चाहे जितनी भी कुचल दी जाय परन्तु वक्त आने पर वह जागरुक होगी ही पिता जी ?

मि० शर्मा—रेखा तू बेकार की बात ले बैठती है.. तुझे कोई काम की बात तो सूझती ही नहीं....

तभी चपरासी जमनापुर थाने से एक पुलिस के आने की सूचना देता है। तुरन्त ही दानसिंह और लाल पेश किये जाते हैं।

लाल को देखते ही रेखा चीख पड़ती है।

रेखा—लाल भैया ! आ गये तुम ?

लाल—मैं कैद में हूं रेखा !

रेखा—कैद में ?....पिताजी इन्हें किसने कैद किया ?

मि० शर्मा—क्या बात है ?

दानसिंह—कल ये साहब लखनपुर से एक मील उत्तर पर हमें पन्चर सायकिल लिये पैदल आते हुए मिले थे....थानेदार साहब ने इन्हें रोक लिया था....

लाल—मैं अपने गाँव गया था बाबूजी ! लौटते वक्त पहिया

पञ्चर हो गई। लाचार पैदल ही आ रहा था कि पुलिस के हाथ पड़ गया....

मि० शर्मा—अजी ! यह लड़का तो मेरा पड़ोसी है। नाहक ही परेशान किया बेचारे को....

दानसिंह—हजूर ! माफ करें... हम कर ही क्या सकते थे ?

मि० शर्मा—लाल बेटा, तुम जाओ...

लाल—चलो रेखा ! चलती हो ?

लाल और रेखा चले जाते हैं।

मि० शर्मा—कल का हमला कारगर हुआ या नहीं ?

दानसिंह—जी नहीं....धावा हुआ तो था बड़ी सरगर्मी से, मगर कुछ हाथ नहीं लगा। जुल्म भी किया गया। बूढ़े की जान चली गई, मगर आसामी हाथ नहीं आया। और न तो उसकी बेटी ने उसका पता ही बताया....

मि० श —तुम लोगों का अनुमान है कि वह लड़की फरार व्यक्ति को अ ा तरह जानती है, बताती नहीं ?

दानसिंह—जी हाँ, हजूर !

मि० शर्मा—तब तो उस लड़की का कलेजा बहुत सख्त मालूम पड़ता है, जो अपने प्रेमी के लिए अपने बाप को भी मरते देख सकती है....

दानसिंह—बड़ी चालबाज लड़की है हजूर !

मि० शर्मा—तुम जाओ और थानेदार साहब से कहना कि उस लड़की को सख्त पहरे में रखें... मैं जल्द ही उस लड़की के बारे में अपना हुक्म भेजूंगा....समझ गये न ?

दानसिंह—जी हजूर !

दानसिंह सलाम कर चला जाता है।

मिस्टर शर्मा कुछ देर तक न जाने क्या सोचते रहते हैं, फिर एक कागज पर कुछ लिखने लगते हैं।

लिखकर वे कागज जेब में रख लेते हैं।

मि० शर्मा—(पुकारते हुए) दाई!

दाई—जी आई....

दाई पास आकर खड़ी हो जाती है।

मि० शर्मा—मैं काम से बाहर जा रहा हूँ। खाने का समय हो जाय तो रेखा को बुलाकर खिला देना, नहीं तो शैतान शाम तक लाल से बहस ही करती रह जायगी....

मिस्टर शर्मा उठ कर चले जाते हैं।

दाई भीतर चली जाती है तभी रामलाल वहाँ आता है।

रामलाल—हजूर! ओ हजूर! बाइगाड, बड़ी मार्वेलस खबर है....आप किधर हैं?

कोई आवाज नहीं आती है।

रामलाल—यह कमरा भी ऐसा है कि आवाज यहीं गूँजकर रह जाती है...

रामलाल अन्दर घुस जाता है।

रामलाल—बाइगाड, आप कहाँ हैं हजूर!

दाई हाथ में झाड़ू लिये निकलती है।

दाई—घर में क्यों घुसे आ रहे हो....

रामलाल—खाँव-खाँव मत करो, बड़ा जरूरी काम है....

दाई—जरूरी काम है तो वहीं से क्यों नहीं पुकारा?

रामलाल—पूरे साढ़े [illegible] दफा पुकारा था, मगर नो रिप्लाई....

दाई—मैं तुमको अच्छी तरह जानती हूँ....अब कभी घर के अन्दर पैर रखा तो टाँगे तोड़ दूँगी....

रामलाल—हमारी टाँगों पर मिहरबानी मत करो दाई! अब सड़क पर से ही पुकारा करूँगा....

दाई—तू जाता है या नहीं....

रामलाल—मैं अभी अबाउट टर्न हो जाता हूँ, मगर हजूर कहाँ

हैं, यह तो बता दो....

दाई—हजूर बाहर गये....

रामलाल—बाइगाड, इतनी जरा-सी बात बताने में तुम्हारा यह डेंजरस हाल है तो....(घूम कर जाता हुआ) यह दाई भी पूरी बिल्ली है....हजूर से कह कर हथकड़ी भरवा दूं कभी तो सारी ऐंठन गुम हो जाय....

दाई—जा-जा, बड़ा आया है हथकड़ी वाला....

रामलाल—बाइगाड, बूढ़ी हो गई है मगर कान अभी तक बरकरार हैं....

और रामलाल चला जाता है।

● ●

लाल के कमरे में लाल और रेखा में झड़प हो रही है।

रेखा—तुम क्यों चले गये थे ?

लाल—माँ को देखने गया था रेखा !....तुमसे बता नहीं सका....नाराज मत हो इस जरा-सी बात पर....

रेखा—इतनी बार तुम्हारे बन्द दरवाजे तक दौड़ी, जैसे मेरे पैर न हुए लोहे के टुकड़े हो गये कि दर्द ही न करें...

लाल—दर्द हो रहा हो तो लाओ पैर दबा दूं....

रेखा—रहने दो जी ! बड़े आये हो जले पर नमक छिड़कने-वाले....चाहे कहीं भी जांय, आकर झट बहाना कर देंगे कि गांव गया था....लाल भैया ! रेखा को इतनी भोली मत समझना....बताओ तो, गांव गये थे न ?....मां कैसी हैं ?....

लाल—बिल्कुल अच्छी !

रेखा—बिल्कुल गलत....जाड़े के मौसम में बूढ़े लोग कभी अच्छे नहीं रह सकते...कम से कम जुकाम-खांसी की शिकायत तो रहती ही है....

लाल—मां को खांसी का रोग तो बहुत पुराना है रेखा !

रेखा एकाएक चुप होकर गम्भीर बन जाती है।

लाल को उसकी वह गम्भीरता खटकती है।

लाल—रेखा !....

रेखा—बोलो न लाल भैया !....

लाल—क्या सोच रही हो ?

रेखा—सोच रही हूँ कि तुम्हें कभी मुझ पर विश्वास होगा या नहीं ?...कभी तुम अपना हमदर्द समझोगे या नहीं ?....

लाल—तुम्हारे और माँ के सिवा मेरा अपना है ही कौन रेखा ?....तुम चाहे जो समझो, मेरा विश्वास तो तुम्हारे प्रति कभी कम नहीं हुआ....

रेखा—रहने दो लाल भैया ! मुँह देखकर बातें करने की आदत अच्छी नहीं....घर जाने लगे तो रेखा मर नहीं गई थी, जो कह नहीं सके कुछ....कहकर जाते तो रेखा तुम्हारे पैरों में बेड़ी न डाल देती... कहकर जाना मंजूर न था तो बहाना बना दिया.... या घर जाने के बहाने कहीं और चले गये होगे, कौन ठिकाना तुम्हारा ?....खैर छोड़ो इन बातों को चाय बना दूँ पियोगे ?

लाल—रहने दो रेखा ! क्यों तकलीफ करोगी ?

रेखा—लाल भैया ! प्याले में जहर नहीं घोल दूँगी, विश्वास रखो....पिताजी भले ही जज साहब के खूनी की खोज करें, रेखा तो जानकर भी अनजान बनी रहेगी....

लाल—मेरी तबीयत खट्टी हो जाती है तुम्हारी बातों से....

रेखा—चाय पी लो लाल भैया ! चीनी जरा ज्यादा कर दूँगी तो खट्टापन जाता रहेगा....

लाल के खीझने पर ध्यान न देकर रेखा उठकर स्टोव जला चाय रख देती है। कुछ देर तक दोनों चुप रहते हैं। स्टोव तेजी से जलता रहता है। रेखा आग की लपटें देखती रहती है।

रेखा—लाल भैया !....आग की ये लपटें देख रहे हो न ?

लाल—(गम्भीर स्वर) देख तो रहा हूँ... अन्धा हूँ क्या ?

रेखा—इन्सान के दिल में भी कभी ऐसी लपटें उठ सकती हैं ?

लाल—तेरे ही दिल में उठती होंगी पागल लड़की !....

रेखा—जो कहो लाल भैया ! पागल ही सही.... अगर मेरे दिल में लगी हुई आग को देख पाते तुम, तो कहते कि मैं क्या हूँ, क्या नहीं हूँ....जो आँखें बन्द कर ले और देखना न चाहे, उसे आग की एक छोटी-सी लपट तो क्या सूर्य का गोला भी नजर नहीं आयेगा....है न लाल भैया ?

लाल—चाय का पानी खौलकर बहा जा रहा है और तू बातें बनाने बैठी है....हट, मैं बनाये लेता हूँ....

रेखा चाय की पत्ती डालकर केतली उतार लेती है। थोड़ी देर बाद दोनों मेज पर बैठकर चाय पीने लगते हैं।

लाल—रेखा ! तू मुझसे ऐसी बातें मत किया कर....

रेखा—कैसी बातें लाल भैया ?

लाल—यही, पागलों जैसी...

रेखा—पागलों की बातों का भी कुछ तो मतलब होता ही है लाल भैया ! जो न समझे उसे कौन समझाये ?....अगर तुम्हें मेरी बातें अच्छी नहीं लगती, तो मैं अब कुछ न कहूँगी कभी....हाँ ! तुमने एक बात सुनी या नहीं ?... शायद न सुन सके हो, क्योंकि उसी दिन तो तुम अपने गाँव चले गये थे....

लाल—(गम्भीर हो) कौन-सी बात ?

रेखा—जज चाचा जो थे न, उनको किसी ने गोली मार दी....

सुनकर लाल चौंक पड़ता है। मगर चुप रहता है।

इस वाचाल लड़की से क्या वह बहस करे, समझ नहीं पाता है।

रेखा—भला उन्हें किसने गोली मारी होगी लाल भैया ?....

लाल—(झल्ला कर) मैं क्या जानूं ?

रेखा—पिताजी भी वहाँ मौजूद थे, जज चाचा के एकदम

पास....अगर गोली जरा भी बहक जाती तो उन्हें जा लगती....
मगर गोली चलानेवाला नौसिखुआ तो था नहीं, है न....

लाल—हाँ, है तो... अच्छा अब चुपचाप चाय पी ले और फुट यहाँ से....अभी, चल उठ...

रेखा—(अत्यन्त गम्भीर मुद्रा) लाल भैया ? बुरा न मानो, तुम तो इतने ऊपर उठ चुके हो कि तुम्हें जमीन की हर चीज बहुत छोटी नजर आती है....कभी मुझे पास से देखने की कोशिश करो....कभी निकट से देख पाओ मुझे, तो सच कहती हूँ भैया ! बड़ा आश्चर्य मानोगे....तुम दूर आसमान पर उड़ो और मैं जमीन पर चलकर तुम्हारी छाया पकड़ूँ, यह अब मुझसे नहीं होगा....मुझे भी अपने साथ ले चलो लाल भैया ! मुझे उड़ने की शिक्षा दो, मुझे भी महान बनाओ.... मुझे तुम कब तक ठुकराते रहोगे ?....

लाल के कन्धे पर रेखा अपना सर टेक देती है।

लाल उसका सर सहलाने लगता है।

लाल—ठोकरों से घबड़ा मत रेखा ! सुर्खरू होता है इन्सां ठोकरें खाने के बाद....हिना जैसा रंग लाना हो तो पत्थर पर अपनी जान पटक दो....देखो, रंग आता है या नहीं....

रेखा—(रुँधा स्वर) तुम कभी आजमाओ तो लाल भैया.... कभी ठोकरें मारकर देखो तो, रेखा सुर्खरू हुई या नहीं ?...तुम दूर-दूर रहोगे तो रेखा की ताकत का कैसे अन्दाजा लगा सकोगे ?....तुमने सुना है कि नारी का कलेजा पानी-सा तरल होता है, परन्तु क्या कभी तुमने किसी नारी का हृदय टटोल कर देखा है ?....लाल भैया ! नारी पुरुष की परिपूरक है। पुरुष सबल हुआ तो नारी की प्रेरणा उसे और सशक्त करती है। अगर पुरुष निर्बल हुआ तो नारी स्वयं भी बलहीन हो जाती है....जो नारी तुम जैसा बेटा पैदा कर सकती है, वह जिन्दगी के हर दौरान में

तुम्हारा साथ क्यों नहीं दे सकती ?....

लाल— मेरा माथा थक गया है रेखा ! अब तुम जाओ....हम दोनों नारी पुरुष के सम्बन्ध में फिर कभी बातें कर लेंगे....

रेखा—(कंपित स्वर) तुम अगर यह चाहते हो लाल भैया कि मैं तुम्हारे यहाँ न आऊँ, तो वह भी सही। रेखा किसी के गले की ढोल होकर नहीं बजना चाहती...मेरी बातें तुम्हें अच्छी नहीं लगती तो अब कभी तुमसे बातें करने नहीं आऊँगी....तुम्हें जब कभी मेरी आवश्यकता लगे, जरा बगल में झांक लेना तो मुझे अपने कन्धे के पास ही पाओगे....

रेखा उठकर चलने लगती है।

लाल—(रोककर) रेखा ! रूठकर न जाओ....तुम जब चाहो, मेरे पास आ सकती हो। लाल अपनी रेखा से कभी अलग नहीं रहा....अगर तुम रूठकर अलग रहोगी भी, तो लाल को पंगु बनाकर ही। मुझे सजग देखना चाहो तो तुम्हें मेरी कसम, रूठ कर मत जाओ रेखा !

रेखा—रूठकर नहीं जा रही हूँ लाल भैया ! यह देखने के लिये अलग हो रही हूँ कि रेखा को तो कदम-कदम पर लाल ही नजर आता है, मगर क्या लाल को भी अपने पाँव तले की क्षीण रेखा दिखाई पड़ती है कभी ?....मुझे देखना है कि लाल से अगर रेखा अलग कर दी जाय तो लाल क्या लाल ही रह जाता है ?....क्षमा करना लाल भैया ? चलती हूँ....

लाल देखता है, जाती हुई रेखा की आँखें भर आई हैं और वाणी तो जैसे आँसुओं के सागर में डूब चुकी है। लाल रोकता नहीं और रेखा कमरे से बाहर हो जाती है। बाहर आकर रेखा पुनः उस रात वाले भिखारी को देख ठमक जाती है।

भिखारी—(गिड़गिड़ाते हुये) कुछ दे दो बिटिया ! बड़ा पुन्य होगा....

रेखा—तुम बड़े वैसे हो जी, भीख माँगते शर्म नहीं आती। लाल भैया ने एक दिन दे दिया, तो अब तुम्हारी आदत पड़ गई ?....जाओ आज कुछ नहीं मिलेगा....

रेखा की आवाज सुन, लाल अन्दर से बाहर आ जाता है।

लाल—दे दूँ कुछ रेखा ! बेचारा बड़ा बूढ़ा है....

रेखा—दे न दो, रेखा से क्या पूछते हो ?

रेखा चली जाती है बिना एक क्षण रुके।

भिखारी एक ऊँगली से अपना मस्तक खुजलाता है और लाल चारों ओर देखकर धीरे से उसे अपने कमरे में कर लेता है।

भिखारी—लाल !....कल तो तुम बच गये पुलिस के हाथों में पड़कर भी....

लाल—एस० पी० का पड़ोसी होने से यही तो फायदा है....

भिखारी—तभी तो मैं तुम्हें यह मकान छोड़ने नहीं देता.... मगर लाल ! यह रेखा क्या तुम्हारे यहाँ हर रोज आती है ?

लाल—हर रोज नहीं, दिन में कई बार....

भिखारी—उससे सावधान रहना। तुम जानते हो कि नारी के स्वभाव और शक्ति पर मेरा जरा भी विश्वास नहीं....

लाल—मैं जानता हूँ सरदार ! मैं सावधान हूँ....रेखा मेरे रास्ते का काँटा नहीं बनने पायेगी। जिस दिन उसे काँटा बनते देखूँगा, उसे अपने से तो क्या, दुनिया से ही दूर कर दूँगा....

भिखारी—शाबास बेटे ! हाँ, जज का खून हो जाने से तो बड़ा तहलका मच रहा है....सुना तुमने ?....राजधानी से बहुत से अंग्रेज जासूस आ रहे हैं....

लाल—जज का खून....सरदार ! एक बड़ी ही आश्चर्यजनक घटना हो गई है। सुनकर आप विश्वास नहीं करेंगे....

भिखारी—कहो....

भिखारी चकित-सा लाल की ओर निहारने लगता है।

लाल–जज का खून मैंने नहीं, किसी दूसरे ने किया है...

भिखारी—लाल !....कहते क्या हो तुम ?

लाल—बिल्कुल ठीक कह रहा हूँ सरदार !

भिखारी—लाल !....क्या तुम्हारा यह मतलब है कि जज का खून उस दिन तुम्हारे हाथों से नहीं हुआ ?

लाल–जी हाँ....यही मेरा कहना है....

भिखारी—क्यों ?....तो जज मारा कैसे गया ?....

लाल—बात बड़ी विचित्र है सरदार ! जब कि मैं रोशनदान से निशाना लगा ही रहा था, तब तक....

भिखारी—(उत्सुकता से) तब तक क्या हुआ ?

लाल—मेरे सामने वाले दूसरे रौशनदान से बाहर निकले हुए एक रिवाल्वर पर मेरी नजर पड़ी, जो जज को खोपड़ी का निशाना कर चुका था...

भिखारी—फिर ?....

लाल–मैं आश्चर्य में पड़ा ही था कि वह रिवाल्वर गोली फेंक बैठा और जज साहब की खोपड़ी चूर-चूर हो गई....अन्त में मुझे भागना ही पड़ा....

भिखारी—(आश्चर्य से) दूसरे रौशनदान के पास कौन था, तुमने देखा ?

लाल—देखने के लिए ठहरता, तो शायद अब तक यहाँ न होकर कहीं और होता....

भिखारी—तुमने तो बड़ी चिन्ता की बात सुना दी लाल ! कौन था वह, जिसने जज की हत्या की ?....और जज से उसकी दुश्मनी ही क्या थी ?....

लाल—पहले तो मैंने समझा कि आपने इस काम पर किसी और को भी तैनात किया है....बाद को सोचने लगा कि सरदार को मुझ पर कभी इतना अविश्वास नहीं हो सकता....

भिखारी—मैंने दूसरे आदमी से तो इसका जिक्र भी नहीं किया था....मैं बहुत-बहुत हैरान हो गया हूँ, यह कार्य या तो किसी ऐसे आदमी का है जो जज साहब का बहुत पुराना दुश्मन हो, या ऐसे का जो हमारा रकीब हो....मैं इस पर विचार करूँगा...

लाल—और कोई नई खबर सरदार ?....

भिखारी—नई खबर यह कि तुम्हारे कारण वह ग्रामीण लड़की बेचारी आफत में पड़ गई है...पुलिस सहज ही उसका पीछा नहीं छोड़ेगी....

लाल—मगर वह तो मेरे बारे में कुछ भी नहीं जानती सरदार ! नाम तक मेरा तो जानती ही नहीं....केवल एक दिन धोखे से मेरी सूरत देख ली थी उसने और मुझ पर....मुझ पर....

भिखारी—मैं समझ गया, मगर तुम्हारा दिल मजबूत है न ?

लाल—फौलाद की मजबूती पर शक न कीजिये सरदार !.... मैं पत्थर का पुतला न होता तो नयना की चीख सुनकर और उसके बाप की मौत देखकर स्थिर न रहता....नयना का भी कलेजा बड़ा कड़ा है सरदार ! उसका बाप मर गया, उस पर इतना जुल्म हुआ मगर उसकी उँगली मेरी ओर न उठी....

भिखारी—क्या नाम है उस लड़की का ?....नयना !....नाम तो अच्छा है लाल ! (भिखारी तेज आँखों से लाल को देखता हुआ हँसता है) उसका क्या कुछ भी ख्याल तुम्हें नहीं ?

लाल—मेरी परीक्षा आप बहुत बार ले चुके हैं सरदार !.... लाल को केवल इस समय अपनी देश की गुलामी का ख्याल है, और सभी माया-मोह वह भूल चुका है....मुझपर आपको कुछ अविश्वास है क्या ?

भिखारी—नहीं तो...मगर जिस लड़की ने तुम्हारे लिये इतना किया, उसके लिए तुम्हें कुछ न कुछ तो करना ही चाहिये....

लाल—(तत्पर स्वर) आपकी जो आज्ञा हो, उसे करते

दम तक पूरा कर सकता हूं....यों नयना जैसी हजार-लाख लड़कियां भी देश के लिये बलिदान हो जायं तो मेरी निगाह में कम है। आप मुझे क्या करने का हुक्म देते हैं?

लाल के स्वर में दृढ़ता है, जिससे सरदार प्रसन्न हो उठता है।

भिखारी—लाल! उस लड़की को पुलिस के चंगुल से छुड़ाना ही पड़ेगा....

लाल—मैं तैयार हूं....

भिखारी—अभी तक वह जमनापुर थाने में ही बन्द है। लो, यह कागज....देख रहे हो न?....यह जमनापुर के थानेदार के नाम सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस का हुक्मनामा है। मिस्टर शर्मा के दस्तखत की हूबहू नकल हुई है या नहीं?

लाल—मैं तो हैरान हो गया सरदार! मैंने मिस्टर शर्मा की लिखावट देखी है....कमाल हासिल है आपको, कि नकल ने असल को भी मात दे दी....हां, तो मुझे क्या करना होगा?

भिखारी—तुम एक टैक्सीवाले का वेश पकड़ोगे और टैक्सी लेकर जमनापुर थाने जाओगे ...

लाल—मगर उस लड़की को लाकर रखूंगा कहां सरदार। वह मेरे पास न रहे, तभी अच्छा। बड़ी भावुक लड़की है। मैं तो अटल रहूंगा, मगर वह परेशान हो उठेगी मेरी नीरसता पर...

भिखारी—उसे छुड़ाना हमारा धर्म है उसका अब कोई सहारा नहीं। तुम उसे रेखा के साथ रख देना....रेखा तो खुश होगी न....

लाल—बहुत...आपने अच्छी तरकीब बताई। मिस्टर शर्मा के घर रहने से कोई उसे पूछेगा भी नहीं और स्वयं मिस्टर शर्मा भी यह नहीं जान सकेंगे कि यही लड़की जमनापुर थाने में बन्द थी....

भिखारी—तो लाओ, मैं तुम्हारी सूरत बदल दूं....थानेदार से बातें करते समय अपनी आवाज पर ध्यान रखना। गला भारी

करके बोलना....

लाल—बहुत अच्छा...

भिखारी अपनी झोली खोलता है। उसमें भिक्षा के बदले तरह-तरह के सामान भरे हैं।

भिखारी लाल की सूरत बदलने लगता है।

वह लाल की आँखों के चारों ओर तथा गाल पर हल्की स्याही फेरकर झुर्री डाल देता है। गाल की हड्डी उभर आती है। एक छोटी-सी भूरे रङ्ग की मूँछ लगा देता है। आगे के दो दाँत पर पक्का, गाढ़ा काला रङ्ग पोत देता है कि दूर से देखने पर वे दाँत टूटे-से लगें।

थोड़ी ही देर में टैक्सीवालों की पोशाक पहनकर लाल पूरा टैक्सी ड्राइवर बन जाता है।

भिखारी—उस मोड के किनारे तुम्हें एक टैक्सी मिलेगी खड़ी हुई। तुम्हें देखते ही मण्डल का आदमी उतर जायगा और तुम उसे ड्राइव करने लगना....हाँ, वह परवाना ठीक से रख लो....

भिखारी पहले, और कुछ देर के बाद लाल घर से बाहर हो जाता है।

लाल को नियत स्थान पर टैक्सी खडी मिलती है। वह उसके पास चला जाता है। उसे देखकर ड्राइवर धीरे से उतर जाता है और लाल स्टेयरिङ्ग के पास बैठ कर टैक्सी स्टार्ट कर देते है।

थोड़ी ही दूर टैक्सी जाती है कि—

ओ टैक्सी वाले !....(कोई पुकारता है)

वह घूमकर देखता है। रेखा खड़ी है सड़क के किनारे। वह चौंक पड़ता है। चाहता है कि टैक्सी न रोके मगर, रेखा तब तक आगे आ जाती है। लाचार होकर टैक्सी रोक देता है।

रेखा बिना इधर-उधर देखे टैक्सी पर आ बैठती है।

रेखा—पुलिस कप्तान का बंगला !

वह टैक्सी स्टार्ट कर देता है।

रेखा—तुम कब से टैक्सी चला रहे हो ड्राइवर ?

लाल चुप रहता है।

रेखा—(बिगड़कर) बहरे हो क्या जी ?

टैक्सी ड्राइवर—आप ने कुछ पूछा ?

रेखा—मैं पूछती हूँ, तुम यह टैक्सी कब से चला रहे हो ?

रेखा जोर से बोलती है ताकि ड्राइवर सुन ले।

टैक्सी ड्राइवर—यह टैक्सी तो अभी आज ही से चलाने लगा हूँ....

रेखा—और बहरे कब से हुए हो ?

टैक्सी ड्राइवर—जी हाँ....आज ही से....इसके पहले दूसरी टैक्सी चलाता था....

सुन कर रेखा हँस पड़ती है।

रेखा—तुम इतने बहरे हो, तो दूसरी गाड़ी का भोंपू कैसे सुनते होंगे ?

टैक्सी ड्राइवर—भोंपू है हमारी टैक्सी में देखिये न....

टैक्सी ड्राइवर अपना भोंपू दबाकर भों-भों बजाता है।

रेखा हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाती है।

रेखा—(खूब तेज आवाज में) नौकरी करोगे ?

टैक्सी ड्राइवर—सोचता तो हूँ कि नौकरी कर लूँ, मगर बहरे आदमी को कौन नौकरी देगा ?....

रेखा—हमारे पिता जी तुम्हें नौकर रख लेंगे....

टैक्सी ड्राइवर—पिताजी तो मेरे बचपन में ही मर गये थे, अब अकेला ही हूँ....

रेखा—(गम्भीर स्वर) अकेलापन तुम्हें अच्छा लगता है ?

टैक्सी ड्राइवर—केला अच्छा तो लगता है मगर इतने पैसे नहीं पैदा होते कि पेट भर दाना खांय और ऊपर से फल भी.... लड़कपन में मैं बहुत-बहुत केले खाता था....

रेखा का बँगला आ जाता है। उतर पड़ती है वह और मनीबेग से पैसे निकाल कर देने के बाद घूमकर घर चली जाती है।

लाल छुटकारे की सांस लेता है कि रेखा ने उसे पहचाना नहीं।

लाल जाने को सोच रहा है कि—

ओ टेक्सी वाले! रूके रहो, बाईगाड, अभी चलता हूँ....

(बँगले से बाहर भागते हुए रामलालपुकारता है)

तभी रामलाल की दृष्टि रेखा पर पड़ती है।

रामलाल—(रेखा को रोककर) मिस रेखा! यह बिल्ली तो मुझे बेकार काटने दौड़ती है....

रेखा—कौन बिल्ली? दाई की?....

रामलाल—नो, नो, मिस रेखा! बिल्ली नहीं, वह खुद बड़ी बिगड़ैल है। देखते ही दांत निकलकर दौड़ती है। मैं हजूर से इसकी शिकायत करूँगा....

रेखा—मगर पिताजी सुनेगें नहीं उल्टा तुम्हीं को डाट देगें....

रामलाल—ह्वाट? मुझे ही डाँट देगें....वेरी स्ट्रेंज! अच्छा मैं चलता हूँ....बड़ी जल्दी है....

रेखा—टेक्सी वाला बहरा है....जरा तेज आवाज में बोलना....

रामलाल—मैं लाउड स्पीकर की तरह स्पीकूँगा....

रामलाल आकर टेक्सी में बैठ जाता है।

रामलाल—पुलिस लाइन ले चलो जल्दी....

टेक्सी ड्राइवर-पुलिस की गाड़ी यह नहीं है हजूर! टेक्सी है....

रामलाल—(चीखकर) पुलिस लाइन चलना माँगता....

टेक्सी ड्राइवर—समझ गया हजूर!....

टेक्सी चल पड़ती है।

रामलाल—ओ ब्रदर टेक्सी वाले! जरा और तेज....

टेक्सी ड्राइवर—जी हाँ, बहुत तेज चला लेता हूँ....स्पीड और कम कर दूँ क्या?....

रामलाल—नहीं-नहीं, अजीब बहरे से पाला पड़ा। अरे भाई और तेज ले चलो....

टैक्सी ड्राइवर—अच्छा-अच्छा अभी रोक देता हूँ....क्या यहीं उतरेंगे ?....

टैक्सी रुक जाती है।

रामलाल—अबे उल्लू के पट्ठे ! इतना कम सुनाई देता है क्या ?

टैक्सी ड्राइवर—जी हाँ खूब सुनाई देता है....आप बहुत जोर से बोलते हैं...

रामलाल—बाईगाड, ऐसे बहरे ड्राइवर को लाइसेंस किस आफिसर ने दिया....कहता हूँ आम तो सुनता है इमली....

रामलाल उतर कर दूसरी टैक्सी बुलाता है और लाल तेजी से जमनापुर की ओर अपनी गाड़ी आगे बढ़ाता है।

लाल टैक्सी भगाये लिए जा रहा है। जनाकीर्ण सड़क पर उसकी कार की स्पीड और अनवरत हार्न की आवाज आकर्षण का केन्द्र बन जाती है, पर उसे जैसे इन सब से कोई वास्ता नहीं।

क्लोजप में लाल का गम्भीर मुख सामने है चिन्तन में खोया हुआ। विद्युति गति से मुख पर नयना की छाया उभरती है और फिर उसके बलिदान, आत्मत्याग की शृङ्खलायें....

लाल का मुँह विवर्ण हो जाता है।

झटका-सा लगता है और नयना के स्थान पर रेखा की छाया मूर्त्त हो उठती है। और वह कह उठता है—आह, रेखा ....नयना....नयना....रेखा....दोनों अपने आप में अपूर्व हैं परन्तु जो रेखा है, वह नयना नहीं और जो नयना है, वह रेखा नहीं....

बगल से एक लारी निकल जाती है।

लाल चौंकता है। माथे पर पसीने की बूँदें दिखाई देती हैं।

सामने ही जमनापुर थाने की इमारत दीख पड़ती है।

ब्रेक की आवाज।

थाने के दरवाजे पर खड़ा बन्दूकधारी कान्सटेबल चौंकता है। टैक्सी ड्राइवर के रूप में लाल कार से उतर कर आगे बढ़ता है।

टैक्सी ड्राइवर—थानेदार साहब हैं? मुझे कप्तान साहब ने भेजा है...

सुनकर कान्सटेबल में बेहद तेजी आ जाती है।

कान्सटेबल—तुम आओ मेरे साथ....

दोनों थाने के अन्दर आते हैं।

कान्सटेबल—ओ भाई दानसिंह! इन्हें कप्तान साहब ने भेजा है....

दानसिंह पास आता है। वह घूरकर लाल को देखता है।

दानसिंह—मेरे साथ आओ....

लाल थानेदार के सामने लाया जाता है।

थानेदार—क्या है दानसिंह ?

दानसिंह—इस आदमी को मिस्टर शर्मा ने भेजा है....

थानेदार—कहो! क्या खबर लाये हो भाई?

लाल जेब से निकाल कर एक कागज थानेदार के हाथ में देता है। थानेदार कागज उठा देख कर पढ़ने लगता है।

"मैं एक जासूस और कुछ पुलिस सादी वर्दी में भेज रहा हूँ। उस लड़की को तुरन्त इनके साथ कर देना।...."

पढ़कर थानेदार उड़ती दृष्टि से लाल को देखता है।

थानेदार—ओह! तो आप जासूस हैं....

टैक्सी ड्राइवर—जी हाँ....

थानेदार—खूब भाई, खूब....आप लोग भी वेश बदलने में कमाल कर देते हैं, फाटक के सिपाही ने कोई बेअदबी तो नहीं की?

टैक्सी ड्राइवर—जी नहीं....धन्यवाद!

थानेदार—आप के साथ और लोग कहाँ हैं?....

टैक्सी ड्राइवर—मिस्टर शर्मा ने कहा था कि बागी लोग भी उस लड़की को छुड़ाने की फिक्र में होंगे और हो सकता है कि

उनके कुछ जासूस भी थाने के आस-पास चक्कर लगा रहे हों, अत: तुम अकेले ही वहाँ जाना, अन्य लोगों को कुछ दूर पर उतार देना...

थानेदार---ठीक है....तो आपने उन्हें उधर ही उतार दिया है ?

टेक्सी ड्राइवर---जी हाँ....हम-आप तो हुक्मी बन्दे हैं न ?

थानेदार---क्या करें साहब ! पेट न होता तो इतनी जलील नौकरी क्यों करते ? दिन और रात में कभी आराम की शक्ल भी नहीं देख पाता....हाँ, तो आपके साथ यहाँ से कुछ पुलिस भी कर दूँ ?

टेक्सी ड्राइवर--बेकार है, मेरी टैक्सी चारों ओर से सुरक्षित है.... थोड़ी दूर आगे तो मेरे साथी मिल ही जायेंगे....बेकार के दिखावे से बागी भी कान खड़े कर लेंगे....

थानेदार---दानसिंह ! उस छोकरी को लाओ....

नयना लाई जाती है। लाल देखता है, सुन्दर चेहरा पीलापन लेकर और भी सुन्दर हो गया है। लगता है जैसे वह इधर एक पल के लिए भी न सोई हो और हमेशा किसी की चिन्ता में लीन रही हो।

नयना भी लाल को देखती है मगर पहचानती नहीं।

थानेदार---आप अपनी टेक्सी अन्दर ला दें तो अच्छा हो...

लाल बाहर आता है टेक्सी स्टार्ट कर थाने के अन्दर ले जाता है। दानसिंह नयना को ठेलकर टेक्सी की पिछली सीट पर बैठाकर फाटक बन्द कर देता है।

टैक्सी ड्राइवर---अच्छा, चलूँ साहब !....

थानेदार---बेहतर है कप्तान साहब से हमारा सैल्यूट बोलियेगा और कहियेगा कि हम लोग सभी तरह की खिदमत के लिए तैयार बैठे हैं....

लाल थानेदार से हाथ मिलाता है और टेक्सी स्टार्ट कर देता है। थाने के बाहर आकर टैक्सी तेजी के साथ भाग चलती है।

• •

थानेदार अभी आकर अपने मेज पर बैठा ही है कि एकाएक फोन की घण्टी बज उठती है।

थानेदार रिसीवर उठाता है।

हलो !....मैं थानेदार जमनापुर बोल रहा हैं....ओह कप्तान साहब हैं ?....गुडमार्निङ्ग सर !....क्या कहते हैं आप ? उस लड़की को जेल भेज दूँ ?....मगर उसे तो आपका जासूस अभी आकर ले गया है। क्या ?....वह आपका आदमी नहीं था ? आपने उसे नहीं भेजा था ?....माई गाड !....वह तो निकल गया....जी हाँ, टैक्सी का नम्बर मुझे याद है ६२५७, रंग हल्का हरा है....जी, शेवरलेट गाड़ी है....बेशक बुरा हुआ। मैं अभी सभी थानों को फोन करता हूँ। आप शहर के चौराहों पर तुरन्त पुलिस तैनात कर दें....जी, मुझे माफ करें....बड़ा शर्मिन्दा हूँ....मेरे पास मोटर सायकिल भी नहीं कि पीछा करूँ....

• •

लाल तेजी से टैक्सी भगाये चला जा रहा है। उसे किसी प्रकार के भी खतरे की आशंका नहीं थी। तीन-चार मील आ चुकने पर लाल सड़क के एक किनारे एक टैक्सी खड़ी देखता है। ड्राइवर बाहर निकल कर खड़ा है। लाल की टैक्सी को देख कर वह ड्राइवर सजग होता है।

वह हाथ ऊपर उठाकर कोई इशारा करता है।

लाल अपनी टैक्सी रोककर उसके पास आता है।

लाल—क्या है ?

वह—आप अपनी टैक्सी छोड़ दीजिये और मेरी टैक्सी पर चले जाइये....

लाल—और यह लड़की ?

वह—उसे भी ले जाइये....

लाल—ऐसा क्यों ?

वह–सरदार की आज्ञा !....आप जरा जल्दी करें....

लाल अपनी टैक्सी पर से नयना को उतार कर दूसरी टैक्सी पर बिठाता है। टैक्सी चल पड़ती है।

लाल की कार पुनः स्पीड में भागने लगती है।

नयना घबराकर कभी तेजी से पीछे भागती हुई सड़क की ओर, कभी लाल की ओर देखती है।

नयना–बाबू !

लाल–हाँ....

नयना—मुझे छोड़ दो बाबू !

लाल–हूँ...

इसके बाद नयना रोती हुई छोड़ देने की गुहार लगायी रहती है पर लाल कुछ बोलता नहीं।

करुणा से विगलित सामने निगाह पसारे रहता है।

तभी सड़क पर एक लारी के रुके रहने के कारण उसे कार रोक देनी पड़ती है। वह वैसे ही खोया हुआ-सा बैठा रहता है। पीछे फिर कर नयना को देखने का साहस नहीं होता।

मौका अच्छा देख, नयना धीरे से कार का दरवाजा खोल सड़क पर उतर जाती है। लाल को खबर तक नहीं होती।

दो ही तीन मिनट के बाद, रास्ता खाली हो जाता है। लाल सतर्क भाव से इधर-उधर देखता है। सड़क पर एकदम सन्नाटा है। एक दीर्घ निश्वास के साथ वह कार आगे बढ़ा देता है।

थोड़ी ही दूर जाता है कि उसकी दृष्टि एक आदमी पर पड़ती है जो उसे दूर से ही इशारे कर रहा है।

लाल टैक्सी रोक देता है।

वह—(पास आकर) ये कपड़े लेकर आप अपनी असली सूरत पकड़ लें और यहाँ से पैदल ही घर चले जायें....लड़की को मेरे हवाले करें...मगर लड़की....लड़की....लड़की कहाँ है ?....

आश्चर्य से लाल घूम कर देखता है तो मोटर खाली है।

लाल—बड़े आश्चर्य की बात है....

वह—अब देर करने का मौका नहीं, जाने दीजिये, उस लड़की की फिर खोज की जायगी....इस समय आप अपने को बचायें। पुलिसवाले चारों ओर तैयार खड़े हैं....यह टेक्सी मैं ले जाता हूं। ३२५७ की गाड़ी कौन ले गया ?....

लाल—नम्बर ३५ ले गया।

वह—किसी आफत में वह न पड़े, इसका प्रबन्ध करना है.... पता नहीं उसने गाड़ी का नम्बर बदला या नहीं ?....अच्छा तो आप जायें....

लाल एक छोटी-सी गठरी उस आदमी के हाथ से लेकर पास ही के एक पुल के नीचे चला जाता है।

उस गठरी में लाल के अपने कपड़े हैं।

थोड़ी ही देर में लाल वहां से निकलता है।

मस्त चाल से सीटी बजाता हुआ वह आगे बढ़ता है।

शहर वहां से केवल दो मील पर है।

शहर में घुसने पर वह देखता है कि हर चौराहे पर पुलिस के जत्थे खड़े हैं और सभी टेक्सियों तथा कारों को रोक-रोक कर पूछताछ कर रहे हैं।

लाल निर्भय, अपने डेरे पर पहुँच जाता है।

अभी वह ताला खोल ही रहा है कि—

बच्चा !...(पीछे से आवाज आती है)

लाल घूम कर देखता है। भिखारी की ऊंगली मस्तक पर है।

लोग आ-जा रहे हैं।

भिखारी—कुछ दे दो बच्चा !....ईश्वर भला करे....

लाल पैसा निकालने के लिये जेब टटोलने लगता है।

भिखारी—बच आये बेटा लाल ? यहां तो पूरी सरगर्मी है....

वह लड़की नम्बर ४७ के साथ चली गई न ?

लाल—जी नहीं....वह रास्ते में ही जाने कहाँ उतर गई....

भिखारी—तुम्हें उसने पहचान लिया था ?

लाल—नहीं....

भिखारी—मैं चलता हूँ, कल शाम को आऊँगा (फिर जरा तेज आवाज में) मिल जाय बेटा ! दूसरा दरवाजा देखूँ....

लाल कुछ पैसे जेब से निकाल कर भिखारी के हाथ पर रख देता है और वह आशीर्वाद देता हुआ चला जाता है—'भगवान भला करें दाता का....जियो मालिक ! खुश रहो....'

लाल दरवाजा खोल कर अन्दर आ बैठता है ।

● ●

रेखा अपने बँगले के बरामदे में कुर्सी पर बैठी हुई धूप खा रही है । बूढ़ी दाई पास ही बैठ कर स्वेटर बुन रही है ।

रेखा बड़ी गम्भीर दीख रही है । उसकी गम्भीरता बूढ़ी दाई को खल रही है, यह उसकी मुद्रा से स्पष्ट हो रहा है ।

दाई—रेखा !....

रेखा अपने आप में खोई-सी रहती है ।

दाई—बोलेगी नहीं आज ?

रेखा—(रूखा स्वर) क्या बोलूँ....तुम्हारा लाउड-स्पीकर तो बज ही रहा है....

दाई—आज इस तरह से गुमसुम क्यों बैठी है तू ?....

रेखा—तुम्हारी तरह बचपना कहाँ से लाऊँ जो खेलूं-कूदूँ, तुम चुपचाप स्वेटर बुनो दाई ! जबान की कैंची न चला कर हाथ की सूइयाँ जरा तेज चलाओ । जाड़े में स्वेटर न रहने से मुझे जुकाम हो गया है...

दाई—जुकाम होने पर नाक बहा करती है, आँखें नहीं बहतीं रेखा !....तू अपने आँसू तो पोंछ ले....पता नहीं, इसे कल से क्या

हो गया है ? कुछ बताती भी नहीं कि कोई उपाय करूँ....पाल-पोस कर इतनी बड़ी कर दिया इसे, अब आँसू दिखा कर मेरी जान लेना चाहती है....न खाना, न पीना....

रेखा चटपट अपनी आँखें पोंछ लेती है और कुर्सी पर से उठ पड़ती है ।

दाई–कहाँ जा रही है ?

रेखा–जहाँ तुम्हारे लाउड-स्पीकर की आवाज न पहुँच सके...

दाई उठकर रेखा का हाथ पकड़ लेती है और पुनः कुर्सी पर बिठा कर उसका सर सहलाने लगती है ।

दाई—रेखा ! क्या हो गया तुमको ?

रेखा—कुछ नहीं दाई ! मेरे सर में दर्द है....

दाई—हे भगवान् ! बचपन में तो इसे कभी कोई बीमारी नहीं हुई, अब जवानी भी आई तो सरदर्द बनकर....ऐसा तो होता ही है लड़की !....कभी-कभी आपस में कहा सुनी-तो हो ही जाती है । उस लाल-पीले ने तुझे कुछ कह दिया है क्या ?

रेखा–(जोर से) हाँ....

दाई–तभी आँखों में बेमौसम के बादल घिर आये हैं और चेहरे पर आँधियाँ चल रही हैं....सुन रेखा ! रूठने के बाद का मिलाप बड़ा अच्छा लगता है । अभी तू बच्ची ही तो है, क्या समझेगी ? जरा-सी बात हुई तो लगी सिसकने....चल, मैं अभी लाल से कहकर मेल करा देती हूँ....

रेखा–मै उनके पास नहीं जाऊँगी दाई !

दाई–क्यों ?

रेखा–उन्हें मैं अच्छी नहीं लगती....

दाई–उस छोकरे की आँखें पत्थर की हैं क्या, जो तेरी सूरत देख नहीं सकती ?....तू भला किसे अच्छी नहीं लगेगी ?

रेखा–वे कहते हैं मेरे यहाँ मत आया करो....

दाई—तो मत जा तू उसके पास, दो-चार दिन नहीं गई तो वह छोकरा खुद दौड़ा आयेगा....बड़ा लाट साहब का नाती बन गया हैं....तूने ही तो उसे सर चढ़ा लिया है....मेरी चले तो मैं उस दईमारे को एक दिन में ही ठीक कर दूं....

तभी पीछे से लाल आ जाता है।

लाल—(हँसकर) क्या बात है दाई ?

दाई—अरे लाल बेटा ! आओ-आओ....देखो, रेखा बिटिया को आज जुकाम हो गया है....

लाल—तभी तो नाक न बह कर आँखें बह रही हैं दाई ! बड़ा अच्छा स्वेटर बुन रही हो....एक मेरे लिये भी बुन दोगी ?

दाई—रेखा तो मुझसे भी अच्छा बुनती है बेटा ! तुम्हारे लिये भी बुन देगी....

लाल—रेखा तो पंगु है दाई ! तभी तो अपना स्वेटर तुम से बुनवा रही है....जुकाम में तो ऐसा होता ही है....

रेखा तेजी से उठकर अपने कमरे में चली जाती है। लाल आया था रेखा से मेल करने, परन्तु सब कुछ बेमेल हो जाता है।

लाल—(परेशान स्वर) रेखा को क्या हो गया है दाई ?

दाई—यह तो तुम ही जानो बेटा ! तुम दोनों के बीच पड़ते-पड़ते तो मेरी मौत आ गई....क्यों उसे खिझा देते हो तुम ?

लाल—मैं क्यों खिझाऊँ ? कल वह खुद रूठ कर चली आयी थी....इस समय मनाने आया तो और भी नाराज हो चली....

दाई—(मुस्कुराकर) तुम भी बेटा ! लाठी मारकर नाराजी भगाते हो...ऐसा भी कहीं चलता है...मनाने के लिए पांव पड़ना पड़ता है....समझे ?

लाल—मुझे पाँव पड़ना नहीं आता दाई ! मेरे पैर सलामत रहें तो जूतियां अपने-आप आ जायेंगी....

दाई—क्या कहता है लड़के ? रेखा तेरी जूती है ?....तू भी

कम शैतान नहीं है, नहीं तो मेरी रेखा शीशे पर पैर रखकर भी फिसलने वाली नहीं....

लाल—मैं जाता हूँ दाई ! रेखा को कभी मेरी जरूरत पड़े तो बुला लेना....

दाई—जाओ तुम ! रेखा तुम्हें क्यों बुलाने जायगी ? प्यासे की प्यास अगर सच्ची है, तो कुएँ को खुद उसके मुँह तक उठ आना पड़ेगा....

लाल उल्टे पाँव लौट जाता है। दाई रेखा के कमरे में आती है तो तकिये में अपना मुँह छिपा कर वह रो रही है।

तकिये का गिलाफ भींग चला है।

दाई—रेखा ! होश में आ...उस छोकरे को जाने दे....

रेखा—दाई ! लाल भैया खुद ही बिगड़ते हैं और खुद ही रूठते भी हैं....मैंने कुछ नहीं किया था....लाल भैया मुझे अपने साथ रखना नहीं चाहते....

दाई—तो तू उसका साथ छोड़ दे....

रेखा—(सिसकती हुई) नहीं दाई ! यह नहीं हो सकता....सूर्य की चमक से चन्द्रमा में चाँदनी है, गुलाब की खुशबू से हवा महकती ....लाल भैया मेरे लिए जो हैं, वह दूसरा कोई भी नहीं हो सकता....क्या वे चले गये दाई ?

दाई—हाँ....

रेखा—तुमने उन्हें क्यों जाने दिया ? वे जाने लगे तो उन्हें रोका क्यों नहीं ?

दाई—पगली ! उड़ते भौंरे को पकड़, कौन डङ्क खाना चाहेगा ?

रेखा—वे मुझसे रूठ गये हैं दाई ! वे आये और मैं बोली नहीं....लाल भैया अब मेरे पास कभी नहीं आयेंगे....

दाई—वह जरूर आयेगा...तू धीरज रख। घबड़ाने से काम नहीं चलता....

और दाई चली जाती है

दाई के जाने के बाद रेखा उठकर टहलने लगती है। जैसे बहुत विकल हो उठी हो। रेडियो के सामने आकर स्वीच आन कर देती है। इधर-उधर स्टेशन लगाने लगती है परन्तु हर जगह से पक्का गाना या और व्यर्थ के प्रोग्राम आ रहे है। अचानक एनाउन्सर की आवाज आती है—'अभी अपने मुहम्मद हुसैन से खयाल सुना, अब कुमारी भटनागर एक गीत प्रस्तुत कर रही हैं....'

रेखा रेडियो के पास ही कुर्सी खींचकर बैठ जाती है

गगन का चन्दा चम-चम चमके, दिल में है अँधियारा,
है कितनी दूर किनारा।
नैया के खेवैया बोलो कितनी दूर किनारा?
पतझर की झोली फैलाकर चाँद से अमृत माँगा—
किसी निठुर ने उस झोली में डाल दिया अंगारा,
है कितनी दूर किनारा:
आँखों के आकाश में सावन के बादल घिर आये।
किसी की सुधि के दीप जलाकर बैठी आस लगाये।
जलती लौ पर जल मरने को लाख पतंगे आये।
तुम एक छली ना आये।
आसमान की नीली छाती से दूर एक तारा,
है कितनी दूर किनारा।
गगन का चन्दा चम-चम चमके, दिल में है अँधियारा,

●

रात को मिस्टर शर्मा दिनभर की परेशानी के बाद लौटते हैं। वे आज दोपहर को खाना खाने भी नहीं आये। दाई से यह सुनकर कि रेखा की तबीयत खराब है वे उसके कमरे में जाते हैं।

रेखा लिहाफ में बदन छिपाये पड़ी है।

रात के आठ बज रहे हैं।

मि० शर्मा—रेखा !

रेखा—(लिहाफ से सर निकाल कर) जी....

मि० शर्मा—कैसी तबीयत है ?

रेखा—बिलकुल ठीक....

मि० शर्मा—दाई तो कहती थी कि तुम्हारी तबीयत बहुत खराब है....

रेखा—दाई पागल है पिताजी !

दाई—सुन लिजिये, इस लड़की की बातें मुझे जरूर पागल बना देंगी....दिन भर एक दाना भी मुँह में नहीं रखा है इसने, अब कहती है कि तबीयत बिलकुल अच्छी है....यह खेल मुझे जरा भी नहीं सुहाता रेखा !

रेखा—नहीं सुहाता तो मेरे पास मत आया करो....

दाई—ले मैं नहीं रुकती....अब जो जी में आये कप्तान साहब से मेरी शिकायत कर दे....बहुत करेंगे फाँसी दे देंगे....माँ बनकर इसे पाला, अब बेटी बनकर मार सहूँ, यही बाकी रह गया है....

मि० शर्मा—रेखा ! तू दाई को परेशान मत किया कर। सच कहता हूँ, यह न होती तो तू भूख-भूख करके मर जाती और यह सरकारी नौकर एक पल के लिए भी तेरे पास बैठकर तुझे दूध न पिला पाता। दाई ने तेरे लिए कम दुख नहीं झेले हैं। तू बीमार पड़ी है, तो उसने रात आँखों पर रखकर बिता दी है। तू खुश रही है तो उसने दिन हँसकर गुजार दिये हैं.... बेचारी बूढ़ी हो चली। तेरे लिए उसके कलेजे में माँ से कम ममता नहीं....

रेखा—दाई का दिमाग ठिकाने नहीं रहता पिताजी ! देखिये न एक तो मेरी तबीयत खराब, दूसरे सवाल पर सवाल....किसका-किसका जवाब दूँ मैं ?

मि० शर्मा–अभी तो तू कहती थी कि तबीयत बिल्कुल अच्छी है?

रेखा–(खीझ कर) आप भी ठीक दाई की ही तरह है पिताजी !....दिनभर से अब तक कहाँ थे ?

मि० शर्मा–झख मारने से फुरसत मिले तब तो घर आऊँ ? इन बलवाइयों के मारे तो जान अजीब मुसीबत में है....आज वे जमनापुर थाने से एक कैद लड़की भगा ले गये....

रेखा–(चौंककर) कैद लड़की ?

मि० शर्मा–हाँ ! थानेदार को धोखा देकर उसे छुड़ा ले गये। वह लड़की भी उन्हीं दल की मालूम होती है....

रेखा–पिताजी ! क्या उनके गिरोह में लड़कियाँ भी हैं ?

मि० शर्मा–होंगी ही....कौन जाने ?

रेखा–लड़कियाँ भी क्या इतनी निडर हो सकती हैं ?

मि० शर्मा–तेरी तरह सभी डरपोक तो होती नहीं रेखा !.... उसी लड़की को देख न, उसकी आँखों के सामने उसका घर जल गया, उसके बाप की जान ले ली गई मगर उसने जबान तक न हिलाई....

रेखा–(साश्चर्य) तब तो मैं उस लड़की को जरूर देखूँगी पिताजी ! मेरी ही तरह होगी ?

मि० शर्मा–नहीं तो क्या उसके दो सिर और चार हाथ हैं.... पगली कहीं की....अब वह लड़की हमारे पंजे में है कहाँ, जो तू देखेगी ? उसे तो बलवाई भगा ले गये....

रेखा—अच्छा हुआ, बेचारी की जान बच गई, नहीं तो क्या आप लोग उसे यों ही छोड़ सकते थे ?

मि० शर्मा–(दृढ़ स्वर) उसकी तो क्या, अगर वैसा काम तू भी करे, तो तेरी भी जान नहीं छूट सकती रेखा !....

रेखा–अब आप जाकर खाना खा लीजिए पिताजी ! दिन भर

के भूखे हैं....

मि० शर्मा–तू भी तो भूखी ही है। नहीं खायेगी क्या?

रेखा—बीमार बनाना हो तो कहिये चलकर खा लूँ....

मि० शर्मा—रहने दे तब....कोई दवा ली या नहीं?

रेखा–दवा की अभी जरूरत नहीं समझी....

थोड़ी देर बाद मिस्टर शर्मा चले जाते हैं।

रेखा पुनः लिहाफ से मुँह ढँक लेती है।

● ●

रेखा के यहाँ से लौटकर लाल अपने घर की ओर नहीं जाता। वह बहुत देर तक इधर-उधर बाजारों-सड़कों पर निरुद्देश्य घूमता रहता है। पर कहीं मन जैसे लग ही नहीं पा रहा है उसका।

एक 'पिक्चर हाल' के सामने आकर खड़ा हो जाता है।

सिनेमा का संगीत, देखनेवालों तथा खोंमचेवालों की आवाजों से वहाँ का वातावरण अजीब-सा हो रहा है। जाने क्यों लाल को वह शोर आज अच्छा लगता है। अंग्रेजी पिक्चर है—'टार्जन का बेटा' सामने ही टार्जन के रोमांचकारी करिश्मों के बड़े-बड़े पोस्टर भी दिखाई पड़ते हैं।

तभी भीड़ को चीरता हुआ एक युवक तेजी से उसकी ओर बढ़ता दिखाई पड़ता है।

लाल–अरे, नीरद तुम? (स्नेहपूर्वक उसके कन्धे पर हाथ रखते हुए) कब आये भाई!

नीरद—(झल्लाकर) अजब आदमी हो तुम भी लाल! दिल्ली से मैंने तुम्हें एक नहीं एक्यानबे पत्र लिखे होंगे पर जवाब के नाम पर बस, शून्य...अभी तुम्हारे घर से ही आ रहा हूँ....

लाल–(मुस्कराकर) बस मिलते ही झगड़ने पर उतारू हो गये? अरे, भाई! यह तो बताओ, तुम आये कब?

नीरद—हुआ यही चार घण्टे....

लाल—बस....

नीरद—हाँ, लाल। दिल्ली में रहते हुए जब कभी लाल किले की ओर जाता था तो लगता...

लाल—(जल्दी से) सड़क पर ऐसी बातें कर रहे हो? होश ठिकाने नहीं है क्या ?

नीरद—(चौंककर) ओह....

लाल—अब ?

नीरद—तुम बताओ क्या कर रहे हो ?

लाल—बस, वही....

अभी उसकी बात पूरी भी नही हो पाती है कि पीछे से पुकारती हुई आवाज आती है। लाल चौंककर देखता है तो लपक-कर पास आते रामलाल पर नजर पड़ती है।

रामलाल—गुडनाइट, मिस्टरलाल चन्द जी! बाईगाड, क्या फिलम देखने का इरादा है ?

लाल—नहीं भाई !

रामलाल—वेरीगुड, अच्छा खयाल है आपका। अपने जनाब फादर साहब थे, गाड की कसम, एक-एक दिन में सत्रह-सत्रह सिनेमाओं के चक्कर लगा आते थे। जेब-बैलेंस हमेशा जीरो रहता था सो टिकट खरीदने की जिल्लत....

लाल—अच्छा तो रामलाल जी! अब चलूँगा। (नीरद की ओर घूमकर) नीरद! चलूँ फिर भेंट होगी....

और जल्दी से लाल घूमकर भीड़ में मिल जाता है।

झटके से दृश्य बदलता है। क्लोजप में पहले रेखा का बंगला, फिर लाल का घर दिखाई पड़ता है। अन्धेरा गाढ़ा हो जाता है। दूर के टावर का घंटा ग्यारह बजने की सूचना देता है। जीरो बल्ब के मद्धिम प्रकाश में लाल अपने कमरे में सोया दिखाई देता है। कहीं दूर से, अनेक कंठों से निकला समवेत स्वर—'बन्दे

मातरम्....' आता है और तब सोये हुए लाल के हृदय से एक छाया निकलकर कमरे में तेजी से चक्कर काटने लगती है। लाल स्वप्न देख रहा है....तीव्र प्रकाश से कमरा आलोकमय हो जाता है और सामने दिल्ली का लाल किला दिखाई पड़ता है, किले पर यूनियन जैक लहरा रहा है।

लाल की वह स्वप्न-छाया दूर से यूनियन जैक की ओर निहारती हुई खड़ी है।

तभी—

—तुम कौन ?

लाल—मैं....मैं....भारत माँ का एक पुत्र....

चौंक कर देखता है तो अपनी बगल में एक विपुल-मुख नारी-मूर्ति खड़ी है पैरों में बेड़ी और हाथों में हथकड़ी।

लाल—तुम कौन ?

वह—मैं तेरी अभागिनी माँ हूँ वत्स !

लाल—माँ !

वह—तेरी माँ बन्दिनी है वत्स ! इस यूनियन जैक को देखा ?

लाल—(कम्पित स्वर) हाँ माँ !

और तब एक भयंकर धड़ाका होता है। माँ की वह मूर्ति, लाल किला, यूनियन जैक सब कुछ घोर अन्धकार में खो जाता है। अन्धेरे में टटोलता हुआ वह आगे बढ़ता है।

लाल—(पुकारता हुआ) माँ, माँ, तुम कहाँ हो ? तुम्हारी बेड़ियों की झनकार अब असह्य हो उठी है....अपने मस्तक पर विहँस रहे, यूनियन जैक के कलंक को हम मिटा देंगे। अपने लहू....शरीर की एक-एक बूँद का अर्घ्य चढ़ाकर, तुम्हारे चरणों की दासता को स्वतंत्रता की पावनता से धो देंगे....

उसकी आवाज धीरे-धीरे दूर, बहुत दूर होती जा रही है।

धांय !....धांय !! (रिवाल्वरों की गरज)

हम आजाद हैं....वन्देमातरम्....(समवेत स्वर)

सहसा पुनः प्रकाश की एक रेखा नाच उठती है और उस रेखा से चिनगारियाँ छिटकने लगती हैं ।

लाल—(चौंकता हुआ-सा स्वर) कौन, तुम....तुम रेखा !

रेखा उसके पैरों के पास बैठी दीख पड़ती है । उसके हाथ में रिवाल्वर तना है, जिसकी नली से धुआँ निकल रहा है

रेखा—लाल भैया ! चलो, चलो, लाल किले की ओर....तुम्हें मालूम है, लाल किले में भारत माँ के आंसुओं की नदी बह रही है, जिसमें सफेद अंग्रेजों का लाल रक्त....

लाल—रेखा....रेखा....

रेखा—लाल किला हमें बुला रहा है भैया !...

और उसका रिवाल्वर गरज उठता है ।

चारों ओर चीख-पुकार मच जाती है ।

लाल—रेखा !

रेखा—नारी को अबला कहने वाले तुम पुरुषों का पौरुष, नारीत्व-तेज से पिघल उठा है....देखो, देखो....

उसका रिवाल्वर पुनः गरज उठता है । अंग्रेजों का एक समूह त्रस्त भयभीत भागता हुआ-सा आता है । रेखा का रिवाल्वर गरजता रहता है । अंग्रेजों का समूह हाहाकार कर उठता है ।

लाल—रेखा....रेखा....

रेखा—लाल भैया ! देख रहे हो न ?

लाल—हाँ, रेखा !

रेखा—रिवाल्वर उठाओ लाल भैया !

रिवाल्वरों की धाँय-धाँय में अंग्रेजों की चीख-पुकार ।

लाल—रेखा !

रेखा—लाल भैया ! हमारे लहू की एक-एक बूंद में गरब है लाल किले की ओर चलने की हुंकार है....

लाल—हाँ, रेखा !

अपने पलंग पर लाल एक झटके के साथ उठकर बैठ जाता है। स्वप्न भंग हो जाता है।

उसका सारा शरीर पसीने से भींग उठा है।

वह उठकर तेजी से कमरे में चक्कर काटने लगता है।

लाल का कमरा सूरज की सिन्दूरी किरणों से खिल उठा है। वह मेज के पास कुर्सी पर बैठा है, विचार-मग्न। स्नानादि से छुट्टी पा ली है उसने, बिखरे-रूखे बाल, मुरझाया मुख।

भिड़काया हुआ दरवाजा धीरे से खुलता है।

रेखा खड़ी दीख पड़ती है।

लाल को इसकी खबर नहीं होती।

सहसा वह मेज पर रखा रेखा का फोटो अपने सामने कर लेता है और स्वतः ही कहने लगता है—

मेरी रेखा ! तू क्यों रूठ गई है मुझसे ?....क्या चाहती है तू ?.... मैंने पहले ही कह दिया था कि रेखा से परे लाल का कोई अस्तित्व नहीं....रेखा से दूर रहकर लाल पंगु है, अपाहिज है, पागल है फिर भी तू रूठ ही गई रेखा !....कसूर भी न बताया कि उसका प्रतिकार कर सकता....कुछ कहा भी नहीं रेखा !....तू आगे बढ़ना चाहती है....तू आकाश चूमना चाहती है....मगर एक मजोर इन्सान तुझे क्या मदद दे सकता है ?.... केवल एक गंगा को ही भगीरथ ने रास्ता दिखाया था मगर दूसरी नदियाँ तो अपना मार्ग बनाकर बह चलती हैं....तुझमें ताकत होगी तो तू खुद उठेगी रेखा ! लाल पाँव खींच कर भी तेरी महानता को नीचे नहीं ला सकेगा....

सुन रही थी रेखा। उत्तरोत्तर गम्भीर होती जा रही थी वह।

रेखा—लाल भैया !

लाल चौंक कर घूमता है।

पीली पड़ी रेखा पर उसकी दृष्टि जम जाती है।

रेखा आगे बढ़ आती है। मेज पर से अपनी फोटो उठाकर देखने लगती है, फिर ज्यों का त्यों रख देती है।

लाल—रेखा ! क्यों आई हो ?

रेखा—क्या आने का भी अधिकार मेरा छिन गया लाल भैया ? अनाधिकार चेष्टा करके आई हूँ तो थोड़ी देर बैठकर ही जाऊँगी....

लाल— बैठो न....कैसी हो रही हो ?

रेखा–(बैठ जाती है) जैसी तुम देखना चाहते थे, तुमसे अलग होकर रह सकती तो यहाँ न आती....आ गई तो बुरा न मानना लाल भैया !

लाल—रेखा ! तुझे अपने से अलग कर ही कौन रहा है ?

रेखा—तुम लाल भैया ! और कौन ? (क्षीण हँसी) तभी तो सजीव रेखा से अधिक, रेखा की निर्जीव फोटो तुमको प्यारी है....है न....

लाल— तू रूठ चली थी तो तेरी फोटो से ही बातें कर रहा था....

रेखा— तुम सब कुछ कर सकते हो लाल भैया ! मगर रेखा जैसी जबान इस फोटो को नहीं, जो यह तुम्हारी बातों का जवाब दे सके....कभी जवाब पाने की लालसा उठेगी तो उसे सजीव रेखा ही पूर्ण कर सकेगी....इस फोटो में तुम निर्जीव रेखा की हँसी देख रहे हो मगर सजीव रेखा के आँसू इसमें तुम देख पाओगे...

लाल— रेखा ! तुम फिर वैसी ही बातें करने लगी....

रेखा–मैं एक बात पूछने आयी थी लाल भैया !

लाल–पूछो....

रेखा–तुमने कभी किसी बहरे टैक्सी ड्राइवर को देखा है ?

लाल—(चौंकते हुए) मैंने तो ऐसा टैक्सी ड्राइवर नहीं देखा रेखा ! तुमने देखा था क्या ?

रेखा—हां....बड़ा अच्छा आदमी था बेचारा ! ३२५७ नम्बर की टैक्सी चला रहा था....

लाल—(घबरा कर) तुम्हें उसका नम्बर तक याद है ?

रेखा—(गम्भीर स्वर) क्यों न याद रहे ? उसी टैक्सी पर तो मैं घर तक आई थी और उस बहरे टैक्सी ड्राइवर से कुछ मजेदार बातें भी की थीं....

लाल—बहरों से बातें करने में बड़ा आनन्द आता है....

लाल अपने को प्रकृतिस्थ कर लेता है।

रेखा—(गम्भीर स्वर) हां, लाल भैया !... मगर मेरी राय में बहरे लोग दगाबाज भी कम नहीं होते....

लाल—वह कैसे ?

रेखा—पिताजी कह रहे थे कि ३२५७ नम्बर की टैक्सी पर ही जमनापुर थाने से एक कैद लड़की भगायी गई थी....और आश्चर्य तो यह है कि इस नम्बर का लाइसेंस भी चार साल पहले ही काटा जा चुका है....

लाल विस्फारित नेत्रों से रेखा का मुंह देखता रहता है।

रेखा—लाल भैया ! चुप क्यों हो तुम ?

लाल—सोच रहा हूँ उसी दगाबाज बहरे की बात....

रेखा—सोचकर क्या करोगे ? अब तो वह बहरा और लड़की दोनों न जाने कहां होंगे ?

लाल—लड़की, कौन ?

रेखा—वही जो जमनापुर थाने में कैद थी और जिसे वह बहरा भगा ले गया....वह लड़की उसकी कौन रही होगी....

लाल—(झुँझला कर) मैं क्या जानूं ?

रेखा—वह उसकी प्रेमिका ही रही होगी, तभी तो उसने

जान हथेली पर रखकर उसे बचाया....लाल भैया ! बहरों की सुनने की ताकत कम हो जाती है तो क्या, उनके दिल में धड़कन भी नहीं होती ?....मैं इसे नहीं मानती । बहरा तो क्या अन्धे इन्सान को भी दिल तो होता ही है....क्यों लाल भैया ?

लाल—(बिगड़ती हुए) चुप रहो रेखा ! व्यर्थ की बातें मुझसे न किया करो....

रेखा—बिगडो मत लाल भैया !....मैं सिर्फ यही पूछने आई थी... अब जा रही है....मगर बहरों की चर्चा इतनी बुरी क्यों लगती हैं तुम्हें ?....वे भी तो आखिर इन्सान ही हैं....उन्हें भी समझो तो तुम्हारा अनुभव कुछ घट नहीं जायगा....चढना चाहो तो कभी उस बहरे ड्राइवर को बुला दूँ....उसने तो मेरे यहाँ नौकरी करने का वादा भी किया था....या चाहो तो खुद बहरे बनकर कभी टैक्सी चला देखो, ३२५७ न सही ५८ ही सही....

लाल—भाग यहाँ से, दुष्ट कहीं की....

रेखा—लाल भैया ! रखा को भी दो आँखें हैं, जिनमें चौबीसों घण्टे लाल की सूरत तैरती रहती है....मुझे भी दो कान हैं, जो लाल भैया की आवाज का रेकार्ड किये बैठे हैं । रेखा के सामने से लाल भैया छिप कर भाग नहीं सकते....कभी नहीं भाग सकते.... मैं जाती हूँ । अपना यह फोटो लिए हो जाऊँ, इसे रखकर क्या करोगे तुम ? इसे कभी एकान्त में देखने लगोगे तो नाहक ही मेरा दिल तुम्हारे पास खिंच आने को ललचेगा....(रेखा अपना फोटो उठाकर हाथ में ले लेती है) तुम्हारी आँखों में जब रेखा का कोई मूल्य नहीं तो कागज के इस टुकड़े का मूल्य लगाकर क्या करोगे लाल भैया ! बेमोल बिकनेवाली चीज को तुम ठुकराओ और तुच्छ कागज को अनमोल समझो, यह मैं नहीं देख सकती....कभी तुम्हें इस फोटों को देखने की लालसा जगे तो इस रेखा को ही बुलाकर देख लेना... रेखा स्वर्ग में भी होगी, तो तुम्हारी आँखों में आँसु

बनकर उतर आयेगी लाल भैया !....इतना समय तुम्हारा बरबाद किया, इसे यदि मेरा अधिकार न समझो तो क्षमा कर देना....

रेखा तेजी से बाहर चली जाती है।

लाल—(पुकारते हुए) रेखा !....ओ रेखा !...वह फोटो देती जा....उसे मत ले जा....

पर रेखा चली ही जाती है। लाल धम्म से पलंग पर पड़ रहता है, आँखें बन्द हो जाती हैं। विचारों के द्वन्द्व में पड़ा रहता है।

शाम हो जाती है। तभी—

मिस्टर लालचन्द हैं ? (बाहर से किसी की आवाज)

लाल—कौन साहब हैं ?....अन्दर आइये....

उठकर लाल बल्ब जलाता है।

तभी एक सूटेड-बूटेड साहब को वह अन्दर आते देखता है।

साहब—(हाथ की छोटी-सी अटैची मेज पर रखते हुए) आप ही मिस्टर लालचन्द हैं ?....

लाल—जी हाँ...बैठिये....

लाल आगन्तुक की ओर देखता है। लम्बा कद, चालीस के पार की अवस्था, बदन पर अंग्रेजी पोशाक, रोबीला चेहरा, फ्रेन्च कट की दाढ़ी और मूँछे, आंखों पर काले रंग की ऐनक, हाथ में मोटा-सा कीमती सिगार।

लाल ने इस व्यक्ति को पहले कभी नहीं देखा था।

लाल—कोई आज्ञा ?....

साहब—(हँसते हुये) थोड़ी-सी तकलीफ देने आया हूँ मिस्टर लालचन्द ! मुझे माफ करेंगे....

लाल—कोई बात नहीं....आप कहिये....

साहब—मेरा खयाल है कि बात शुरू करने के पहले आप मेरा परिचय जानना पसन्द करेंगे....है न ?....

लाल—जी हाँ....बड़ी कृपा होगी....

साहब—माफ कीजिये मिस्टर लालचन्द !.... मेरी बाईं आँख पत्थर की है ....और इन्सान को अपनी बदसूरती छिपाने के लिए कुछ न कुछ करना ही पड़ता है। हाँ, तो मैं अपना परिचय दे दूँ....आपको शायद इधर होने वाले खून तथा हत्या आदि की खबर तो होगी ही ?...

लाल—(सतर्क-सा होकर) जी हाँ....है....

साहब—सरकार इन घटनाओं से बहुत परेशान है, चाहे जैसे हो, वह इन बलवाइयों को दण्ड देना चाहती है....आप मेरा मतलब तो समझ रहे हैं ?

लाल—जी हाँ....

साहब—मैं सरकार द्वारा राजधानी से भेजा गया एक जासूस हूँ....सरकार का मुझ पर विश्वास है....कितने ही पेंचीदे मामलों में सरकार मेरी मदद से विजयी हुई है....मेरा नाम बिलफोर्ड है....जाति का क्रिश्चियन हूँ मैं....

लाल—मैं समझ गया, (जेब में पड़ा हुआ रिवाल्वर टटोलकर) आप क्या अकेले ही आये हैं मिस्टर बिलफोर्ड ?

बिलफोर्ड—जी नहीं, मेरे साथ के जासूस आपके मकान को चारों तरफ से घेरे हुए हैं... हमारा काम बहुत ही जिम्मेदारी का है मिस्टर लालचन्द ! इसे तो आप मानते ही होंगे....

लाल—जी हाँ, क्यों नहीं ?....तो मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ मिस्टर बिलफोर्ड !...

बिलफोर्ड—शुक्रिया !....आपके विरुद्ध मेरे पास कुछ प्रमाण आये हैं मिस्टर लालचन्द !....अगर मैं आपसे कुछ सवाल पूछूँ तो मुझे उम्मीद है आप बुरा न मानेंगे....

लाल—जी, हर्गिज नहीं....आप शौक से पूछें....

बिलफोर्ड—आप क्या इधर कभी लखनपुर की तरफ गये थे ?

लाल—जी, यह गाँव तो मेरे गाँव के रास्ते में पड़ता है....

दो-तीन दिन पहले ही मैं गाँव पर से आ रहा था, तो लखनपुर के आगे ही मेरी सायकिल पंचर हो गई थी और मुझे पुलिस ने सन्दिग्ध समझ कर रोक लिया था....

बिलफोर्ड—आपके गाँव का नाम क्या है ?

लाल—मोहनियाँ....

बिलफोर्ड—मिस्टर लालचन्द ! (गम्भीर स्वर) मुझे यहाँ आये दस दिन हो चुके हैं, मगर मैंने अपना चार्ज आज ही लिया है। इस बीच गुप्त ढंग से मैं पता लगा रहा था.... मोहनियाँ गाँव से शहर आने के लिए सुदामापुर का रास्ता नजदीक पड़ता है। है न ?.... फिर लखनपुर से होते हुए व्यर्थ में सात मील का चक्कर लगाना आपने क्यों पसन्द किया ?

लाल—मैं अक्सर उसी रास्ते से आता हूँ मिस्टर बिलफोर्ड !

बिलफोर्ड—उसका तो कोई कारण होगा ही ?....

लाल—जी, कोई कारण नहीं....

बिलफोर्ड—शायद नयना से पुरानी जान-पहचान के कारण ही....

लाल—कौन नयना ?

बिलफोर्ड—वही लड़की, जिसके घर जज की हत्या वाली रात को आप ठहरे थे....(बिलफोर्ड हँसता है) उस दिन भी तो आपकी मोटर सायकिल पञ्चर हो गयी थी, भले ही पुलिस की गोली से हो, या....

लाल—मिस्टर बिलफोर्ड ! आपका इरादा क्या है ?

बिलफोर्ड—मुझे माफ करें....सरकारी आदमी अपने कार्य से मजबूर होता है....

वह एकटक लाल के पैर की ओर देख रहा है, जिस पर पजामा उठा रहने के कारण एक छोटा सा घाव दिखाई पड़ रहा है। बिलफोर्ड को पैर की तरफ देखता पाकर लाल पाजामा झट से नीचे गिरा देता है। बिलफोर्ड फिर हँस पड़ता है।

बिलफोर्ड—मिस्टर लालचन्द ! आपके पैर में यह घाव कब लगा ?

लाल—बहुत दिन हुए....

बिलफोर्ड—मुझे मालूम हुआ है कि जज के हत्यारे को पुलिस की एक गोली लगी थी, क्यों कि सड़क पर खून के कुछ धब्बे दिखाई पड़े थे....आपका यह घाव भी तो अभी ठीक से सूख नहीं पाया है....

लाल—(तीव्र स्वर) आप व्यर्थ की शङ्का कर रहे हैं....

बिलफोर्ड—अच्छा, मैं दूसरी बात पूछता हूँ...क्या आपने कभी ३२५७ नम्बर की टैक्सी चलायी, या उस पर सवार हुए थे ?....

लाल—नहीं ?

बिलफोर्ड—आप शायद उस भिखारी को जानते हों, जो अक्सर भीख माँगने आप के पास आया करता है ?

लाल—(सहज स्वर) उसे जानने की कभी कोशिश नहीं की मैंने। भिखारी समझ कर पैसे दे दिया करता था....

बिलफोर्ड—तो अब समझ लें कि वह बलवाइयों का सरदार था और इस समय हमारी कैद में है...

लाल—(चिल्ला कर) नहीं, यह कभी नहीं हो सकता.... तुम लोग उसे कभी नहीं पकड़ सकते मिस्टर बिलफोर्ड !

उसका हाथ जेब में रखे रिवाल्वर सहित धीरे-धीरे बाहर निकलने लगता है।

बिलफोर्ड—(गरजकर) खबरदार ! जेब की चीज जेब में ही पड़ी रहने दो....हाथ बाहर निकाला तो ठीक न होगा....

हताश लाल देखता है कि बिलफोर्ड का रिवाल्वर उसके मस्तक पर सध चुका है। वह लम्बी-लम्बी साँसें लेने लगता है। बिलफोर्ड उसे महान शक्तिशाली, पक्का जासूस लगता है।

अब बिलफोर्ड की दृष्टि उस बड़े से शीशे की ओर है, जिसके पीछे लाल की सारी क्रान्ति बन्द है।

बिलफोर्ड—यह शीशा तो बड़ा अच्छा है मिस्टर लालचन्द ! कहाँ से खरीदा था इसे ?

लाल—कलकत्ता से मेरा एक दोस्त लाया था....

बिलफोर्ड—कौन दोस्त ?....वही भिखारी तो नहीं....क्या मैं उसे वहाँ से उतार कर देख सकता हूँ ?

लाल—जैसी आपकी इच्छा....

इस समय लाल का मस्तिष्क तेजी से चक्कर काट रहा है। वह जानता है कि पूरी तौर से बिलफोर्ड के पंजे में आ गया है। फिर भी बिलफोर्ड उस शीशे के पीछे रखी हुई उसकी डायरी जब तक न पा जाय, तब तक उसके विरुद्ध उसके पास कोई पक्का प्रमाण नहीं। जैसे ही बिलफोर्ड उस शीशे की ओर घुमता है कि लाल उसके रिवाल्वर वाले हाथ पर अपने पैर से जोरों का एक वार करता है। बिलफोर्ड भी असावधान नहीं है। चोट खाकर भी उसके हाथ से रिवाल्वर नहीं छूटता और वह घूम कर लाल की कनपटी पर बाँयें हाथ से ऐसा घूँसा जमाता है कि लाल लड़-खड़ा कर जमीन पर गिर पड़ता है।

बिलफोर्ड—(क्रोध से) कल के छोकरे मेरे मुँह लगते हो ?....

लाल उठ खड़ा होता है। हाँफ रहा है वह। अब कोई उपाय नहीं है। बिलफोर्ड का रिवाल्वर सीधे उसके मस्तक की ओर तना है। वह हर तरह से असहाय पा रहा है अपने आपको।

बिलफोर्ड—बस सारा बल खतम हो गया ? इसी बूते पर सरकार से लोहा लेने चले थे ?

लाल अपनी नजरें ऊपर नहीं उठाता है।

बिलफोर्ड—(बदला हुआ स्वर) लाल ! इधर देखो....

लाल नजरें उठाकर उसे देखता है।

बिलफोर्ड एक उँगली से अपना मस्तक खुजलाता है।

लाल दौड़कर उसके पैरों पर गिर पड़ता है।

लाल—सरदार ! यह कौन-सी परीक्षा ले रहे थे आप ?

बिलफोर्ड हँसता है और लाल को उठाकर अपने कलेजे से लगा लेता है। लाल अब तक हाँफ रहा है।

सरदार—मेरे बच्चे ! डर गये थे तुम ?

लाल—मेरी तो जान ही निकल गई थी सरदार ! आप का कैद होना सुन कर....

सरदार—मुझे भला ये सरकारी बुलडाग कभी पा सकते हैं ? इसकी कोई चिन्ता न करो लाल ! मैं हमेशा स्वतन्त्र हूँ....इस वेश में एक जरूरी काम से गया था। लौटने पर तुमसे मिलना भी जरूरी था....सोचा, कुछ नाटक ही करता चलूँ....

लाल—बेशक सरदार ! रूप और आवाज बदलने में आपको कमाल हासिल है....मुझे तो स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि इस वेश के भीतर आप ही होंगे....

सरदार—लाल ! आज तुम कुछ चिन्तित थे क्या ?....

लाल—नहीं तो....

सरदार—तुम जरूर कोई गहरी चिन्ता ले बैठे हो, तभी अँधेरा हो जाने पर भी बल्ब नहीं जलाया था....क्या बात है बेटा ! मुझसे कहो कहना ही पड़ेगा....

लाल—रेखा की बात सोच रहा था सरदार !

सरदार—क्यों ?....रेखा के लिए तुम्हारे दिल में क्या है ?

लाल—बहन का प्रेम, माता की भक्ति, पत्नी की प्रेरणा.... आपको समझा नहीं सकता सरदार ! आप अनुभवी हैं खुद समझ सकते हैं....

सरदार—मैं समझ चुका हूँ लाल !....यह तुम्हारी इस अवस्था का दोष है, जो तुम एक नारी का साहचर्य चाह रहे हो....क्रांति-मार्ग में नारी बाधक होती है, इसे भूलो मत....

लाल—मुझे याद है सरदार !....और तभी तो रेखा को देख

कर भी नहीं देखना चाहता, उसे चाह कर भी नहीं चाहना चाहता....इसीलिए तो मैं उसे पाकर भी खो देना चाहता हूँ सरदार!

सरदार—(तेज स्वर) लाल! अपनी आवाज सम्हालो.... तुम्हारा इतना भर्राया गला कभी मेरे कानों के सामने नहीं खुला था....मैं आज ही तुम्हें यहाँ से ले चलूँगा....मैं लाल के लिये रेखा को मरते देख सकता हूँ, परन्तु रेखा के लिए लाल को जरा भी व्यग्र नहीं देखना चाहता ...इतनी दूर आगे बढ़कर भी अब तुम पीछे लौटना चाहते हो?

लाल—नहीं सरदार! मैं आगे बढ़ूँगा, पीछे मुड़कर रेखा को देखूँगा भी नहीं....आप विश्वास रखें....मगर क्या पुरुष नारी को साथ लेकर अग्रसर नहीं हो सकता सरदार?

सरदार—फूलों की सेज पर नारी-पुरुष साथ-साथ चल सकते हैं लाल! मगर कटीले मार्ग को तय करने के लिए केवल पुरुष का ही कलेजा चाहिए....

लाल—रेखा नारी होकर भी पुरुष का साहस रखती है....

सरदार—तुम्हें विश्वास है?

रेखा—विश्वास करना पड़ा है....

सरदार—कैसे?....

लाल—रेखा मेरे सभी भेद जान चुकी है। मेरी डायरी, मेरा रिवाल्वर, वह शीशा, सब कुछ वह देख चुकी है। वह जानती है कि मैंने ही जज का खून किया, मैंने ही नयना को जमनापुर थाने से भगाया, मैं ही क्रान्तिकारियों के सरदार का दाहिना हाथ हूँ....

सरदार—मुझे भी जानती है वह?

लाल—शायद नहीं...मगर वह बहुत कुछ जानती है सरदार!

सरदार—इतना जानकर भी वह चुप है?

लाल—जी हाँ!

सरदार—अजीब लड़की है? अपने बाप को क्रान्तिकारियों

की खोज में दर-दर भटकते देख सकती है मगर तुम्हारी ओर इशारा करके वह उनका बोझ हल्का करना नहीं चाहती ?

लाल—ऐसा वह कभी नहीं करेगी सरदार !....मैं रेखा को पहचान चुका हूं। उसके दिल में पिता का प्रेम है, परन्तु उनके पेशे को वह घृणित समझती है। उसके हृदय में भी कम क्रान्ति नहीं....एक दिन कहती थी कि कभी-कभी उसके पिता भी उसकी दृष्टि में निशाचर जैसे दिखते हैं....

सरदार—ऐसा कहती थी वह....

लाल—जी हां ! वह भी आगे बढ़ना चाहती है। उसे भी रिवाल्वर चलाने की, खून करने की इच्छा होती है....वह मेरा सहारा चाहती है सरदार !....मुझसे बहुत बार रो-गा चुकी है.... आप तक उसकी पहुँच नहीं, नहीं तो आप से ही वह प्रार्थना करती....उसे क्या अपने साथ ले लेना ठीक नहीं होगा सरदार ?

सरदार—(दृढ़ स्वर) मैं उस लड़की की इज्जत करता हूं....अभी तो नहीं, आगे चलकर मैं उसे अपने साथ लेने के विषय में सोचूंगा....तब तक तुम उससे दूर ही रहने की चेष्टा करना....अपना भेद भी उससे छिपाये रखने की कोशिश करना....

लाल—मैं सजग रहूंगा सरदार !

सरदार—तुम्हारे लिए एक जरूरी काम है....

लाल—कहिये....

सरदार—रेखा के पिता मिस्टर शर्मा की आलमारी में एक पीली फाईल में रखे कुछ कागजात हैं। उन्हें तुम्हें आज रात को ला देना होगा, चाहे जिस तरह से हो....

लाल—मुझे ही यह काम करना होगा ?

सरदार—हां, तुम्हें ही और आज ही रात को....मिस्टर शर्मा की कोठरी से बाहर आते ही तुम अपने को सुरक्षित पाओगे ....मुझे उस फाईल की सख्त जरूरत है....कल सुबह आकर मैं

फाईल को ले आऊँगा....

लाल—(परेशान स्वर) वहाँ रेखा है सरदार !....वह मेरी आवाज जरूर पहचान जायगी....अभी उस दिन उसने मुझे टैक्सी ड्राइवर के वेश में पहचान लिया था....

सरदार—मुझे अफसोस है कि अभी तुम आवाज बदलने में पूरे चतुर नहीं हो सके, फिर भी तुम्हें यह काम करना ही होगा। मेरे पास इस समय कोई आदमी खाली नहीं....सभी व्यस्त हैं....रेखा तुम्हें पहचान कर भी अपनी जबान नहीं खोलेगी, इसका तो तुम्हें विश्वास होगा ही ?

लाल—जी हाँ....

सरदार—तो ठीक है....खूब सावधानी से रहना। आलमारी की ताली मिस्टर शर्मा के तकिये के नीचे रहती है....अब मैं वेश बदल कर यहाँ से तुरन्त चला जाना चाहता हूँ....

सरदार अपनी अटैची खोलकर एक नकाब और काली पोशाक लाल को देता है।

सरदार—यह रही तुम्हारी आज की पोशाक....अब तुम जरा दूसरे कमरे में चले जाओ, तो मैं वेश बदल लूँ....

लाल दूसरे कमरे में चला जाता है।

सरदार अन्दर से दरवाजा बन्द कर लेता है। पांच ही मिनट में गिलफोर्ड के स्थान पर बूढ़ा भिखारी बैठा नजर आता है। वह दरवाजा खोलकर लाल को भीतर बुला लेता है।

सरदार—(हँसकर) कुछ देते हो बच्चा कि भिखारी निराश हो चला जाय ?

लाल—भिखारी के लिये लाल की जान तक हाजिर है....

सरदार—शाबाश !....

भिखारी लाल की पीठ ठोंकता है और बाहर हो जाता है। लाल कुर्सी पर बैठ जाता है।

● ●

मिस्टर शर्मा के बँगले का बाहरी दरवाजा बन्द है। दो-चार कुत्ते सोये दीख पड़ रहे हैं। हल्की रोशनी वाला एक बल्ब सड़क पर अपनी मनहूस रोशनी बिखेर रहा है।

बँगले का भीतरी हिस्सा धीरे-धीरे सामने आता है।

चारो ओर घोर सन्नाटा छाया है।

दाई का कमरा। दाई घोर निद्रा में मग्न है।

पास ही उसकी बिल्ली सोयी पड़ी है।

रेखा अपने कमरे में करवटें बदलती हुई दिखाई पड़ती है।

दीवार पर की घड़ी बारह बजा रही है।

बगल वाला कमरा मिस्टर शर्मा का है।

कमरे में अन्धकार है।

रेखा—(स्वगत) पिताजी आज गहरी नींद में गाफिल हैं। ओह, मूँजी रात है कि अड़ियल टट्टू की तरह अड़ गयी है....

वह धीरे से उठकर पलंग पर लेट जाती है। बड़ी बेचैन दीख रही है। सहसा बगल की सीढ़ी पर कुछ आहट होती है।

वह चौंकती है पर घबराती नहीं। सीढ़ी पर सावधानी से किसी के उतरने की आवाज आती है।

रेखा खड़ी हो जाती है। दरवाजे के पास आती है। बन्द किवाड़ थोड़ा-सा खोलकर देखने लगती है।

तभी कोई काली छाया उधर से दबे पाँव आकर उसके पिता के कमरे की ओर बढ़ जाती है।

काली छाया मिस्टर शर्मा के दरवाजे पर आकर खड़ी हो जाती है। छाया इधर-उधर देख, कुछ आहट लेती है। और जब उसे विश्वास हो जाती है कि वह निरापद ढङ्ग से वहाँ आ गई है, तो धीरे से बन्द दरवाजे को पीछे की ओर ढकेलती है।

दरवाजा भीतर से खुला था, अब पूरा खुल गया है।

छाया दबे पाँव भीतर घुसती है।

घोर अन्धकार है। अँधेरे के बीच किसी सोये हुए आदमी की नाक बज रही है। वे शायद मिस्टर शर्मा हैं।

छाया नाक की आवाज से यह अन्दाजा लगा लेती है कि मिस्टर शर्मा की पलंग कहाँ, किस ओर, कितनी दूर पर है और उनका सिरहाना किधर है, क्योंकि उनकी तकिया के नीचे से ही तो उसे उस आलमारी की चाभी लेनी है, जिसमें वह पीली फाइल रखी है।

धीरे-धीरे छाया आगे बढ़ती है। पग सधे हैं।

वह जमीन का जर्रा-जर्रा टटोल कर आगे बढ़ रहा है कि कोई खटका न हो, और मिस्टर शर्मा की नींद न खुले।

मिस्टर शर्मा का सिरहना पाकर छाया के हाथ आगे बढ़ जाते हैं। दायें हाथ में रिवाल्वर तना दीख रहा है।

छाया क्षणभर चुपचाप खड़ी रहती है। फिर उसका बाँया हाथ धीरे-धीरे तकिया की ओर बढ़ता है।

दाहिने हाथ का रिवाल्वर झुक कर मिस्टर शर्मा के मस्तक से एक इञ्च ऊपर तक आ जाता है।

छाया पूर्ण सावधान है। यदि चुपचाप ताली उसके हाथ आ गई तो ठीक है और यदि मिस्टर शर्मा जाग कर चिल्लाये, तो उनके मस्तक के ठीक एक इञ्च ऊपर रिवाल्वर तैयार बैठा है।

छाया का हाथ तकिया तक पहुँच जाता है। ताली का ठण्डा स्पर्श वह महसूस करती है। ताली उसकी मुट्ठी में है।

काली छाया ज्यों ही अपना बाँया हाथ तकिये के नीचे से खींचना चाहती है, त्योंही मिस्टर शर्मा की नींद खुल जाती है।

मि० शर्मा—(चौंककर) कौन है ?....रेखा ! तू है क्या ?

वे उठना चाहते हैं। तभी छाया का रिवाल्वर एक इञ्च और नीचे उतर कर उनके मस्तक पर आ बैठता है।

छाया—(गम्भीर स्वर) चुप रहो मिस्टर शर्मा ! चिल्लाने से

मौत नजदीक आ जायगी....तुम धीरे से उठ बैठो पलंग पर....

छाया धीरे-धीरे अपना रिवाल्वर ऊपर उठाती जाती है और मिस्टर शर्मा भी उसी गति से ऊपर उठ रहे हैं।

अब वे पलंग पर बैठ चुके हैं। छाया का रिवाल्वर उनके मस्तक से हट कर सर के पिछले भाग पर आ लगा है।

मि० शर्मा—क्या चाहते हो तुम ?

छाया—पीली फाइल !

मि० शर्मा—पीली फाइल ? पिली फाइल तो मैंने कलक्टर साहब के पास भेज दी है....मेरे पास वह फाइल नहीं....

छाया—तुम झूठ बोलते हो....वह तुम्हारी आलमारी में है....लो ताली और उसे निकाल कर मुझे दे दो....

मि० शर्मा—तुम खुद क्यों नहीं निकाल लेते ?

छाया—तुम मुझे बेवकूफ बनाने की कोशिश मत करो....मैं जानता हूँ कि तुम्हें मेरी जरा सी भी असावधानी शक्तिशाली बना देगी....उठो, देर न करो....किसी से सहायता पाने की आशा छोड़ो। इस समय मेरे दोनों हाथों में रिवाल्वर है, एक तुम्हारे लिए, दूसरा दौड़कर आनेवाले तुम्हारे मददगार के लिए....

मिस्टर शर्मा उठते हैं। ताली लेकर एक आलमारी की ओर बढ़ते हैं। छाया उनके ठीक पीछे है और उसका रिवाल्वर अब भी उनकी खोपड़ी के पीछे चल रहा है।

छाया—इधर नहीं... इस आलमारी में तो तुम्हारी रिवाल्वर रखी है....मैं जानता हूँ....पीली फाइल उस आलमारी में है....जल्दी करो....उसे खोलो....

मिस्टर शर्मा चौंक कर उसकी ओर देखते हैं फिर दूसरी आलमारी की ओर बढ़ते हैं।

तभी स्वीच खटकती है और भक्क से उजाला हो जाता है।

रेखा—आपने मुझे बुलाया पिताजी ?

छाया—खबरदार लड़की ! हाथ ऊपर कर....

रेखा सर उठाकर अपने पिता की ओर देखती है, फिर उसकी निगाहें उनके पीछे खड़े हुए नकाबपोश पर, फिर उसके हाथ के दोनों रिवाल्वरों पर, जिनमें से एक मिस्टर शर्मा की खोपड़ी पर थी और दूसरा स्वयं उसके मस्तक की ओर।

वह चुपचाप हाथ ऊपर उठा देती है।

रेखा नकाबपोश को देख रही है और नकाबपोश रेखा को। मिस्टर शर्मा इसे लक्ष्य करते हैं। एक क्षण की असावधानी उनके लिये पर्याप्त है। वे घूमकर अपने सर के पीछेवाला नकाबपोश का हाथ मजबूती से पकड़ लेते हैं।

नकाबपोश तुरन्त ही चैतन्य होता है, मगर व्यर्थ।

नकाबपोश अजीब पशोपेश में पड़ गया है। अगर वह रेखा की ओर से अपना दूसरा रिवाल्वर हटाता है, तो हो सकता है रेखा ही कोई उत्पात करे। इधर अगर अधिक देर हो जाती है तो खतरे की सम्भावना है।

छाया—मिस्टर शर्मा ! मेरा हाथ छोड़ दो....छोड़....दो.... कहता हूँ छोड़ दो, नहीं तो तुम्हारी लड़की को गोली मार दूँगा.... गोली मार दूँगा....गोली....छोड़ो....छोड़ो....

नकाबपोश के कहने के बावजूद भी मिस्टर शर्मा उसका हाथ नहीं छोड़ते हैं। विवश हो नकाबपोश रिवाल्वर से रेखा के ऊपर गोली चला देता है।

धाँय !

धाँय की आवाज के साथ ही रेखा चीख कर गिर पड़ती है। मिस्टर शर्मा उसका हाथ छोड़ कर रेखा की ओर दौड़ते हैं।

छाया—(मिस्टर शर्मा को बीच ही में रोक कर) पहले वह पीली फाइल मुझे दे दो....

मि० शर्मा—निर्दयी, हत्यारे, खूनी !....ले फाइल...बेटी ही

न रही, तो फाइल, नौकरी, कुछ भी नहीं....

मिस्टर शर्मा फाइल निकाल कर नकाबपोश के मुख पर फेंक देते हैं। नकाबपोश उसे उठाकर भाग चलता है।

मिस्टर शर्मा जमीन पर पड़ी हुई रेखा की ओर दौड़ते हैं।

मि० शर्मा–मेरी बच्ची !....मेरी बेटी !....मेरी रेखा !....

रेखा–पिताजी !....मैं तो बिलकुल ठीक हूँ....

मि० शर्मा–(चौंककर) अरे !....तू बिल्कुल ठीक है ? (रेखा का शरीर देखने लगते हैं) कहीं चोट तो नहीं आई तुझे ?

रेखा–जरा भी नहीं पिताजी ! उसकी गोली छूटने के पहले ही मैं चीखकर गिर पड़ी थी....

मि० शर्मा–तू बड़ी पाजी है रेखा ! अगर तू चीखकर गिरी न होती, तो मैं कभी न बौखलाता और उस कम्बख्त का हाथ भी न छोड़ता....उफ् ! बड़े जरूरी कागजात ले भागा शैतान !....

रेखा–अगर मैं खड़ी रह जाती, तो उसकी गोली सीधे मेरे कलेजे में आ लगती....तब आपके कागजात बच जाते, भले ही रेखा चल बसती....

मि० शर्मा—अच्छा, जो हुआ उसका गम मत कर....

तभी वहाँ दाई भी आ पहुँचती है। सब हाल सुनकर हाय-हाय करने लगती है। रेखा को गोद में लेकर दुलारती तथा चूमती है, जैसे आज नई रेखा ने जन्म लिया हो।

मिस्टर शर्मा कलक्टर को फोन करने चले जाते हैं। फोन करके लौट रहे हैं तभी कोई दरवाजा भड़भड़ाता है।

खोलकर देखते हैं तो लाल दरवाजे पर खड़ा है।

लाल—क्या हुआ बाबूजी ! गोली छूटने की आवाज कैसी थी ?

मि० शर्मा—बड़ी भयानक घटना घट गई बेटा !....घर में एक डाकू घुस आया था। मेरे कुछ कागजात ले भागा....जाते समय उसने गोली भी चलाई। खैर हुई कि रेखा बच गई....

लाल—रेखा को कहीं चोट तो नहीं आई ?

मि० शर्मा—जरा भी नहीं....वह शैतान गोली छूटने के पहले ही डर से चीखकर गिर पड़ी थी और जब तक वह डाकू बाहर न निकल गया, तब तक उसने साँस भी न लिया....पुलिस कप्तान की बेटी इतनी डरपोक....

कहकर मिस्टर शर्मा हँस पड़ते हैं।

लाल लौट जाता है। उसे सन्तोष है कि गोली ने इतनी शराफत तो दिखाई कि रेखा को न लगकर ऊपर उड़ गई।

वह सड़क पर बढ़ जाता है। अपने घर नहीं जाता इस समय। ठंढक में कुछ चहलकदमी करके वह अपने अन्तर की गर्मी मिटाना चाहता है। वह सचमुच आज बेचैन हो उठता है।

उसने रेखा पर गोली चला दी।

अगर कहीं वह मर जाती तो?

न जाने कैसे उसके रिवाल्वर ने गोली उगल दिये ?

शायद कर्त्तव्य की प्रेरणा ने उसे बाध्य कर दिया हो रेखा के ऊपर गोली चलाने के लिये।

रेखा, जो लाल के इतने समीप है, अब तक गोली खाकर बहुत दूर जा चुकी होती, इतनी दूर कि लाल उसे छू न सकता, पकड़ न सकता, देख भी न सकता।

रेखा की मधुर वाणी उसे कभी सुनाई न देती।

वह जन्म जन्म तक, युग-युग तक अपनी उस हत्या के लिये पश्चाताप करता रहता। उसे कहीं चैन न मिलता, वह कहीं विश्राम की छाया न देख पाता।

मर कर रेखा उसे ऐसी चोट देती, जिसका घाव दिखाई न देता मगर हृदय के भीतर ही भीतर सड़ता चला जाता। लाल बरबाद हो जाता। उसकी क्रान्ति नष्ट हो जाती। उसके हाथ शिथिल हो उठते। उसके पैर डगमगा जाते। उसकी आँखें देख

न पातीं। उसके कान सुन न सकते। पंगु हो जाता। अपने अंग-अंग बेकार हो जाते। तब, आज का लाल, काल को मृत बन जाता। रेखा उसकी जीवन-रेखा जो था। लाल बढ़ता ही जा रहा था, चलता ही जा रहा था। हवा कुछ तेज हो चली। लाल ने बदन की चादर कसकर लपेट ली है।

उसके अन्तर की गर्मी दूर हो चुकी है और आँखों से पश्चा-त्ताप के आँसू बह निकले हैं।

वह हाथ उठाकर अपनी आँखें छूता है तो चौंक पड़ता है।

पर वह फौलाद का बना है, और अगर फौलाद का टुकड़ा जरा-सी चोट खाकर मुड़ जाय तो उसका मूल्य ही क्या? अगर पत्थर की मूर्ति की आँखों से आँसू ढलने लगे, तो वह जड़ नहीं चेतन है। क्रान्ति-दूत को जड़ होना चाहिये, सुख-दुख की अनुभूति से परे। चेतना हो तो केवल इतनी कि आँखों को केवल एक मार्ग दिखाई दे, क्रान्ति-मार्ग, लपटों से घिरा, ज्वालाओं से प्रज्वलित, कण्टकित, भयानक।

लाल अपने दिल को सम्हाल लेता है। फौलाद, फौलाद बन जाता है। पिघलने नहीं देता है, अपने हृदय को।

वह अपने आपको सजग करता हैं।

देखा, काफी दूर आ चुका है वह।

लौट पड़ता है तेजी के साथ अपने घर की ओर शायद सरदार इसी समय पीली फाइल लेने आये हों।

वह भी कितना लापरवाह है कि ठण्ढी रात में बिना किसी कार्य के इतनी दूर तक चला आया।

काफी तेजी से चल, वह अपने दरवाजे पर पहुँच जाता है।

ताला खोल भीतर प्रविष्ट हो जाता है।

तभी उसे लगता है, जैसे उस कमरे में और भी कोई है।

वह बहुत हल्का पदचाप सुनता है और किसी के पैरों से लगा-

कर कमरे की कोई चीज जरा-सी खड़कती है।

लाल—कौन है ?

जेब का रिवाल्वर हाथ में तन जाता है।

कोई आवाज नहीं आती। तुरन्त स्विच दबाकर बल्ब जला देखता है। कोई नहीं है।

म्याऊँ !....(आवाज आई)

और लाल का रिवाल्वर तुरन्त उस ओर घूम जाता है। एक काली-सी बिल्ली 'म्याऊँ' कहती हुई दूसरे कमरे में भागती है। लाल हँस पड़ता है। दाई की पालतू बिल्ली थी, जो चूहों की खोज में कभी-कभी लाल के घर भी तशरीफ लाती थी। लाल को अपनी आशंका पर बड़ी लज्जा आती है।

वह रिवाल्वर जेब में रखता है फिर वह उस बड़े से शीशे के सामने आ खड़ा होता है। शीशा हटाकर गुप्त आलमारी से वह पीली फाइल उठाता है और कुर्सी पर आ बैठता है।

वह देखना चाहता है कि उस फाइल में कैसे कागज हैं, जिन्हें लाने के लिये सरदार ने उसी को चुना।

अवश्य ही ये कागज बड़े काम के होंगे।

यदि सरदार ने उसे वह फाइल देखने को मना कर दिया होता तो वह उसे देखने की चेष्टा न करता।

परन्तु सरदार ने उसे ऐसी कोई आज्ञा नहीं दी थी, अतः वह उसे देखने का लोभ संवरण न कर सका।

कुर्सी पर आराम से बैठकर फाइल खोल देखने लगता है।

आज रात उसे नींद भी शायद ही आती, उद्वेग एवं मानसिक सन्तुलन खराब हो जाने के कारण। अतः समय काटने का अच्छा एवं मनोरंजक साधन उसके हाथ लग गया है।

ज्यों-ज्यों वह उस फाइल के कागज देखता जाता, त्यों-त्यों उसका आश्चर्य बढ़ता जाता।

सरकार के हाथ में मण्डल की एक शाखा का पूरा भेद आ चुका है। सदस्यों की नामावली भी है और हर एक का पूरा पता भी साथ है।

सोचने लगता है लाल—'ये कागजात सरकार के हाथ शायद आज ही लगे हैं, नहीं तो अब तक आफत आ चुकी होती....'

यदि यह फाइल इस समय लाल के पास न आ गई होती तो यह निश्चित था कि कल सबेरे ही मण्डल की उस शाखा के सभी सदस्य जेल के अन्दर दिखाई पड़ते। आश्चर्य में डूबा हुआ लाल पूर्णतया बेखबर है। उसकी कुर्सी की पीठ उस बड़ी-सी आलमारी के सामने है, जिसमें वह अपने कपड़े तथा अन्य साधारण सामान रखा करता है। लाल जब बाहर से आया था तो उसे कमरे में किसी आदमी के होने की शंका उठी थी परन्तु बिल्ली को देखकर उसने अपनी शंका का निवारण कर लिया था।

यदि वह उस समय जरा-सा और सावधानी दिखाता तो उसे तुरन्त ही एक आश्चर्यजनक घटना का पता लग जाता, परन्तु वह जानता ही क्या था?

कपड़ेवाली बड़ी आलमारी के पीछे कोई चीज हिलती है और एक काला सर जरा-सा बाहर होकर लाल की ओर देखता है।

लाल उसे नहीं देख सका, क्योंकि उसकी आँखे फाइल पर गड़ी हैं और पीठ आलमारी की ओर है।

वह काला सर जरा-सा और बाहर निकलता है।

नकाब में दो छेद हैं, जिसमें से दो आँखें चमक रही हैं। उन आँखों ने देख लिया कि लाल पूरा बेखबर है।

अब उस काले सर का काला शरीर भी धीरे-धीरे बाहर आने लगता है। आलमारी के पीछे से निकलकर वह लाल के ठीक पीछे आ खड़ा होता है।

एक नकाबपोश है, ऊपर से नीचे तक काले कपड़ों से ढंका।

उसके हाथ में रिवाल्वर भी दिखाई पड़ रहा है।

नकाबपोश थोड़ी देर तक लाल के पीछे चुपचाप खड़ा रहता है। जरा भी आहट नहीं होती है, अन्यथा लाल तुरन्त सावधान हो जाता। इस समय वह फाइल का आखिरी पेज देख रहा है।

नकाबपोश का रिवाल्वर वाला हाथ ऊपर उठता है। वह रिवाल्वर को उल्टा पकड़ उसकी मूठ आगे कर लेता है। पूर्ण सावधान है वह। जैसे ही लाल फाइल बन्द करता है, तैसे ही—

धप्प !

नकाबपोश के रिवाल्वर की मूठ जोर से भरपूर लाल के सर पर पड़ती है।

लाल का सर चकरा जाता है। वह उठना चाहता है।

उसका हाथ तेजी के साथ जेब में जाता है रिवाल्वर निकालने के लिये मगर—

धप्प !....धप्प !....धप्प !....

नकाबपोश के रिवाल्वर की मूठ तेजी के साथ उसके सर पर पड़ती गई। लाल असह्य चोट से बेहोश हो जाता है। उसका सर कुर्सी पर बैठे-बैठे ही लटक गया। अब नकाबपोश उसके सामने आ जाता है। वह पीली फाइल उठाता है। उलट-पुलट कर देखता है उसे। जब उसे निश्चय हो जाता है कि यह वही फाइल है, जिसकी खोज में वह यहाँ तक आया है तो वह उसे अपने लबादे के भीतर यत्न पूर्वक रख, लाल की ओर एक नजर डाल, तेजी के साथ बाहर निकल जाता है।

लाल ने इतना बड़ा धोखा कभी न खाया था।

वह भयानक पीली फाइल उसके हाथ में आकर भी चली जाती है। वह बेहोश पड़ा है कुर्सी पर। रिवाल्वर की मूठ ने मस्तक में एक जगह गहरा घाव कर दिया है, जिससे लगातार खून निकल रहा है। लाल के सफेद कुरते पर लाल-लाल धब्बे

पड़ते जा रहे हैं। दस मिनट तक लाल बेहोश रहता है फिर धीरे-धीरे उसकी चेतना लौटने लगती है।

थोड़ी देर में उसका मस्तिष्क ठीक हो जाता है।

तब उसे अपने मस्तक में पीड़ा की अनुभूति होती है। हाथ से मस्तक छूता है तो हथेली में खून लग जाता है। वह चौंक पड़ता है। धीरे-धीरे उसे सारी बातें याद आने लगती हैं। वह चारो ओर नजरें दौड़ाता है। पीली फाइल गायब थी। वह अपनी छाती पीट लेता है। कौन ले गया उसे ? किसने उसे घायल किया ? उसकी समझ में कुछ भी नहीं आता है। वह तेजी से उठता है, इधर-उधर खोजता है, मगर न तो पीली फाइल ही मिलती है और न आक्रमणकारी का ही कोई पता लगता है।

मस्तक में बहुत पीड़ा हो रही थी। बोरिक काटन निकालकर घाव पोंछता है, फिर थोड़ी-सी टिन्चर आयोडिन लगा कर पट्टी बांध लेता है। बैठे रहना उसके लिये अब कठिन है। खून निकल जाने के कारण उसका शरीर काफी शिथिल पड़ चुका है। कुर्त्ता बदलकर कर वह चारपाई पर जा लेट जाता है।

कम्बल ऊपर डाल लेता है। बल्ब जलता ही रहता है।

पड़े-पड़े लाल को नींद कहाँ ? विचारों की शृंखलायें आती रहीं और उसके घायल मस्तक को अर भी पीड़ा देती रही। चोट लगने के कारण मस्तिष्क भी ठीक से काम नहीं दे रहा है।

सुबह होने को आई, तब लाल की पलकें बोझिल हुईं। सोया भी तो चैन की नींद नहीं। अनेक दुश्चिन्तायें स्वप्न की छाया बनकर मानस-पटल पर नृत्य करती रहीं।

आठ बज गये, परन्तु लाल की निद्रालस आँखें नहीं खुली।

● ●

कोई उसका दरवाजा बाहर से ठेलता है। भीतर से खुले दरवाजे और भी खुल जाते हैं। रेखा खड़ी दीख पड़ती है।

रेखा—लाल भैया !....

लाल जगता नहीं। रेखा आगे बढ़ आती है। लाल की चारपाई के पास आ खड़ी हो जाती है।

रेखा—आज तो बहुत सो रहे हो लाल भैया ?

लाल की नींद खुल जाती है। धीरे से उठ बैठता है वह। रेखा को देखकर आश्चर्य होता है उसे। कैसी लड़की है कि इसकी नाराजी और खुशी का पता ही नहीं चलता।

मगर रेखा का गम्भीर मुँह कह रहा है कि वह लाल के पास अपनी खुशी से नहीं आई हैं, वरन् उसके हृदय की पीड़ा ने उसे वहाँ आने पर विवश कर दिया है। तभी रेखा की दृष्टि लाल के सर पर बँधी हुई पट्टी की ओर जाती है।

रेखा—(चीख कर) यह पट्टी कैसी बाँध रखी है लाल भैया ?

लाल—चोट लग गई थी रेखा !

वह दौड़कर लाल के पीछे चारपाई पर बैठती है। लाल के सर की पट्टी छूकर देखने लगती है। उसका मस्तक सहलाने लगती है। लाल को वह स्पर्श मरहम जैसा लगता है, जैसे घाव की पीड़ा कम होते-होते रेखा के उस कल्याणकारी स्पर्श में समा गई हो। लाल का सर पीछे की ओर झुक कर, रेखा के चेहरे के बगल से होता हुआ, उसके कन्धे पर आ टिकता है।

रेखा—लाल भैया ! चोट बहुत ज्यादा लगी है क्या ?

लाल—नहीं तो ! बहुत जरा-सी है.... यह क्या ? तू रोने लगी ?....आँसू बन्द कर ले रेखा ! चोट तो मुझे लगी है न ?

रेखा—हाँ लाल भैया ! और दर्द मुझे हो रहा है....यही तो मेरी विवशता है। कैसे चोट लग गई तुम्हें ?

लाल एकटक रेखा का मुख देख रहा है।

उसकी रेखा कितनी अच्छी है।

रेखा—लाल भैया !

लाल—क्या है ?....तू आज बहुत गम्भीर लग रही है रेखा !

रेखा—(भींगा स्वर) आखिरी बार मिलने आयी हूँ लाल भैया ! आज के बाद शायद तुम रेखा को कभी देख भी न सको.... जो कहना हो, कह डालो....रेखा से जो कुछ पाना चाहो, माँग लो....आज ही, अभी....

लाल—तेरा जी अच्छा नहीं है क्या ?....तू ऐसी बातें क्यों कर रही है ?

रेखा—आजकल जिन्दगी का कोई ठिकाना नहीं लाल भैया !....पुलिस अफसर की बेटी हूँ। बाप के दुश्मन हजार तो बेटी कब तक बची रह सकती है ? गेहूँ के साथ घुन भी तो पीसा ही जाता है और तभी शायद....

लाल—तुझे क्या खतरा है रेखा !

रेखा—क्या बताऊँ ?....खतरा कभी कहकर नहीं आता भैया !....खतरा तो भविष्य की गोद में छिपा रहता है और भविष्य की गोद तो इतनी अँधेरी हैं कि ज्योतिषियों की आँखें भी पग-पग पर धोखा खाती फिरें....

लाल—बड़ी गोल-मोल बातें कर रही है तू रेखा ! पहले तो तू एकदम आइने जैसी बातें करती थी....

रेखा—करती थी बहुत पहले भैया !....मगर तुम्हारे उस बड़े से आइने में सूरत देखकर किसका ध्यान ठीक रह सकता है....अपने को ही देखो। तुम रोज उस आइने में अपने को देखते हो तो अब ठोकरें भी खाने लगे हो....पहले भी लाल ने कभी ठोकरें खाई हों, ऐसी बात रेखा के कानों में नहीं पड़ी....मेरा खतरा तुम पूछते थे न लाल भैया ?....तुम्हें देखने की लालसा थी सो बच गई, नहीं तो आज रात को ही गोली लग चुकी थी....

लाल—(ईषत् मुस्कान) मुझे मालूम है रेखा ! मैं गोली की आवाज सुनकर तुम्हारे घर गया था और तुम्हारे पिताजी से पूछ-

कर लौट आया था...

रेखा—तुम लौट क्यों आये थे लाल भैया ! रेखा से इतनी नाराजी क्यों ? तुमने सुना कि रेखा भली-चंगी है, इसलिए लौट आये। रेखा मर चुकी होती तो उसे चिता तक ले चलने के लिये ठहर जाते। है न लाल भैया ?

लाल रेखा के पतले-पतले होठों पर हथेली रख देता है।

लाल—तू इतनी निराशावादी कब से हो गई।

रेखा—आशा का सहारा जब छूट जाता है लाल भैया तो निराशा ही हाथ लगती है... आशा की खोज मैंने की थी और जब निराशा हाथ आ लगी तो उसी से सन्तोष कर बैठी हूँ....तुम रूठे न होते तो किसकी मजाल थी, जो तुम्हारी रेखा को रिवाल्वर के सामने ला सकता....तुम नाखुश हो तो अब रेखा की जान की कीमत ही क्या रही ?

बड़ी देर तक मौन दोनों एक दूसरे की आँखों में देखते रहे।

रेखा की आँखों में आँसू तैर आये। धार गालों पर फूट पड़ी।

रेखा—लाल भैया ! तुम्हें उस पीली फाइल की जरूरत थी तो तुमने मुझसे क्यों नहीं कहा ?....क्यों अपनी जान खतरे में डालने गये तुम ?....पिताजी तुम्हें पहचान लेते तो वे तुम्हें क्या समझते....रेखा किस मुख से तुम्हारी सिफारिश करती उनसे ?.... यदि तुम मेरी जान की भूख ही लेकर वहाँ गये थे तो तुम यों भी अपनी भूख मिटा सकते थे....आजमाना चाहो तो निकालो रिवाल्वर लाल भैया ! कर दो मेरा कलेजा टुकड़े-टुकड़े। देखो, रेखा के मुख पर कोई शिकन आती है....

रेखा हिचकियाँ लेने लगती है। लाल उसका सर अपनी गोद से उठाकर कलेजे पर दबा लिया।

लाल—मेरी रेखा !....मेरी बच्ची !....तू कुछ दूसरा ख्याल मत कर। मैं जानता था कि तू मुझे पहचान लेगी फिर भी मुझे

तुम पर विश्वास था....

रेखा—विश्वास था तभी तो गोली दाग दी, सच जानो लाल भैया ! अगर मैं झूठमूठ चिल्लाकर गिरी न होती तो पिताजी तुम्हें जरूर बेकाबू कर देते....

लाल—मगर रेखा ! तू मेरे लिये इतना सब क्यों सह रही है ?

रेखा—केवल रेखा ही नहीं, आज की हर नारी बेज़बान है लाल भैया ! कुछ कहते नहीं बनता....आँखों के पानी में कोई भाषा लिखी देखो, तो पढ़ लो....न पढ़ सको तो यह मेरा दुर्भाग्य ! सोचा था, रूठ जाऊँगी, तो तुम्हें मेरा अभाव खलेगा और तुम मेरी कीमत समझोगे...मगर पत्थर का पुतला हिला भी तो जान का भूखा बन कर....अब तुमसे रूठ कर भी क्या करूँगी लाल भैया ! जो कुछ कहा-सुना हो क्षमा कर देना....

कुछ मिल जाय मालिक ! (बाहर से आवाज आती है)

रेखा—लो, मैं चल दी लाल भैया ! तुम्हारे भिखारी बाबा आ गये। एक दिन तुमने भीख क्या दे दी, यह बूढ़ा परच गया....देखो, इससे ज्यादा बातें मत करना...यह भिखारी मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगता। हमेशा तुम्हें देखकर अपना मस्तक खुजलाने लगता है लाल भैया !....

रेखा का अन्तिम वाक्य सुन लाल चौंक पड़ता है मगर रेखा जा चुकी है। बाहर आकर रेखा उसी बूढ़े भिखारी को देखती है।

रेखा—गुडमार्निङ्ग भिखारी साहब !....लाल भैया खुजली की दवा लेकर बैठे हैं, अन्दर जाओ....

कहकर रेखा एक उँगली से अपना मस्तक खुजला हँसकर निकल जाती है। भिखारी का चेहरा तमतमा जाता है।

इधर-उधर देखकर तेजी से लाल के कमरे में घुस जाता है।

भिखारी—लाल !

लाल—आइये सरदार !

भिखारी—मैं पूछता हूँ, यह क्या बात है ?

लाल—कौन-सी बात ?

भिखारी—ठीक से बोलो लाल !

भिखारी का स्वर अत्यन्त कठोर हो आता है। लाल देखता है, सरदार के हाथ का रिवाल्वर उसकी खोपड़ी पर तन चुका है।

लाल—आपका प्रश्न मेरी समझ में नहीं आया सरदार !

भिखारी—रेखा ने मुझे देखकर मस्तक क्यों खुजलाया ?.... इसमें क्या भेद है ?....तुमने उससे मेरे विषय में क्या कहा है ?

लाल—आप शान्त हों....मैंने उससे कुछ नहीं बतलाया है। बड़ी अजीब लड़की है। पता नहीं कैसे शक कर लेती है....

भिखारी—शक कर लेती है या तुम्हारी जबान उससे कह देती है ?

लाल—(दृढ़ स्वर) मेरी जबान पर अविश्वास हो तो काट लें उसे आप....आपका सन्देह मिट जाय....

भिखारी—लाओ, पीली फाईल कहाँ है ?

लाल—फाईल ?....पीली....सरदार !

भिखारी—क्या बात है ? ठीक-ठीक बोलो....

लाल—फाईल कोई मेरे यहाँ से उठा ले गया सरदार !

भिखारी—(कड़ा स्वर) उठा ले गया ?....या तुमने रेखा के कारण उसे वहीं छोड़ दिया....

लाल का सर चकरा जाता है।

धम्म से वह कुर्सी पर गिर पड़ता है। सरदार थोड़ी देर तक लाल के सर में बंधी हुई पट्टी को देखता है।

भिखारी—तुम्हारे सर में यह पट्टी कैसी बंधी है ?

लाल—किसी ने मुझे घायल करके बेहोश कर दिया था और वह पीली फाईल उठा ले गया....

भिखारी—पट्टी खोलो....

लाल पट्टी खोलता है। सरदार घाव देखता है।

भिखारी—बांध लो इसे अब....

लाल पट्टी बांध लेता है। सरदार एक कुर्सी पर बैठ जाता है।

भिखारी—कौन था वह ?

लाल—मैंने देखा नहीं सरदार ! मुझे वह दिखाई ही न पड़ा....

भिखारी—क्यों....वह लुप्त होकर आया था या तुम्हारी आँखें बन्द थीं....?

लाल—उसने पीछे से वार किया था सरदार ! मैं सम्हल न सका और बेहोश हो गया...

भिखारी—इसी कमरे में घटना हुई थी ?

लाल—जी हाँ....

भिखारी—और तुम इतने लापरवाह रहे कि अपने कमरे का भी ध्यान न[illegible]ी रहा तुम्हें ?....रात में कब की बात है यह ?

लाल—लगभग दो बजे की....मैं कुर्सी पर बैठा हुआ पीली फाईल देख रहा था....

भिखारी—(तीव्र स्वर) पीली फाइल देख रहे थे तुम ?

लाल—हाँ सरदार !

भिखारी—क्यों ? उसे देखने से तुम्हारा क्या मतलब था ? उसे देखने की आज्ञा तुम्हें किसने दी थी ?

लाल—आपने मना भी तो नहीं किया था सरदार !

भिखारी—और मैंने यही कब [illegible]हा था कि तुम उसे पढ़ना ? तुम्हारे काम की चीज तो वह थी नहीं...तुमने उसे क्यों देखा ? अगर तुम फाईल न देखते होते तो उसे यह पता भी न चलता कि तुमने कहाँ रखी है....

लाल—मुझसे गलती हुई सरदार !....मैं अपना अपराध स्वीकार करता हूँ....

भिखारी—गलती तो चन्द्रनाथ से भी हुई थी, उसका फल

तुम सुन चुके हो....

लाल—मगर चन्द्रनाथ ने जान-बूझकर गलती की थी, सरदार! मैं तो विवश था....

भिखारी—(बिगड़ कर) क्या बकते हो लाल ? क्या तुम्हारा यह मतलब है कि उस पीली फाईल को देखने के लिये किसी ने तुम्हें विवश किया था ?

लाल—जी नहीं, बल्कि वह बदमाश मुझे बेहोश करके ही पीली फाईल ले गया....

भिखारी—(नम्र स्वर) लाल ! आज मुझे तुम्हारी बातों पर विश्वास नहीं हो रहा है....मैं इस मामले को छान-बीन करूँगा....अगर तुम अपराधी साबित हुए तो मेरे हाथ से कभी बच न सकोगे, चाहे तुम जहाँ रहो....

लाल—अगर मेरा अपराध आप साबित कर सकेंगे तो मैं हमेशा सजा भोगने को तैयार रहूँगा सरदार !

भिखारी—लाल ! तुम नहीं जानते कि वह पीली फाइल कितनी कीमती थी ?

लाल—मैं जानता हूँ सरदार !....पहले ही कह चुका हूँ कि मैंने उसे पढ़ लिया था....

भिखारी—ठीक है....पता नहीं वह फाईल किसके हाथ पड़ी ?

लाल—किसी सरकारी जासूस के हाथ लगी होगी ?

भिखारी—मूर्ख हो तुम लाल ! सरकार के हाथ वह फाईल लगी होती तो अब तक तुम यहाँ न दिखाई पड़ते और मंडल की वह शाखा तो तुरन्त बरबाद कर दी गई होती....

लाल—बड़ी विचित्र घटना है....कौन ले गया वह फाईल ?

भिखारी—मैं विचार कर रहा हूँ....शायद वही ले गया हो, जिसने तुमसे पहले ही जज का खून कर डाला था....

लाल—ओह !....(दीर्घ निश्वास) मैं तो बिलकुल ही भूल

गया था। वही ले गया होगा....मगर ले क्यों गया? वह पीली फाईल उसके किस काम आयेगी?

भिखारी—यह तो वही जाने, जो ले गया है....मगर लाल! इस रेखा का यहाँ आना मुझे पसन्द नहीं....

लाल—क्यों?

भिखारी—वह मुझे अच्छी नहीं लगती....

लाल—अजीब बात है सरदार! अभी वह भी कह रही थी। कि भिखारी मुझे अच्छा नहीं लगता....क्या कारण है? मैं जब तक यहाँ रहूँगा, वह मेरे पास आयेगी ही, वह रूठ भी जाती है और फिर मनाने भी आ जाती है....उसको कहा क्या जाय? लड़की बड़ी हठी है....

भिखारी—तुम्हारी राय है कि उसे दल में मिला लिया जाय?

लाल—ऐसा हो जाय तो बहुत अच्छा हो सरदार!

भिखारी—मगर मैंने यह निश्चय कर लिया है कि हमारे दल को किसी भी लड़की की जरूरत नहीं....मैं तुम्हें रेखा से दूर ले जाने की कोशिश करूँगा....(उठकर खड़ा हो जाता है) मैं चलता हूँ। उस पीली फाईल का पता लगाने के लिये जासूसों का एक बड़ा गिरोह छोड़ूँगा....जो भी ले गया होगा, बच नहीं सकेगा... अब हमें और होशियार रहने की जरूरत है। मालूम होता है, कोई दूसरा भी गिरोह है जो सरकार का शत्रु है और हमें नीचा दिखाकर स्वयं आगे बढ़ना चाहता है....तुम अपने जरूरी सामान तैयार रखो। किसी भी समय मेरी आज्ञा मिलते ही तुम्हें यह स्थान छोड़ देना होगा....

लाल—बहुत अच्छा....

भिखारी बाहर निकल कर चल पड़ता है।

रेखा अपने दरवाजे पर खड़ी है। भिखारी उसे देखकर सड़क के उस पार की पटरी पकड़ लेता है, ताकि वह फिर कोई शैतानी

न कर सके। मगर रेखा उसे देख लेती है, जैसे वह इसी के इन्तजार में खड़ी हो।

रेखा—भिखारी !...ओ भिखारी साहब ! ...ओ बूढ़े बाबा !

भिखारी को रुकना पड़ जाता है।

भिखारी—क्या है बच्ची ?

रेखा—अरे भिखारी बाबा ! इधर भी भीख देनेवाले लोग रहते हैं....उधर ही से क्यों चले जा रहे थे ?

भिखारी—पेट भरने को मिल जाता है बेटी ! अधिक नहीं मांगता। सोचता हूँ जुटाकर कोई सेठ तो बनना है नहीं....

रेखा—ठीक है भिखारी !....लाल भैया के पास आकर भी तुम्हारा पेट न भरे तो कहाँ भरेगा ? कभी इधर से भी भिक्षा ले लिया करो....लाल भैया तुम्हारा पेट भर सकते हैं तो रेखा के दरवाजे से कभी भूखे नहीं जाओगे। लाल से कम रेखा की ताकत नहीं। देखना चाहो तो कभी आजमा लेना....

भिखारी—भिखारी क्या आजमायेगा बेटी ! कुछ देना हो तो ला दो, चलूँ, पका-खाकर पेट भरूँ....

रेखा—देने के लिये ही तो तुम्हें बुलाया है बाबा ! और ऐसी चीज दूँगी तुम्हें कि पकाने की जरूरत ही न पड़े। पका-पकाया तैयार; सिर्फ खाने की देर....लाल भैया की तरह तुम्हें तांबे का पैसा नहीं दूँगी मैं कि उसे तुम्हारे बूढ़े दांत तोड़ ही न सकें....

भिखारी—बड़ी अच्छी हो बेटी तुम ! अच्छा अब देर न करो....

रेखा—अभी लाती हूँ बाबा ! तुम अपनी झोली खोले रहो। लाल भैया की तरह हाथ में भीख थोड़े ही दूँगी मैं। पूरी झोली भर दूँगी तुम्हारी....

रेखा अन्दर चली जाती है।

तभी आ पहुँचता है रामलाल। अपना चश्मा उतार कर हाथ में लिये पोंछता आ रहा है। वह भिखारी से टकरा जाता है।

रामलाल—(चौंककर) बाईगाड, आज कल मुझे टकराने की आदत पड़ती जा रही है। ज़रा-सा चश्मा आँख पर से उतरा नहीं कि भूचाल आ जाता है। साला चश्मा भी....(चश्मा पहन कर भिखारी को देखता है)—हाउ आर यू प्लीज़?

भिखारी—बच्चा....

रामलाल—व्हाट बच्चा? बाईगाड, मुझे बच्चा मत समझना मिस्टर भिखारी! हमारी लाइफ में कोई वाइफ आई होती तो अब तक कई बच्चे हो गये होते जस्ट लाइक यू!....यहाँ क्यों खड़े हो फादर!

भिखारी—भीख के लिये बेटा!

रामलाल—बाईगाड, यह पुलिस कप्तान का बंगला है....भाग जाओ नहीं तो भीख के बदले भर पेट खाना मिलने लगेगा जेल के भीतर.. ओह, मिस रेखा! बाईगाड, बड़ी दयालु हो....दे दो, बेचारा बूढ़ा है....लो मिस्टर भिखारी! रोज़ यहीं से भीख ले जाया करो। एक महीने के अन्दर तुम्हारी हड्डी पर तोंद न निकल आये....

रेखा आ गई थी। हाथ में एक छोटी-सी लम्बी गठरी थी।

रेखा—लो बाबा!.. यह गठरी सम्हालो। इसमें थोड़ी-सी रोटियाँ और कई पहनने के कपड़े हैं...तुम बहुत खुश होगे भिखारी! ठीक से ले जाओ इन्हें। एक ही दिन में मैंने तुम्हें इतनी भीख दे दी है कि लाल भैया साल भर में भी नहीं दे सकते....

रामलाल—बाईगाड, अगर एक दिन में इतनी भीख मिल सकती है तो मैं भी जासूसी छोड़कर भीख माँगना ही शुरू कर दूँ....

भिखारी गठरी ले लेता है।

भिखारी—ईश्वर तुम्हें सुखी रखे चाँदनी में नहाओ और....

रामलाल—चाँदनी में नहाओ और बाईगाड, रोशनी में पलो....कैसा तगड़ा आशीर्वाद है मिस रेखा?....जी चाहता है, मैं भी इस भिखारी को कुछ देकर दो-चार आशीर्वाद ले लूँ....कम

से कम पानी में नहाने और चाय पर पलने का आशीर्वाद तो मिल ही जायगा (जेब टटोलता है। उलट कर दिखाता है) आज तो जेब में पूरी हड़ताल है। क्यों मिस्टर भिखारी ! फ्री आशीर्वाद नहीं दे सकते ?

भिखारी—जियो बेटा !

भिखारी चलने लगता है तो रेखा उसे रोकती है।

रेखा—भिखारी तुम्हारे माथे की खुजली दूर हो गई या नहीं ?

भिखारी—(गम्भीर स्वर) वह तो मेरी आदत है बच्ची !

चला जाता है भिखारी। रेखा उसे बड़ी देर तक देखती रहती है कि दाई की आवाज आती है।

दाई—रेखा ! ओ रेखा !

रेखा—आई....

रामलाल—(डरता हुआ) यह तो उसी की आवाज है....

रेखा—आओ मिस्टर रामलाल ! डरते क्यों हो ?

रामलाल—बाईगाड, हम तो अपने फादर से भी नहीं डरते...

दोनों अन्दर आते हैं। डर से रामलाल रेखा के पीछे दुबका हुआ चल रहा है। सामने ही दाई खड़ी है।

रेखा—(दाई के पास आकर) जरा-सी हटी नहीं कि लगती हो चिल्लाने। रेखा को तावीज बनाकर पहन लो दाई अपने गले में.... झंझट छूट जाय....क्या कहती हो बोलो....

दाई—उस मुए बूढ़े को इतनी बड़ी गठरी में क्या दे आई ?

रेखा—तुम्हारा खजाना दे दिया और क्या ?

दाई—खजाना दिया होगा अपने बाप का, हमारे बाप तो मर भी गये और इतनी बड़ी गठरी की शकल भी न देख सके.... ये भिखमङ्गे भी आजकल नाबदान के कीड़ों की तरह उतरा पड़े हैं....मेरा बस चले तो एक-एक को....

रेखा—एक-एक को नहीं दाई ! दो-दो कीड़ों को एक साथ

मुँह में रखना। तुम जो न कर डालो वह थोड़ा। बूढ़ी हो गई मगर बूढ़ों को देखकर जलती हो....

दाई—मुझसे मजाक करती है तू?... लुटा दे सब कुछ। अब जो बोलूँ तो कहना। मेरा क्या जाता है? (रामलाल को देखकर) यह आज फिर आया....यह साहब का बच्चा मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगता रेखा!... कप्तान साहब नहीं रहते तो यहाँ आता ही क्यों है?

रामलाल—मैं तो मिस रेखा के साथ आया हूँ ग्रैंड मदर! बिगड़ो मत, मेरी जान तो यों ही... उल्टे तुम बिगड़ती हो....

दाई—रेखा! तू इस जेन्टलमैन को अपने साथ क्यों लाई अन्दर? बन्दर जैसी शक्ल भाड़ से निकल....

रामलाल—बाईगाड, भाड़ से आदमी नहीं निकलते ग्रैंड मदर! बन्दरों जैसी शकल मेरी हो तो नाक काट लो... मैं रोज-रोज शीशे में अपनी ब्यूटी देखा करता हूँ....यह मेरा इन्सल्ट है, मैं इसे बरदाश्त नहीं कर सकता। अभी चला जाता हूँ....

चला जाता है रामलाल।

दाई—क्यों रेखा! तुझे कब अकल आयेगी। इस बन्दर को क्यों अन्दर पकड़ लाई, उस भिखारी को इतनी बड़ी गठरी दे आई, उल्टे मुझसे ऐंठ रही है....बोल न, उस गठरी में क्या था?

रेखा—थोड़ी-सी रोटियाँ और कुछ कपड़े....बस यही तो....

दाई—बस यही तो....जैसे इसका बस चलता तो सारा धन ही लुटा देती....कभी अपनी बिल्लो को दूध पिलाने को कहती हूँ तो इसे बुखार लग जाता है मगर गली के कुत्तों को खिलाने से इसे जुकाम भी नहीं होता....

रेखा—(हँस कर) बहुत हुआ दाई! अब मत बिगड़ो नहीं तो सर में तुम्हारे दर्द हो जायगा। अब कभी किसी भिखारी को कुछ नहीं दूँगी....रोज-रोज तुम्हीं तो भीख देती थी....

दाई—मैं देती भी तो क्या तेरी तरह अंधी बनकर? भिखारी को एक पैसा या एक चुटकी आटा काफी होता है। भीख देने का मतलब यह नहीं कि मन-दो-मन एक की ही झोली में डाल दे... जितना भीख तूने एक को दी है, उतने में सौ भिखारियों को देती तो सौ आशिर्वाद पाती और सौ का पेट भी भरता....

रेखा—मैं आशिर्वाद की भूखी नहीं दाई !

दाई–(नम्र स्वर) तू नहीं जानती रेखा ! ये भिखमंगे भी रोजगार करते हैं। मुझसे माँगकर दूसरों के हाथ बेच देते हैं....

रेखा–तुम भी शायद यही रोजगार करती थी दाई ! है न ? अनुभव हो तो ऐसा....

दाई—मैं क्यों भीख माँगती ?... मेरी तरह दूसरी कौन होगी ? भरी जवानी में वे छोड़कर चले गये। दूसरी औरत होती तो गली-गली कूड़ा सूँघती.... मगर मैं थी कि तुझे देख-देखकर ही दिन बिता दिये.... एक तू है कि अभी से लाल के पीछे पीली बनी घूमती है....

रेखा—चुप रहो दाई ! बेकार की बातें बहुत आती हैं.... लाल भैया को गली का कूड़ा बनाती हो ?

दाई—लो.... यह लड़की तो इतनी दूर उड़ जाती है कि पकड़ना मुश्किल.... तेरे लाल को गली का कूड़ा कौन कह रहा है पाजी ? वह तो हीरा है, जैसे तू, वैसे ही वह.... है न रेखा ?

रेखा–है तो मगर तुम अब कभी ऐसी बातें मत किया करो....

दाई—अच्छा, नहीं करूँगी बाबा ! तू खुश रहे.... बूढ़ी दाई मरे चाहे जिये.... अब कहाँ जा रही है ?

रेखा—लाल भैया के पास....

दाई—अब नहीं आयेगी यहाँ ?

रेखा—नहीं, कभी नहीं....

दाई—अच्छा मत आ.... मैं आज ही कप्तान साहब से एक छटांक जहर मँगाकर खा लूँगी....

रेखा—खा लेना दाई !....एक ही छटांक क्यों, भरपेट खाना....ऊपर से थोड़ा पानी भी पी लेना, नहीं तो जहर का असर ठीक से न होगा....समझीं ?

दाई—समझ गई....

रेखा लाल के घर की ओर बढ़ती है। दरवाजे पर आती है तो लाल अपना सामान बाँधता दिखाई पड़ रहा है।

रेखा—लाल भैया !

लाल—आओ रेखा !

रेखा अन्दर आ जाती है। चारों ओर देख, सामान बाँधते हुए लाल की ओर दृष्टि डालती है।

लाल सर नीचा किये हुए अपने कार्य में व्यस्त है।

रेखा—लाल भैया !

लाल—क्या है ?

रेखा—यह सब क्या कर रहे हो ?

लाल—सामान बांध रहा हूँ....

रेखा—कहीं की तैयारी है क्या ?

लाल—(विषण्ण-मुख) तभी तो....

रेखा—(साश्चर्य) कहाँ की ?

लाल—यहाँ से बहुत दूर की....

रेखा—यहाँ से क्यों, रेखा से बहुत दूर की कहो लाल भैया !.... ऊब गये हो न मुझसे ? तभी तो दूर भाग रहे हो ! रेखा अगर लोहे की बेड़ी होती तो तुम्हारे पांवों में पड़कर रोक लेती....फूल की माला है तो गले पड़ कर ही रोकेगी तुम्हें.... (कह कर वह लाल के गले से लिपट जाती है) न जाओ लाल भैया ! रेखा का मन सूना करके अपने मन की मत करो....तुम

यहाँ से जाकर रेखा को भूल जाओगे मगर रेखा का दिल तुम्हें खोजेगा तो कहाँ मिल पाओगे तुम ?

लाल—मेरी खोज छोड़ो रेखा !....लाल को भूल जाओ अब...

रेखा—लोग तो स्वप्न को भी नहीं भूल पाते लाल भैया ! फिर मैं तो जागते-जागते में तुम्हारे साथ रही हूँ, तुम्हें मैंने होश की आँखों से देखा है, तुम्हारी आवाज सुनी है, तुम्हारे गले से लगी हूँ, तुम्हें परेशान किया है....इसे भूल जाना मेरे वश की बात नहीं....

लाल—भूलने की कोशिश करना रेखा !

रेखा—(गीले नेत्र से) लाल भैया ! तुम्हें पाने की कोशिश की मगर पा न सकी....अब अपनी कोशिशों पर मुझे विश्वास नहीं रहा....तुम्हें नहीं भूल पाऊँगी लाल भैया ! तुम्हें जाना ही था तो इतने धीरे-धीरे मुझमें समाये ही क्यों थे ? दिल जब तोड़ना ही था तो इसे जोड़ा ही क्यों था ? तुम्हारा तो खेल हुआ लाल भैया ! मगर जिसके साथ तुम खेले, वह तो मिट्टी में ही मिल के रही....

लाल—(स्नेहपूर्वक) मेरी बात जानती हो रेखा ! (उसका सर सहलाने लगता है) लाल कहीं भी रहेगा, उसका दिल रेखा के ही पास बसेगा....कहीं भी रहूँ, तुम्हें हमेशा अपने पास देखूँगा....

रेखा—तुम ऊँचे उठ चुके हो लाल भैया ! रेखा को दूर से भी देख सकते हो दिल की आँखों से, मगर रेखा तो जमीन पर पड़ी हुई एक क्षीण-असहाय रेखा ही है....वह तुम्हें अपने सामने देख कर ही सन्तोष पा सकती है ।

लाल—रेखा ! मैंने तुम्हें इतना कमजोर कभी नहीं देखा था....

रेखा—तुम्हारे जाने की बात सुनकर आज रेखा कमजोर हो चली है, चले जाओगे तो रेखा मिट ही जायगी, यह निश्चित है लाल भैया !....क्या ठहर नहीं सकते तुम ?

लाल—विवश हूँ रेखा !

रेखा—मेरे लिये भी नहीं रुकोगे लाल भैया !

लाल—नहीं... मुझे जाना ही होगा....

रेखा—तुम्हारी इस विवशता के पीछे कौन-सी शक्ति है ?

लाल—शक्ति का नाम मत पूछो रेखा ! रुक सकता तो कभी जाने का नाम न लेता....रुक नहीं सकता तो रेखा का नाम लेकर ही चला जाऊँगा....

रेखा—मगर केवल लाल के नाम से रेखा का दिल न बहल सकेगा लाल भैया !

लाल—दिल से बढ़कर भी और बहुत सी समस्यायें हैं रेखा ! उन्हें मत भूलो...

रेखा—जिसे तुम याद आओगे, उसे और क्या याद रहेगा भैया ? रेखा को पंगु बनाकर जा रहे हो। यहाँ रहते तो मुझे भी उन समस्याओं को सुलझाने का मौका मिलता....

लाल—मुझे रोको मत रेखा ! तुम रोकोगी तो शायद जा न सकूँगा मैं....

रेखा—तुम जाना चाहोगे तो मैं तुम्हें रोकूँगी भी नहीं लाल भैया !....तुम रेखा के दिल से भी बड़ी समस्यायें सुलझाने जा रहे हो तो रेखा भी अपनी समस्या किसी न किसी तरह सुलझा ही लेगी....जाओ तुम ! रेखा को तुम भूल सकते हो मगर भूलना नहीं, यही रेखा की अन्तिम चाह है....इसे चाहे तो सम्हाल कर रखना, चाहे तो फेंक देना....

लाल रेखा की आँखें पोंछता है। रेखा लाल से अलग हो जाती है। वह उसके पैर छूकर, हसरतभरी नजरों से उसके चेहरे की ओर देख पलटकर कमरे से बाहर हो जाती है। लाल अपनी आँखें उस ओर से घुमा लेता है। थोड़ी देर तक वह सफेद छत की ओर सूनी दृष्टि से देख, एक कुर्सी पर आकर बैठ जाता है।

रेखा ! काश अपने लाल की मजबूरी तुम समझ पाती ? (स्वतः वह बड़बड़ाता है)

वह पुनः उठकर अपना सामान ठीक करने लगता है।

सरदार ने उसे आज्ञा दी है कि वह अपना सामान तैयार रखे, आज्ञा मिलते ही किसी भी समय वह स्थान उसे छोड़ देना पड़ेगा।

और यदि वह रेखा के लिये रुक जाता है तो सरदार उसे कर्त्तव्यच्युत की उपाधि दे देंगे। क्या करे वह ? उसका हृदय रेखा का है परन्तु शरीर देश का। वह हृदय से प्रेम कर सकता है और शरीर से कर्त्तव्य का पालन। कर्त्तव्य का पालन उसे पहले करना है और हृदय की पीड़ा उसे बाद में देखनी है तभी—

लाल ! (बाहर से कोई पुकारता है)

वह सर उठाकर देखता है।

बाहर मिस्टर शर्मा खड़े थे अपनी पूरी वर्दी में।

लाल—आइये बाबूजी !

मिस्टर शर्मा अन्दर आकर गौर से चारों ओर देखने लगते हैं। लाल का माथा ठनकता है। क्या वह पीली फाईल सरकार के हाथ पड़ गई ? तभी तो मिस्टर शर्मा पूरी वर्दी में उसके पास आये हैं। इसके पहले वे कभी उसके यहाँ नहीं आये थे। शायद उसे गिरफ्तार करने आये हों।

उनके साथ बाहर पुलिस भी जरूर होगी।

मि० शर्मा—कहीं जा रहे हो क्या लाल ?

लाल—जी हाँ....

मि० शर्मा—कहाँ जा रहे हो ?....अभी मैं एक काम से बाहर जाने को तैयार था, तब तक आँखों में आँसू लिये रेखा पहुँच गई। उसी ने मुझे बताया....

लाल—अपने गाँव जा रहा हूँ बाबूजी ! माताजी की तबियत इधर ठीक नहीं रहती। अभी कुछ दिन पहले गया था तो बहुत

रोने लगी थीं....अब मुझे यहीं रहना पड़ेगा....

मि० शर्मा—तुम अपनी माताजी को भी यहीं ला रक्खो बेटा ! हमारा इतना बड़ा घर तो पड़ा है....

लाल—मैंने उनसे कहा था बाबूजी ! मगर वे शहर आने को तैयार नहीं हुईं....

मि० शर्मा—क्यों ?

लाल—पुराने विचारों की हैं। सोचती हैं, शहर में आकर उनका धर्म नष्ट हो जायगा....

मि० शर्मा—(हँसकर) यह बात है....अच्छा तो गाँव जाकर हमें भूल न जाना....रेखा को कभी-कभी पत्र लिख दिया करना.... चलता हूँ अब....कोई तकलीफ यहाँ हुई हो तो ख्याल न करना....

मिस्टर शर्मा चले जाते हैं। आधे घण्टे तक लाल सामान वगैरह ठीक करता रहता है। सब सामान ठीक करके वह हाथ-मुंह धोकर कुर्सी पर आ बैठता है।

तभी—

मिस्टर लालचन्द (बाहर से पुनः कोई पुकारता है)

लाल—कौन है ?....अन्दर आइये....

आगन्तुक को देखकर लाल हँस पड़ता है।

वे मिस्टर बिलफोर्ड हैं। अपनी पूर्व-परिचित पोशाक में....

लाल—आइये मिस्टर बिलफोर्ड ! मिजाज तो अच्छे हैं ?

बिलफोर्ड—थैंक्यू !

एक उंगली से मस्तक खुजलाता हुआ कुर्सी पर बैठ जाता है।

लाल—मैं एकदम तैयार हूँ सरदार !

बिलफोर्ड—मैं देख रहा हूँ, मगर अब इसकी जरूरत नहीं....

लाल—क्यों ?

बिलफोर्ड—तुम्हारे लिये अभी मैं कोई अच्छा स्थान निश्चित नहीं कर पाया हूँ। कुछ दिनों तक तुम्हें यहीं रहना पड़ेगा....

लाल—मगर सरदार ! मैं रेखा और मिस्टर शर्मा आदि से विदाई ले चुका हूँ....

बिलफोर्ड—(हँसकर) तब तो और अच्छा है....यहाँ दो-चार दिन एक रहना फिर जाकर मिल आना....

लाल—तो मैं अपना सब सामान खोल दूं ?

बिलफोर्ड—जरूर....और अपने सर की यह पट्टी भी....जख्म तो अब भर ही चुका होगा, यहाँ का रहना सुनकर...

लाल—आपको मुझ पर शंका है सरदार !

बिलफोर्ड—शंका थी मगर अब मिट गई....इसीलिए तुम्हें यहाँ रहने दे रहा हूँ। मिस्टर शर्मा का पड़ोसी बनने से तुम बहुत सुरक्षित हो....हाँ ! बड़ी कोशिशों के बाद मुझे वह पीली फाइल मिल गई। बड़ी परेशानी उठानी पड़ी उसके लिये....

लाल—फाईल मिल गई ? कहाँ ? कौन ले गया था उसे ?

बिलफोर्ड—बस लाल !....इसके आगे नहीं। जिसने वह फाईल गायब की थी, वह इस समय मेरे पंजे में है। कभी जान जाओगे। अभी तो उसे मुझे दण्ड देना है....

लाल—क्या जज की हत्या भी उसी ने की थी ?

बिलफोर्ड—हाँ ! बड़ा चतुर तथा चालबाज है वह....बस इसके आगे नहीं....मुझे अभी बहुत काम करने हैं....गुडबाई....

बिलफोर्ड उठकर चला जाता है।

लाल स्तब्ध-सा उसकी ओर निहारता रह जाता है।

● ●

रेखा का मुख उजड़ा-सा लगता है, वीरान। सौन्दर्य फीका पड़ गया है, आँखें पीली-पीली हो रही हैं। उसने चाय पी है, खाना भी खाया है, हँसने की कोशिश भी की है मगर उसकी हर हरकत के पीछे जैसे उसके आंसू उमड़ आना चाहते हैं।

लाल चला गया होगा अब तक, यही उसका ख्याल है और

आनेवाले को जाते समय वह अपनी भरी-भरी आँखें नहीं दिखाना चाहती थी, इसीलिये लाल के घर की ओर देखा भी नहीं उसने।

लैम्पपोस्टों के प्रकाश में डूबी मिस्टर शर्मा के बंगले के सामने की सड़क दीख पड़ती है। एक सायकिल सवार धीरे-धीरे गुनगुनाता हुआ तेजी से निकल जाता है।

रेखा के कमरे का दृश्य सामने आता है। कमरे में जीरो पावर का एक ग्रीन बल्ब जल रहा है, रेखा प्यानो के सामने बैठी है। करुण स्वर में गीत की मार्मिक पंक्तियाँ जैसे बिलख रही हैं—

दिल में मीठी आग नयन में सागर बन कर आना
होठों में मदिरा भर करके धीरे से मुस्काना
चंचल जल में देख रहे बादल अपनी परछाई
चाँद की किरनें खेल रही हैं पंखड़ियां मुस्काई
फूंक दिया है शमा ने उसको तड़प रहा परवाना
होठों में मदिरा भर करके धीरे से मुस्काना
मेरे नयनों में हँसती है उनकी सूरत प्यारी
उजली चादर तान सो रही बाहर केसर-क्यारी
जिसने इतना दर्द दिया उसको हमने पहचाना
होठों से मदिरा भर करके धीरे से मुस्काना

●

प्यानो एक बार जोर से झनक कर मौन हो जाता है। उस पर सिर टिका, रेखा सोयी दीख पड़ती है।

● ●

दोपहर का समय, रेखा अपनी छोटी-सी सायकिल निकालती है। मिस्टर शर्मा कहीं गये हैं। दाई काम में व्यस्त है।

अकेली रेखा सूने घर की चहारदीवारी में क्यों कैद रहे? लाल चला गया तो वह रोये क्यों? वह उसे भूल सकता है तो रेखा क्यों उसे याद करती रहे?

दाई—कहाँ चल पड़ी रेखा ?

रेखा—घूमने....

दाई—सायकिल पर ?

रेखा—हाँ....

दाई—रेखा ! ठीक से चलाना सायकिल, हाथ-पैर तुड़ाकर मत लौटना....

रेखा—अब तो हाथ-पैर जरूर टूटेंगे...तुमने कह दिया है न झूठ कैसे होगा ? जब कहीं बाहर जाने लगती हूँ तो तुम्हारी जबान चल पड़ती है....

रेखा पैडिल पर पाँव रखकर सायकिल की सवारी कसती है। सायकिल उसे ले दौड़ती है। बाजार में पहुँच गई है रेखा। भीड़ अधिक है परन्तु रेखा कच्ची सवारी नहीं करती। चली आ रही है वह। मुख्य बाजार छोड़कर वह पतली गली में घूम पड़ती है। कहाँ जा रही है, कुछ पता नहीं है उसे।

तभी चौदह-पन्द्रह की एक लड़की दौड़ती आकर रेखा को सायकिल से टकरा जाती है। दोष रेखा का नहीं है, फिर भी वह लड़की तो गिरी ही, रेखा भी सायकिल लिये-दिये गिर पड़ती है।

उठकर देखती है, कपड़ों में धूल लग गई है।

रेखा को क्रोध आ जाता है।

वह गरीब लड़की फटे-पुराने कपड़ों में लिपटी, उठकर काँप रही है। भिखमंगी लड़की को देखकर रेखा को और भी क्रोध हो आता है। लपक कर कई चाँटे उस गरीब के मुख पर और पीठ पर दो-चार घूँसे जमा देती है। लड़की रोने लगती है।

रेखा—(बिगड़ कर) सुअर कहीं की !....मुझे गिरा दिया और अब रोती भी है....

लड़की—(रोते हुये) मैंने जान-बूझकर तो नहीं गिराया तुमको... मेरे पीछे दो-तीन लुच्चे पड़ गये थे....भागने की धुन में

मैंने दे..ा नहीं....

रेखा—लुच्चे ?....तेरे पीछे पड़े थे ?

लड़की—हां....

रेखा—क्यों ?

लड़की—(शरमा कर) मेरा शरीर लेना चाहते थे दईमारे !

रेखा—तू कौन है ? क्या करती है ?

लड़की—गांव की गरीब लड़की, किस्मत के फेर में पड़कर शहर में आकर भीख मांग रही हूं बहन ! मगर भीख भी कोई बेदाम नहीं देना चाहता मुझे....

रेखा—तेरे माता-पिता कोई हैं ?

लड़की—कोई नहीं....घर-बार भी नहीं रहा....अकेली बच रही हूं....शरीर देना चाहूं तो शरण भी मिल जाय मगर दिल से मजबूर हूं....

रेखा—(मुस्कराकर) इस उम्र में सभी का दिल मजबूर ही रहता है....तेरा दिल क्योंकर मजबूर हुआ, बतायेगी मुझे ?

लड़की—एक परदेसी ने लूट लिया और खुद चलता बना....

रेखा—तेरा नाम ?

लड़की—नयना !

रेखा—नाम तो बड़ा अच्छा है, सूरत भी अच्छी है मगर कपड़े....नयना ! तू मेरे यहां चलेगी ?

नयना—मुझे मारना मत बहन ! चलने को तैयार हूं....पग-पग पर लुटनेवाली अगर किसी बड़े घर की छांह पा जाय तो क्या कहना ?

रेखा—तेरा बात करने का ढंग तो बड़ा अच्छा है....कुछ पढ़ी भी है तू नयना ?

नयना—नहीं जी ! तुम पढ़ा देना मुझे....

रेखा—पढ़ा दूंगी....

नयना—चार दिन की नौकरी देकर फिर अलग तो न करोगी ?

रेखा—नहीं पागल !... तुझे नौकरी कौन दे रहा है ?...तू तो मेरी सहेली बनकर रहेगी....पिताजी तुझे देखकर बहुत खुश होंगे और दाई की बातों का कुछ ख्याल मत करना तुम....

नयना—अच्छा जी, मैं जरा भी ख्याल नहीं करूंगी... तुम्हारा घर तो बहुत बड़ा है न ?

रेखा—हाँ....थोड़ा-थोड़ा छोटा ही समझो, मगर तुम्हारे रहने के लिये जगह काफी है....तू रहेगी तो मेरा अकेलापन भी दूर हो जायगा....

नयना—मगर मुझे विश्वास नहीं होता ?

रेखा—किस बात का ?

नयना—यही कि तुम मुझे रक्खोगी अपने यहाँ, अभी सायकिल से टक्कर दे दी कि मेरा घुटना ही फूट गया....

रेखा—(घबराकर) घुटना ?....देखूँ तो....

नयना ने अपना लहँगा उठाकर खून से भरभराया दाहिना घुटना दिखाया ।

रेखा—तुझे चोट लग गई है....अब तक तू चुप क्यों थी रे उल्लू ! घाव सेप्टिक हो जायगा तो पैर ही काट देना पड़ेगा...

नयना—(लापरवाही के साथ) ऐसी-ऐसी चोटें तो हम गाँव वाले हँसकर अच्छा कर लेते हैं बहन !

रेखा—(हँसकर) और दिल की चोट जब तुम गाँववालों से सम्हाले नहीं सम्हलती, तो परदेसी की खोज में शहर आकर भीख माँगना शुरू कर देती हो । है न ?

नयना—(भोले चेहरे पर विचित्र-सी मुस्कान आ जाती है) दिल की चोट की बात दूसरी है जी !

रेखा—चल, आ पीछे बैठ जा....

नयना—कहाँ ?

रेखा—इसी सायकिल पर, और कहाँ ?

नयना—हटो जी ! मैं इस मशीन पर कभी बैठी नहीं, कहीं गिरा दो, तो मेरा दूसरा भी घुटना फूट जाय....

रेखा—फूटने दे न....हँस-हँसकर उसे भी अच्छा कर लेना.... आ, अब देर न कर....बैठ जा....

नयना—तुम्हीं बिठा दो बहन ! मुझे बैठना नहीं आता....

रेखा—अच्छा आ....

रेखा सहारा देकर उसे केरियर पर बिठा लेती है। फिर स्वयं भी सीट पर बैठकर सायकिल चलाने लगती है।

नयना—तुम्हारा शरीर तो बड़ा कोमल है, फिर यह मशीन कैसे चला लेती हो ?....इसे तो मर्द चलाया करते हैं....

रेखा—आजकल की लड़कियाँ मर्द से कम थोड़े ही हैं....

नयना—तो क्या तुम लोग मर्द का सारा काम खुद कर लेती हो ?

रेखा—चुप शैतान कहीं की....हिल मत, नहीं तो गिर जायगी....

नयना—बहन ! दो पैर का इन्सान जब नहीं गिर सकता, तो दो पहियों की मशीन क्यों गिर जाती है ?....मेरी समझ में यह बात नहीं आती....

रेखा—दो पैर का इन्सान ईश्वर बनाता है और दो पहियों की मशीन इन्सान की कारीगरी से बनती है, यही अन्तर है दोनों में....समझ में आया ?

नयना—थोड़ा-बहुत....तुम्हारे साथ रहूँगी तो बड़ी जल्दी सब सीख जाऊँगी....

रेखा—क्या सीख जायगी ?

नयना—यह मशीन चलाना, यही क्यों, मर्द के सारे काम सीख लूँगी....

रेखा—इतना हिल क्यों रही है ?

नयना—नहीं तो....ठीक से तो बैठी हूं जी। मगर इतनी ही देर में बदन अंकड़ गया....तुम्हारा अंकड़ा की नहीं?....तुम तो और भी अधिक मिहनत कर रही हो....

रेखा—तेरी तरह लजारो-लता नहीं हूं मैं कि इतनी जल्दी पस्त हो जाऊं...

नयना—रहने दो जी!....एक दिन खेत में काम करना पड़े, तो नाक का पसीना आंख से बहने लगे....

तभी रास्ते से गुजरते रामलाल की दृष्टि उनपर पड़ती है।

रामलाल—रेखा! ओ मिस रेखा! बाईगाड, एक बात सुनती जाओ....

रेखा उतर पड़ती है। नयना उतरते वक्त गिरते-गिरते बची।

रामलाल—(पास आकर) बाईगाड, आज यह लोहे की सायकिल भी सोना हो गई मिस रेखा! पारस हो पारस तुम.... अरे यह कौन है?

रेखा—यह मेरी सहेली है....

रामलाल—ह्वाट? सहेली!....बाईगाड, आप तो कूड़े में से हीरा निकाल लाई हैं मिस रेखा!....कपड़े जरा गन्दे, मगर चांद पर बदली का होना जरूरी है नहीं तो लोगों की नजर लग जाती है....योर नेम मिस?

नयना—किसमिस लेनी है तो दुकान पर जाओ और छुहारा लेना हो तो पानी में अपना मुंह देखो, बन्दर कहीं का....

रामलाल—बाईगाड, इस लड़की को मैंने कहीं देखा है....

रेखा—इसका नाम नयना है....

रामलाल—नाम भी कहीं सुना है....बाईगाड, अब मेरी मेमोरी भी बहुत वीक होती जा रही है....अच्छा गुडबाय....

रामलाल चला जाता है।

रेखा और नयना सायकिल पर फिर रवाना होती हैं।

नयना—क्यों जी, यह तुम्हारा साहब कौन था ? भुना बैंगन की तरह आँख निकाल कर मुझे घूर रहा था....

रेखा—अरे, वह तो पागल है....

रेखा की साइकिल तेजी से भागने लगती है। नयना को इस बार वह आगे बिठा लेती है। सड़क पर काफी भीड़ हो गयी है। सायकिल कार, बसें, आदि को अपने एकदम पास से गुजरता पा, नयना चिहुँक-सी उठती है। रेखा सायकिल की स्पीड और तेजी करती है तो वह घबरा उठती है।

नयना—अरे-अरे !

रेखा—(बिगड़कर) चुप रह शैतान !

तब तक रेखा का बँगला आ जाता है।

रेखा उतर पड़ती है और नयना को भी उतारती है।

रेखा—देख नयना ! मैं यहीं रुक जाती हूँ। तू निडर होकर भीतर घुस जा....दाई को खूब छकाऊँगी....तुझे बिगड़े तो ख्याल मत करना। कह देना, मैं रेखा की सहेली हूँ....तब तक मैं पहुँच जाऊँगी....डरेगी तो नहीं ?

नयना—नहीं जी ! मैं क्यों डरूँगी ?....दाई बूढ़ी ही तो होंगी, दांत तो होंगे नहीं कि काट खायेंगी....मेरे भी दांत कम तेज नहीं....

रेखा—अच्छा, तो तू जा घर में....एकदम सीधी चली जा....

नयना—अच्छा जी, तुम देखती रहो, मैं एकदम नाक की सीध में जाऊँगी....

नयना अन्दर प्रविष्ट होती है। सामने से ही बूढ़ी दाई कोई सामान लिये चली आ रही है। नयना के भिखारी बेश पर उसकी दृष्टि जाती है तो आग की तरह जल उठती है।

दाई—कहाँ घुसी आ रही है रे ?....

नयना—यहीं तो....

दाई—तेरे बाप का घर है क्या ?

नयना—नहीं जी, रेखा के बाप का है। वह मेरी सहेली है....

दाई—चल हट सहेली की बच्ची! अभी बाहर निकल, नहीं तो ठोक कर दूँगी....

नयना—अजी रहने भी दो, किसी दूसरे वक्त ठीक कर लेना....मेहमान पर इतना बिगड़ती क्यों हो?

दाई—देख लड़की! भीख माँगना हो तो बाहर से आवाज दे....चोरी करने का इरादा हो तो बोल, सीधे मानेगी या नहीं?

नयना—मान जाऊँगा ....रेखा नहीं है क्या?

दाई—रेखा सोई है....इस वक्त कुछ नहीं देगी....जा भाग....

नयना—भागती हूँ, घबराई क्यों जाती हो?....इतनी दूर गाँव से चलकर आई और तुम दुत्कार रही हो...लो जाती हूँ।

दाई—(चौंककर) गाँव से?....गाँव से आई है तू? किस गाँव से आई है तू?

नयना—क्या नाम है....क्या कहते हैं....

दाई—हरिपालपुर से तो नहीं?

नयना—हाँ-हाँ....वहीं से आ रही हूँ....

दाई—किसकी लड़की है?

नयना—क्या कहते हैं....क्या नाम...

दाई—शिवराम की लड़की है क्या तू?....वह तो मर गया....उसकी बहू भी बड़ी लक्ष्मी थी....

नयना—हाँ-हाँ, मैं शिवराम की ही लड़की हूँ....

दाई—अरे मुई! तूने अब तक बताया क्यों नहीं....मेरा भाई लगता था शिवराम....बेचारा मर गया। बहुत दिन हुए सुना था। तू अभी तक बची ही है?

नयना—हाँ....

दाई—अच्छा हुआ तू आ गई....गाँव के लोग तो अच्छे हैं?

नयना—हाँ....एकदम अच्छे....

दाई—रेखा को तू कैसे जानती है ?

नयना—गाँव पर ही सुना था कि तुम रेखा के यहाँ काम करती हो....पता लगाते-लगाते थक गई....तुमको पहचानती भी तो नहीं थी....

दाई—अब पहचान ले...यहीं रहेगी न ?

नयना—और कहाँ जाऊँगी ?

दाई—अच्छा चल बैठ....रेखा आये तो कह देना, बुआ के पास आई हूँ....कुछ बिगड़े तो बुरा न मानना। बड़ी शैतान लड़की है....

नयना—(हँसकर) अच्छा बुआ ! तुम कहोगी तो मैं उसे ठीक कर दूंगी। एक ही तमाचे से मुँह पूरब से दक्खिन घूम जायगा....

दाई—चुप रे लड़की !....कहीं सुन ले तो लगे उछलने-कूदने....

रेखा बाहर खड़ी सब सुनती है। उसे सन्तोष होता है कि नयना ने बातचीत के सिलसिले में दाई से रिश्तेदारी कायम कर ली और उसे कोई कैफियत देने की अब जरूरत नहीं रही।

वह सोचती है, चलो बला टली, नहीं तो दो-चार दिन तक दाई के ताने-बाने तो जरूर ही सुनने पड़ते।

तभी उसकी दृष्टि लाल के घर की ओर अनायास ही जाती है। कमरे में रोशनी हो रही है। देखकर रेखा को बड़ा विस्मय होता है। लाल भैया अभी तक गये नहीं या उनके घर में कोई दूसरा आ बसा ? घर तो उसी का है। उसके पिता ने किसी नये किरायेदार के आने की बात भी तो नहीं बताई। रेखा अपनी सायकिल लिये-दिये लाल के दरवाजे पर आ जाती है। वह घण्टी दो-तीन बार जोर से बजाती है।

लाल—(अन्दर से) कौन है ?

रेखा सायकिल बेतहासा पटक देती है और दौड़कर लाल के कमरे में घुस जाती है।

लाल कुर्सी पर बैठकर कोई पुस्तक पढ़ रहा है।

रेखा—लाल भैया !

लाल—आओ रेखा, बैठो...

रेखा—(बैठते हुये) तुम लौट आये क्या ?

लाल—जाने का इरादा बदल दिया रेखा !

रेखा—अब नहीं जाओगे कभी ?

लाल—कभी की बात छोड़ो, फिलहाल तो नहीं जा रहा हूँ....

रेखा—तुम बड़े बुरे हो लाल भैया ! मुझे खबर तक न दी। मैंने दिन भर तक कुछ खाया नहीं....मनमारे बैठी ही रही....

लाल—रहने दे झूठी कहीं की....अभी दाई से पूछकर आ रहा हूँ। तूने चाय भी पी, खाना भी खाया, हँसी-कूदी भी और सायकिल लेकर घूमने भी गई थी....क्या मुझे मालूम नहीं ?

रेखा—पत्थर मालूम है तुम्हें लाल भैया ! तुम्हारे लिये कितनी बार रोई, इसे न तो दाई ही जान सकती है और न तुम्हीं....गये क्यों नहीं तुम ?

लाल—मेरी इच्छा...मेरा रह जाना तुझे बुरा लगा क्या ?

रेखा—नहीं तो....मगर तुम मेरे लिये तो रुके नहीं होगे लाल भैया !....जरूर उस भिखारी ने तुम्हें रोका होगा, नहीं तो उसे भीख कौन देता ?

लाल—तू नहीं देती क्या ?

रेखा—कल तो दी थी लाल भैया ! पेट भर गया होगा बेचारे का, इसीलिये शायद आज आया नहीं....

लाल—क्या दिया था उसे ?

रेखा—खाना और क्या ?....दो-एक पुराने कपड़े भी दिये थे....पाकर बहुत-बहुत आशीर्वाद देने लगा....उसी के आशीर्वाद का फल है कि तुम अपने-आप रुक गये, नहीं तो रेखा की इतनी कदर तुम्हारे दिल में कहाँ लाल भैया ?

लाल—कहाँ गई थी सायकिल पर ?

रेखा—(हँसकर) शिकार करने ...

लाल—शहर में सड़कों पर शिकार खेलती है तू ?....और वह भी सायकिल पर ?

रेखा—सायकिल इतनी बुरी तो नहीं ? सवारी का भी काम दे और शिकार को घायल करने के लिये हथियार का भी....

लाल—वाह ! क्या कहने हैं....किसका शिकार कर लाई तू ?

रेखा—एक देहाती लड़की ही तो है....मेरे इतनी बड़ी चंचल, शोख....सामने आ पड़ी तो मैंने उसका ही शिकार कर डाला। बेचारी का घुटना फूट गया था....अभी ही तो चली आ रही हूँ उसे लेकर....

लाल—उसे भी लाई है अपने साथ ?

रेखा—तब क्या ?

लाल—कहाँ रखेगी उसे ?

रेखा—अपने साथ....अपनी सहेली बनाकर....

लाल—दाई तो तेरी जान खा लेगी....उसे कैसे समझायेगी ?

रेखा—यह मंजिल भी तय हो चुकी है लाल भैया ! घर आकर मैंने पहले उसे ही अकेली अन्दर भेज दिया....शैतान इतनी कि अन्दर जाकर दाई की बुआ बन बैठी....

लाल—(हँसकर) दाई की बुआ ?

रेखा—अरे नहीं, दाई की भतीजी समझो....दाई ने उसे खुद ही रख लिया....पिताजी भी जब सुनेंगे कि दाई की भतीजी है, तो बड़े खुश होंगे....मैं तो बाहर ही बाहर तुम्हारे पास चली आई....

लाल—अभी तक तो एक तू ही थी मेरा सर खाने को, अब एक तेरी सहेली भी आ गई....

रेखा—वह तो मुझसे भी अधिक चञ्चल है....तुम्हारा सर पूरा का पूरा खा डालेगी....कल लाऊँगी उसे तुम्हारे पास....

लाल—कोई जरूरत नहीं, उसे अपने ही पास रख...यहाँ

लायेगी तो मैं निकाल बाहर करूँगा उसे....

रेखा--रहने दो लाल भैया !....तुम्हारे निकालने से भी वह टलेगी नहीं... अच्छा चलूँ, उसकी भी खबर ले लूँ....

लाल--रेखा ! आज बड़ी अच्छी टाफी लाया हूँ....खायेगी एक ?

रेखा—एक ही नहीं, दो खाऊँगी....डाल दो मुँह में....

रेखा मुँह खोल देती है।

लाल--दो ही क्यों, चार ले...

लाल जेब से टाफी निकाल कर रेखा का मुँह भर देता है। बाहर आकर रेखा अपनी सायकिल उठाती है और घर आ जाती है। बारामदे में दाई नयना के पास बैठी हुई खूब बातें कर रही है।

दाई—(रेखा को आती देखकर) बेटी ! ठीक से बैठ, रेखा आ रही है....अरे, तूने अपने कपड़े भी नहीं बदले ? देखकर क्या कहेगी रेखा ?

रेखा-(नयना को देखते हुये) दाई ! यह लड़की कौन है ?

नयना इस तरह सिटपिटा जाती है, जैसे रेखा को उसने कभी देखा ही न हो।

दाई—यह लड़की....यह लड़की....मैं इसकी बुआ हूँ रेखा ! अभी थोड़ी देर हुई, गाँव से आई है....बड़ी सीधी लड़की है यह....एकदम मेरी बिल्ली की तरह....

रेखा—यह बिल्ली यहाँ क्यों आई है दाई ?

दाई—भेंट करने बेटी !....छोटी-सी थी तभी इसे देखा था.... बेचारी के माँ-बाप सभी मर गये हैं...तुम चलो कपड़े बदल लो....

रेखा-चलती हूँ....मगर, यह लड़की यहाँ से जायगी कब ?

दाई-यह....यह तो....यह तो अब हमारे ही पास रहेगी रेखा ! बूढ़ी हो गई हूँ, तेरी देख-भाल ठीक से नहीं कर पाती। यह रहेगी तो अच्छा रहेगा....

रेखा—नहीं दाई ! इसे अभी निकाल बाहर करो....इसके

कपड़े भी ठीक नहीं....

दाई—कपड़े मैं अभी बदलाये देती हूँ बेटी !...बुरा न मान....

रेखा—अच्छा नहीं मानूँगी मगर इससे कह दो, ठीक से रहेगी, नहीं तो अच्छा न होगा....

और वह अपने कमरे में चली जाती है।

रेखा—(पुकारते हुये) दाई ! उसे यहाँ भेज दो, कपड़े दे दूँ....

दाई और नयना दोनों ही आती हैं।

रेखा अपने कुछ कपड़े उसे दे देती है।

रेखा—ले, इन्हें अभी पहन ले....

दाई खुश हो जाती है, रेखा की सहृदयता पर।

नयना स्नान करके कपड़े बदल लेती है। नये कपड़ों में वह काफी सुन्दर दीखने लगती है। दाई चली गई तो नयना रेखा की ओर देखकर हँस देती है।

रेखा—बड़ी चालबाज है तू ! बुढ़ी को फाँस ही लिया...

नयना—(मधुर हँसी) मेरी बुआ को कुछ मत कहना जी कितनी अच्छी हैं बुआ ?

रेखा—बुआ की बच्ची ! मैं आज बहुत खुश हूँ....

नयना—मुझे पाकर ?

रेखा—नहीं रे, लाल भैया नहीं गये....वे मुझे छोड़कर चले जानेवाले थे....

नयना—क्यों ?....कहाँ ?

रेखा—बड़े विचित्र आदमी हैं नयना ! मेरे लाल भैया अच्छे तो हैं, मगर उनके दिल पर किसी का मोह असर ही नहीं करता....चिकने घड़े पर जितना ही आँखों का पानी डालो, वह चमकता चला जाता है...वह क्या उस बगल वाले मकान में रहते हैं....मुझे बहुत चाहते हैं....

नयना—बहुत-बहुत....

रेखा—हाँ....

नयना—थोड़ा-बहुत कम ही चाहते होंगे रेखा दीदी ! नहीं तो तुम्हें छोड़कर कभी नहीं जाते....

रेखा—वह जा ही कहाँ सके ?....सब सामान ठीक करके भी रुकना पड़ा उन्हें....

नयना—मुझे भी अपने लाल को दिखाओ कभी ?

रेखा—कल ही ले चलूँगी तुझे उनके पास....देख लेना, कितने अच्छे हैं....

नयना—कितने अच्छे क्या होंगे जी....मेरे परदेसी से कम ही होंगे....फिर भी देखूँगी तो जरूर....तुम्हारे पिताजी कहाँ हैं ?

रेखा—अभी आते ही होंगे, पुलिस के आदमी ठहरे, बहुत व्यस्त रहते हैं....

नयना—(चौंककर) पुलिस के आदमी ? तुम्हारे पिता पुलिस के आदमी हैं रेखा दीदी ?

रेखा—हाँ....पुलिस के अफसर हैं....कप्तान....तुझे देखकर बहुत खुश होंगे....

नयना—(चलती हुई) अच्छा, मैं जाकर बुआ के काम में हाथ तो बटा लूँ....

● ●

रात में मिस्टर शर्मा थके-मांदे लौटते हैं।

रेखा और वे साथ खाने बैठते हैं। नयना खाना लाती है।

मि० शर्मा—आज दाई कहाँ गई रेखा ! फिर बीमार पड़ी क्या ?....और यह लड़की कौन है ?

रेखा—यह दाई की भतीजी है....आज ही गाँव से आई है....

मि० शर्मा—अच्छा...तब तो इसे भी यहीं रोक ले रेखा ! दाई की मदद कर दिया करेगी, लड़की भी अच्छी मालूम देती है।

नयना खड़ी थी मिस्टर शर्मा की ओर देखती हुई। उसे वे

बड़े दयालू लगे। तब तक दाई भी आ जाती है।

दाई—अरे मुई! बाबूजी के पैर तो छू....

नयना मिस्टर शर्मा के पैर छूती है।

वे आशीर्वाद देते हैं।

मि० शर्मा—यह तुम्हारी भतीजी है दाई?

दाई—हाँ! अब तो आपकी ही शरण में आ गई है बेचारी...

मि० शर्मा—(हंसते हुये) इसे अपनी शरण में रख लो दाई!...मेरी शरण में रहेगी तो दिन रात जासूसी करते-करते परेशान हो जायेगी....

दाई—तब तो रेखा ही इसे शरण देगी....

रेखा—मैंने तो इसे अपनी सहेली बना लिया है पिताजी!

मि० शर्मा—चलो, अब तो एक की जगह दो बेटियाँ हो गईं....अच्छा ही हुआ....

नयना—अब एक बेटा भी खोज लें पिताजी!

मि० शर्मा—लाल तो है ही....

रेखा गम्भीर हो जाती है।

मि० शर्मा—इसका नाम क्या है दाई?

दाई—बचपन में तो हम लोग 'बचिया' ही कहते थे....यह कहती है, नयना नाम अच्छा रहेगा....

मि० शर्मा—ठीक है, नयना! तू भी आ, साथ ही खा लें....

दाई—(बीच ही में) इसे अभी से सर पर न चढ़ाइये.... गरीब की लड़की प्यार पाकर बिगड़ जायगी....

मि० शर्मा—इसे गरीब की लड़की मत कहो....यह तो मेरी लड़की है....रेखा की बहन, क्यों रेखा! यह लड़की पसन्द है तुझे?

रेखा—बहुत पिताजी!....नयना बात-चीत बहुत अच्छे ढंग से करती है....

नयना—दीदी ने ही मुझे सिखाया है पिताजी! जो कुछ

बाकी है, वह भी सीख लूँगी, बहुत जल्द....

मि० शर्मा—लाल ने इसे देखा कि नहीं अभी ?

रेखा—अभी नहीं पिताजी ! कल इसे ले जाऊँगी उनके पास....

मि० शर्मा—वह भी देखकर बहुत खुश होगा....

रेखा—जी हाँ....

सभी लोग खाने लगते हैं। दाई परोसने लगती है।

• •

रेखा और नयना लाल के दरवाजे पर खड़ी दीख रही हैं। दिन काफी चढ़ आया है।

रेखा—देख, यही लाल भैया का घर है....

नयना—(साश्चर्य) यह घर है ?....इतना छोटा-सा ? तुम्हारे लाल भैया अकेले ही हैं क्या ?....बाल-बच्चे तो कुछ दिखाई नहीं पड़ते....

रेखा—लाल भैया तो अभी खुद बच्चे हैं, लाल भैया !.... ओ लाल भैया !...आऊँ अन्दर ?

लाल—(जोर से) आती क्यों नहीं, बाहर से ही बाँग देती रहेगी ?

रेखा—देखा....अभी बाहर ही हूँ कि लगे काट खाने...पहरा दिलवाना हो तो लाल भैया को पाल ले....है न नयना ?

नयना कुछ बोलती नहीं। अन्दर से आई हुई लाल की आवाज सुनकर उसके कान सतर्क हो जाते हैं।

यह चिरपरिचित स्वर रेखा के लाल भैया का है या नयना के कानों के परदों का सन्देह ?

रेखा—आ नयना ! भीतर चल....

रेखा नयना का हाथ पकड़, लाल के कमरे में आती है। लाल मेज पर बैठा कुछ लिख रहा है। रेखा को आया जानकर भी वह सर नहीं उठाता है। लिखता ही रहता है। नयना और

रेखा उसकी मेज की बगल में आ जाती है।

नयना की दृष्टि लाल के चेहरे पर पड़ती है।

लाल—(लिखते ही लिखते) उधर कुर्सी पर बैठ जाओ....

नयना एकटक लाल का चेहरा देखने लगती है। उसके दिल की धड़कन तेज हो जाती है।

उसका बाबू, उसका परदेसी सामने ही तो था।

रेखा—लाल भैया ! देखो न, यह कौन आया है ?

लाल—सीधे से बैठ जा रेखा ! मैं अभी पाँच मिनट में खाली हुआ जाता हूँ....

मगर रेखा लाल को लि[illegible] नहीं देती है।

वह उसकी फाउण्टेनपेन छीन लेती है।

लाल—(सिर उठाकर) शैतान कहीं की....

रेखा हंस रही है। नयना गम्भीर है।

लाल के नेत्र नयना से मिलते हैं।

चौंक पड़ता है लाल, मगर वह अपने को सम्हालता है। नयना तो बहुत पहले ही सम्हल चुकी थी। वह निश्चल खड़ी रही। भर-भर आती हुई आँखों को वह दूसरी ओर कर लेती है।

लाल—यह कौन है रेखा ?

रेखा—वही लड़की....कल तो बता चुकी थी....

लाल—ओह....तू तो कहती थी कि यह बड़ी चञ्चल है.... पत्थर को भी क्या चञ्चल कह सकते हैं रेखा ?

रेखा—बड़ी चञ्चल थी लाल भैया !....सच कहती हूँ....तुम्हें देखकर न जाने क्यों गुमसुम हो गई है ?....बैठ नयना ! इस कुर्सी पर बैठ जा। लाल भैया से शर्माती है क्या ?

नयना—नहीं बीजी !

नयना कुर्सी पर बैठ जाती है। रेखा उछलकर लाल की कुर्सी के आर्म पर आ बैठी, उसके गले में हाथ डाल देती है।

रेखा—लड़की कैसी है यह लाल भैया ?

लाल—अच्छी नहीं है रेखा !

रेखा—तुम्हीं अच्छे नहीं होगे....

नयना एक बार लाल की ओर देखती है, फिर रेखा की ओर, और फिर लाल के गले में माला बनी हुई उसकी सुकुमार बाँहों की ओर। नयना का [illegible]र चकरा जाता है।

उसका परदेसी आज दूसरे का है। उसकी निधि लुटेरा लूट रहा है। नयना तड़प उठती है। गाँव की भोली लड़की लाल और रेखा को क्या जाने, क्या समझे ?

रेखा—नयना ! तू भी कुछ बोल....

नयना—क्या बोलूँ ?

रेखा—मेरे लाल भैया कैसे हैं ?

नयना—बहुत अच्छे....बहुत-बहुत....

रेखा—तेरे परदेसी से तो थोड़ा कम ही होंगे....क्यों नयना ?

नयना—नहीं-नहीं, रेखा जीजी !

रेखा—लाल भैया ! इस लड़की को मासूम मत समझना, बेचारी एक परदेसी को अपना दिल दिये बैठी है। उसी की खोज में आई थी शहर....

लाल कुछ बोलता नहीं। अजीब पशोपेश में पड़ जाता है।

नयना—रेखा जीजी ! ऐसी बातें न करो, मैं चली जाऊँगी....

रेखा—लाल भैया से तू अपने परदेसी की हुलिया बता दे, अभी खोजकर ला देंगे नयना !

लाल—रेखा ! तू बड़ी शैतान लड़की है....बेचारी को नाहक तकलीफ दे रही है....

रेखा—मैं तो परेशान हूँ लाल भैया ! अभी यहाँ आने से पहले यह तुम्हें देखने को बड़ी उत्सुक थी....तुम्हें देखकर अब यह गम्भीर हो रही है...

नयना—मैं देख चुकी रेखा जीजी ! अब जाती हूँ, तुम आना....

कहकर नयना उठ खड़ी हुई। और बिना रुके चली जाती है।

रेखा—अजीब लड़की है....

लाल—हाँ....

रेखा—तुम्हें भी कुछ हो गया है क्या लाल भैया ?

लाल—नहीं तो....

रेखा—(परेशान स्वर) तुम भी बड़े गम्भीर हो चले हो.... बात क्या है ?

लाल—कुछ नहीं रेखा....इस लड़की का नाम क्या है ?

रेखा—नयना !....नाम क्यों पूछ रहे हो तुम ?

लाल—(बिगड़कर) मूर्ख नहीं तो....नाम पूछना कोई अपराध है क्या ?

रेखा—(हँसकर) अपराध तो नहीं है लाल भैया !....मगर उसके सामने तुमने नाम क्यों नहीं पूछा ? शर्म तो आती नहीं होगी तुम्हें, पुरुष जो ठहरे...

लाल—लड़की बड़ी अच्छी है रेखा !

रेखा—सुन्दर कहो लाल भैया ! दिल की बात ढेढ़े-मेढ़े ढङ्ग से जबान पर मत लाओ....उसे भी तुम कम अच्छे नहीं लगे हो, तभी तो इतनी जल्दी उठकर भाग गई....

लाल—एक बात तुमसे कहनी थी....मगर अभी नहीं कहूँगा...

रेखा—(उत्सुक होकर) तब कब कहोगे ?

लाल—बहुत जल्द....

रेखा—शायद यही कहोगे कि नयना तुम्हें बेहद पसन्द आई है....इतनी पसन्द कि एक और एक मिलकर एक होना चाहते हो ...है न यही बात लाल भैया ?

लाल—चुप रह तू !....बेवक्त की शहनाई बजाने लगती है.... चल, उतर कर दूसरी कुर्सी पर बैठ....

रेखा—नहीं बैठती, चाहो तो ढकेल दो ..मन की बात छू गई तो उबल पड़े....अभी दाई से कह दूँ तो अपनी भतीजी को तुम्हारे गले में बाँध दे....

लाल–रखे रह अपनी दाई की भतीजी को अपने ही पास.... मैं दूसरी बात कहना चाहता था....

रेखा—तुम्हारी बातों का भी कुछ ठिकाना है लाल भैया ? इधर भिखारी बाबा नहीं आये कभी ?

लाल—तूने भीख तो काफी दे दी थी न....जब सब खतम हो जायगा, तब....

रेखा—मगर उसे अपने मस्तक की खुजली की दवा लेने तो आना ही था तुम्हारे पास....लाल भैया ! वह शीशा....तुम्हारा वह बड़ा-सा आईना क्या हुआ ?

लाल—उसे हटा दिया....

रेखा–मेरे डर से न ?....मैं तो केवल एक दिन ही उसके पास गई थी....तुम नाराज हो गये लाल भैया ?

लाल–नहीं....

रेखा—तो शीशा क्यों हटाया ?....उसके पीछे की आलमारी ?

लाल—तू आज पूछ कर ही रहेगी। मानेगी नहीं ?....उस दिन मेरे कमरे से एक चोर कुछ कागज उठा ले गया था....

रेखा—शायद मजाक करता रहा होगा...

लाल–मजाक समझती है तू ?....मेरे सर में उसने घाव कर दिया था रिवाल्वर की मूठ से....

रेखा–तो यों कहो न, कि उस दिन की ठोकर की चोट लगी नहीं थी लगाई गई थी....तभी तो मैं हैरान थी कि ठोकर पैर में लगती है और लाल भैया सर के बल तो चलते नहीं कि माथा चोटिल हो जाय....इतना झूठ क्यों बोल गये थे उस दिन....

अब लाल को अपनी गलती महसूस हुई। रेखा से वह अब तक

इस तरह से हारता रहेगा ? इस जरा-सी लड़की को सारी बातें पाठ की तरह याद रहती हैं। एक बार लाल से वह जो सुन लेगी, भूल नहीं सकती कभी।

रेखा—लाल भैया ?

लाल—क्या है ?

रेखा—मैंने गलती पकड़ ली न ?

लाल—हाँ....

रेखा—तुम झूठ क्यों बोले ?

लाल—गलती हुई...

रेखा—गलती क्यों हुई लाल भैया ?

लाल—माफ कर दे रेखा ! नहीं तो दूंगा एक चपत....शैतान, सवाल पर सवाल उगलती जा रही है....

रेखा—तुम्हारे सर की चोट कैसी है अब ?

लाल—अच्छी है....

रेखा—दुखती नहीं कभी ?

लाल—नहीं....

रेखा—बड़े संगदिल हो तुम !....चोट खाकर भी पीड़ा नहीं होती तुम्हें और मैं बिना चोट खाये ही पीड़ित हो जाती हूँ....

लाल—कैसे ?

रेखा—तुम्हारे माथ पर चोट लगी और अच्छी भी हो गई.... उस दिन तुम्हारी गोली मुझे लगी भी नहीं और पीड़ा मुझे आज तक है....यही तो अन्तर है लाल भैया !

लाल—कैसा अन्तर ?

रेखा—(गम्भीर स्वर) नारी और पुरुष में....अवलम्ब और अवलम्बित में....लाल और रेखा में....

लाल—लाल क्या है और रेखा क्या ?

रेखा—लाल है आस्मान पर चमकता हुआ चाँद और रेखा

है चाँद की रोशनी से चमकती हुई जमीन पर पड़ी शीशी की एक पतली लकीर....समझ गये ?

लाल—गलत....

रेखा—तो तुम्हीं व्यक्त करो....

लाल—रेखा है जीवन की प्रेरणा और लाल है जीवन की गति....प्रेरणा के बिना गति का कोई महत्व नहीं रेखा !

रेखा—यह तो तुम्हारी अपनी व्याख्या हुई लाल भैया ! हर कोई अपनी अलग-अलग राय रख सकता है... रखता ही है...

लाल—अच्छा, अब तो व्याख्या हो चुकी... अब यह बता रेखा कि तू जायगी कब यहाँ से ?

रेखा—तुम कहो तो अभी चली जाऊँ लाल भैया ! मगर तुम कहोगे नहीं ऐसा, मुझे विश्वास है....

लाल—तू अब जा रखा !

रेखा—(गमगीन स्वर) मैं अपने विश्वास को तोड़कर यहाँ से नहीं जा सकती....चली जाऊँगी थोड़ी देर बाद में, अभी तो तुम भी फुरसत में हो ही....

लाल—मैं बहुत जरूरी बात लिख रहा था, तूने आकर विघ्न डाल दिया....

रेखा—मैं न रहा करूँ तभी अपना सारा जरूरी काम कर रखा करो लाल भैया !....थोड़ी देर के लिए कभी-कभी आती भी हूँ तो तुम्हारे लिये वजनी हो जाती हूँ....

लाल—वजनी तो तू यों भी कम नहीं है....

रेखा—होगे तुम्हीं ! मुझे क्या कहते हो ?...लो, मैं जाती हूँ.... भिखारी आवे तो मेरा राम-राम कह देना....कभी रात में कोई चोर घुसे तुम्हारे घर में, तो मुझे पुकार लेना....यों चुपचाप अकेले-अकेले मस्तक में चोट मत खाना लाल भैया !....मुझे भी तो अपने दुख-दर्द में शामिल कर लो....कर लोगे किसी दिन, तो रेखा भी

अन्य मानेगी अपने को....

रेखा चल पड़ती है। लाल उसे देखता रह जाता है।

● ●

नयना रेखा के कमरे में आकर पड़ गई है पलंग पर। आँखें रो रही हैं। दिल का तूफान वेग पर है। नयना लुट गई है। कितने अरमान थे, कितनी हसरतें थीं मगर आते-आते सब कुछ मिट्टी में मिल गया। नयना की पीड़ा आज बह रही है आँसू बनकर। नयना का दिल आज तड़प रहा है मछली बनकर। नयना की आँखें आज बरस रही हैं सावन-भादों की धार होकर मूसलाधार। उसका परदेसी रेखा का है और रेखा है नयना की संरक्षिका। रेखा के ही बल पर उसने अपने परदेसी को पाया है, अन्यथा वह गली-गली लुटती फिरती और उसे कभी खोज न पाती।

नयना का रोम-रोम ऋणी है रेखा का।

रेखा कितनी दयालु है। रेखा का हृदय कितना विशाल है।

उसने धूल से सनी नयना को चमका कर हीरा बनाया है, अपनी बहन बनाया है तो नयना उसके प्रति इतनी अकृतज्ञ कैसे हो जाय ? कैसे वह अपने परदेसी को रेखा से छीने ?

उसके परदेसी ने भी तो उसे पहचाना नहीं या पहचान कर भी अनपहचाने का भाव दिखाया।

परदेसी के पीछे वह लुट गई, मगर लुटेरे को इसका कुछ भी ध्यान नहीं। कैसा हँस रहा था वह, रेखा की बाँहों की माला पहने ? नयना को दिखा रहा था जैसे।

जैसे नयना जानती ही नहीं कि वह डाकू है। लाल डाकू है, जिसके पीछे पुलिस ने उसका घर जला दिया, उसके बाप की जान ले ली, स्वयं वह भी अगर भागी न होती तो न जाने क्या होता ?

वह रेखा से कह दे तो उस डाकू की पोल खुल जाय।

और रेखा भी सावधान हो जाय।

नयना लुट चुकी है तो रेखा न लुटने पाये। रेखा ने उपकार जो इतना किया है नयना पर।

मगर रेखा से कैसे कहे वह यह सब ? कैसे कह सकेगी ?

सुनकर रेखा पर क्या गुजरेगी ?

नयना लिहाफ में मुँह छिपा, सिसकती रहती है।

वह बेजार है, बेकरार है।

तभी रेखा कमरे में आ जाती है।

नयना की हिचकी सुन, वह हैरान हो जाती है। सोचती है, इतने सुख में इस भिखारिन को कौन-सा दुख आ लगा ?

रेखा—नयना ! रो क्यों रही है ?

नयना—(सम्हल कर) नहीं तो जीजी !

और उठकर वह बैठ जाती है।

रेखा—झूठ क्यों बोलती है ? बोल, क्या हुआ है तुझे ? दाई ने कुछ कहा है क्या ?

नयना—नहीं जीजी !

रेखा—तो ?

नयना—परदेसी की याद आ गई थी....

रेखा—पागल लड़की ! परदेसी इतना प्यारा था तो उसे जाने ही क्यों दिया था तुमने ?....जन्म भर तक पंछी पालो मगर पिंजड़ा खुलते ही गायब। परदेसियों का भी यही हालत है। जिसे पंख होते हैं या जिसके पैरों में गति होती है, वह एक जगह की मोह-माया में नहीं बंधता नयना !

नयना—जी कभी-कभी बहुत दुखने लगता है जीजी ! बहुत सम्हालती हूँ मगर बेसहारे पैर सम्हल नहीं पाते....

रेखा—(उसके पास बैठती हुई) प्रेम के पीछे तू इतनी बेहोश हो उठी है नयना ! यह ठीक नहीं....

नयना—प्रेम तो तुम भी करती हो जीजी !

रेखा--(चौंककर) क्या कहती है, किससे ?

नयना--अपने लाल भैया से। क्या तुम्हें प्रेम की पीड़ा नहीं लगती ?

रेखा--लगती है नयना! मगर तेरी जैसी पीड़ा मुझे नहीं होती।

नयना--तब कैसी होती हैं रेखा जीजी ?

रेखा--शायद समझा न सकूँ मैं। शायद तू भी समझ न सके....तेरे और मेरे प्रेम में कुछ अन्तर है... तेरा प्रेम अपनी तृप्ति के लिये है और मेरा प्रेम अपने उत्थान के लिये....तू परदेसी से प्रेम करती है उसे पाने के लिये और मैं लाल भैया को चाहती हूँ उनका पथ अपनाने के लिये, उनके साथ आगे बढ़ने के लिये.... तू परदेसी को पा जाय तो तृप्त हो जाय, मैं लाल भैया को पाकर भी अतृप्त ही हूँ....नारी तो हम दोनों ही हैं नयना!... तुम्हें पुरुष के शरीर की चाह है और मुझे पुरुष की गति की, साहचर्य की। तुम पुरुष को अपने में समा लेना चाहती हो, मैं पुरुष को अपने से आगे रखकर अग्रसर होने की शक्ति देना चाहती हूँ....

नयना--मैं इन बातों को क्या समझूँ रेखा जीजी!....पढ़ी-लिखी होती तो समझ भी पाती।

रेखा--समझकर क्या करेगी तू ?... अपने दिल को काबू में रख, खोकर सीख....पाने की लालसा छोड़ दे....नारी की महत्ता त्याग में है। देकर कुछ पाने की कामना करना नारी के लिये हेय है....

नयना--तुम बहुत अच्छी बातें करती हो जीजी! मैं सीखूँगी तुमसे ?

तभी--

दाई--(पुकारता हुआ स्वर) नयना!....ओ नयना!....

नयना--क्या है बुआ ?

दाई--यह देखो बुआ की भतीजी को....आई थी वहाँ से मेरा हाथ बँटाने....यहाँ आकर तो रेखा की भी चाची बन गई....

नयना—देखो बुआ ! गाली मत दो....

रेखा—(हँसकर) गाली के बदले चाहे मार भले ही लो दो चार चपत....

दाई—तुम दोनों ने तो मेरी नाक में दम कर दिया है....

नयना—थोड़ा गम खा लिया करो बुआ तो नाक का दम कम हो जायगा....

दाई—देख रेखा !....इस छोकरी की ही-ही मुझे जरा भी अच्छी नहीं लगती....तूने ही इसे अपने सर चढ़ा रखा है....

रेखा—तुम्हारा सर तो बूढ़ा है दाई ! नयना चढ़ेगी तो गर्दन झुक जायगी तुम्हारी....

दाई—तुम दोनों एक से एक बढ़कर हो....जानती होती तो उसी दिन इस कलमुँही को निकाल बाहर करती....यहाँ पैर जम गये तो हमीं से उड़ने लगी हरामी !

नयना—माफ करो बुआ !....चलो, मैं चलती हूँ। क्या काम करना है ? बिल्ली को दूध पिलाना है क्या ?

दाई—(झल्ला कर) लाकर खाना खिला दे अपनी इस बिल्ली को, जिसके साथ दिन रात म्याऊँ-म्याऊँ करती रहती है तू भी।

रेखा—दाई ! मुझे बिल्ली बनाओगी तो एक दिन तुम्हारी बिल्ली की गर्दन ही तोड़ दूँगी....

दाई—मेरी ही गर्दन तोड़ दे किसी दिन...देखूँ यह नयना की पिल्ली कितने दिन पकाकर खिलाती है....कप्तान की बेटी क्या हुई, दिन रात खून-खच्चर....

नयना—जाने दो बुआ ! रेखा जीजी थोड़ा-बहुत खराब हैं....

दाई—रहने दे, तू ही बड़ी थोड़ा-बहुत अच्छी है....चल सीधे से मेरे साथ....

नयना दाई के पीछे-पीछे चली जाती है।

नाश्ता करने के बाद रेखा ने कपड़े बदले, सायकिल उठाई।

रेखा—नयना मैं जरा काम से जा रही हूँ....दो घण्टे बाद आऊँगी... कुछ देर हो जाय तो घबड़ाना मत....खाना खा लेना....

नयना—अच्छा....मैं खाना भी खा लूँगी और घबड़ाऊँगी भी नहीं....मगर तुम अकेली ही सैर को जाओगी क्या?....मुझे भी ले चलो तो थोड़ा-बहुत अच्छा ही रहे....नहीं तो अपने लाल भैया को ले लो साथ....

रेखा—तुझे फिर कभी ले चलूँगी....और लाल भैया तो मेरा साथ देना ही नहीं चाहते....

रेखा चली जाती है। नयना बड़ी देर तक चुपचाप बैठी रहती है, फिर उसकी तबियत ऊबने लगती है।

तभी लाल के घर की ओर उसकी दृष्टि पड़ती है। उसका हृदय हाहाकार कर उठता है। उफ! उस घर में बैठा हुआ परदेशी उसका नहीं हो सका, न हो सकेगा कभी। रेखा घर में नहीं है।

नयना का परदेसी तो अपने घर में होगा ही।

क्या नयना उसके पास जाय? क्या चलकर देखे वह कि परदेसी को उसकी कुछ याद है या नहीं?

नयना उठती है और दरवाजे की ओर बढ़ती है।

दाई—ओ नयना!....कहाँ चल दी री?

नयना—अभी आ रही हूँ बुआ!

दाई—आयेगी तो मगर जा कहाँ रही है?

नयना—जरा लाल के घर जा रही हूँ....

दाई—तुझे भी उस लाल-पीले की हवा लग गई? कहे देती हूँ, वह अच्छा लड़का नहीं है। रेखा का ही कलेजा है, जो काजल से बचकर निकल आती है....

नयना—मैं ज्यादा देर नहीं रुकूँगी बुआ!

और नयना लपक कर लाल के दरवाजे पर आ खड़ी होती है।

नयना—क्या मैं अन्दर आ सकती हूं ?

लाल—(चौंककर) आओ....नयना, तुम ?

नयना—(गम्भीर गति से भीतर आती हुई) मेरा नाम याद है तुम्हें लाल बाबू ? मैंने सोचा, कल तुमने रेखा जीजी के साथ मुझे पहचाना नहीं तो शायद मेरा नाम भी भूल गये होगे ?

लाल—तुम्हें मैं भूला नहीं हूं नयना !....तुमने मेरे साथ बहुत उपकार किया है....

नयना—उपकार की शाबासी देकर तुम मुझे बहला नहीं सकते....कुत्ते भी उपकार का बदला पूंछ हिलाकर दे देते हैं मगर नयना को इन्सान और कुत्ते में बहुत अन्तर दीखता है...

लाल—चाहे तुम जो कहो नयना ! मगर लाल के लिए तुमने कम त्याग नहीं किया, इसे तो तुम भी महसूस करती होगी....

नयना—(बड़ी करुणा दृष्टि से लाल की ओर निहारते हुये) मेरी क्या कहते हो लाल बाबू !....तुम्हारे लिए लुट गई, बिक गई मगर तुम तो वही के वही रहे....मेरे उपकार की याद है तुम्हें, मगर उस उपकार का बोझ तुम अपने सर पर महसूस नहीं करते शायद....इस उपकार का बदला तुम शायद दे नहीं सकते....

लाल—दे सकता तो कभी पीछे न हटता नयना !....मैं तुम्हारे दिल की कमजोरी समझ गया हूं....मगर विवश हूं । इस समय मेरा शरीर बिक चुका है....

नयना—मैं जानती हूं, रेखा जीजी ने तुम्हें खरीद लिया है न....अफसोस है मुझे तो सिर्फ यह कि बिक चुकने पर भी तुम्हें मेरा दिल खरीदने का साहस कैसे हुआ ?

लाल—तुम गलत समझ रही हो नयना !....और रेखा को तो तुम समझ ही न सकोगी । मैं इतने दिन तक उसके साथ रहा मगर वह क्या है, यह न जान सका अब तक....

नयना—तुमको तो जान चुकी हूं लाल बाबू !....और रेखा

की बाँह तुम्हारे गले में देखकर रेखा को भी न समझ सकूँ, इतनी भोली मैं नहीं... तुम्हारे लिए मैंने बहुत कुछ किया। तुम इतने ही वफादार होते, तो मेरी खोज न लेकर रेखा की बाँहों में बँधकर न रह जाते....

लाल—कौन कहता है कि मैंने तुम्हारी खोज नहीं की ? टैक्सी लेकर जमनापुर थाने गया, तुम्हें छुड़ाकर ले भी आ रहा था कि तुम बीच से ही गायब हो गई....

नयना—मैं तुम्हें पुलिस जानकर कूद पड़ी थी....तो वह तुम्हीं थे ? रास्ते में बताया भी नहीं.... शायद चुपचाप कहीं ले जाकर फेंक आना चाहते थे ताकि मैं फिर तुम्हारे रास्ते में न पड़ूँ ?

लाल—(परेशान स्वर) नयना ! तुम्हें शक हो गया....

नयना—कान से सुनी बात पर शक हो सकता है लाल बाबू ! आँखों-देखी बात पर तो विश्वास किया जाता है....तुम डाकू हो, यह मैं पुलिस के मुख से सुन चुकी थी, मगर विश्वास न था कि तुम्हारा दिल भी पत्थर का होगा और तुम नयना के साथ खेली हुई आँख-मिचौनी को इतनी जल्दी भूल जाओगे....

लाल—भूलने के लिए तो मैं अपने तक को भूल गया हूँ....

नयना—मगर रेखा की याद तो तुम्हें है न ?

लाल—रेखा को भी भूल जाता, अगर वह तुझसे भिन्न न होती।

नयना—एक नारी तो दूसरी नारी से भिन्न होती ही है लाल बाबू ! मगर एक ही पुरुष दो नारियों के लिये भिन्न-भिन्न कैसे हो सकता है....हाथी के दाँत खाने और दिखाने के अलग-अलग हो सकते हैं परन्तु हाथी और मनुष्य में तो बहुत अन्तर है न ?

लाल—मैंने तुमसे पहले ही कह दिया था नयना कि अगर कभी तुम्हारे लायक बन सका तो पीछे न हटूँगा....

नयना—कभी बन भी सकोगे मेरे लायक रेखा के रहते, इसका मुझे विश्वास नहीं....

लाल—न हो विश्वास तुम्हें, इसकी कोई दवा मेरे पास नहीं, रेखा मेरे निकट जो बन चुकी है, वह कोई नहीं बन सकता....तुम तो अभी उससे बहुत पीछे हो....तुम मुझे पाकर अपने को खो देना चाहती हो....रेखा मुझे पाकर अपने को प्रज्वलित करना चाहती है....तुम मेरे बिना असहाय हो....और रेखा मेरे बिना भी अग्रसर हो सकती है....इतने महान् अन्तर को तुम कैसे सम कर सकती हो ?....मैं कैसे तुम्हें बताऊँ कि रेखा मानवी नहीं देवी है....

नयना–पुरुष की आँखों में जो नारी जँच जाय, वही देवी बन जाती है....तुम्हारी आँखों को मैं पसन्द नहीं, तो दिल भी तुम्हारा मुझसे घृणा ही करता है....

लाल–(कठोर स्वर) तुम चुप रहो नयना ! व्यर्थ की बातें मुझे पसन्द नहीं...

नयना—(गम्भीर स्वर) लाल बाबू ! मैं तो सिर्फ एक रास्ता जानती हूँ....नारी अगर निराश हो जाती है तो उसका बदला बड़ा भयंकर होता है....

लाल–बदले का डर तुम मुझे मत दिखाओ नयना !

नयना—मैं जानती हूँ कि तुम डरनेवाले नहीं, मगर हाड़-माँस की बनी हुई तुम्हारी देह पर अगर चोट की जाय, तो ऐसा नहीं कि पीड़ा न पहुँचे....

लाल—तुम चोट करके देखो....लाल हिल नहीं सकता....

नयना—वही सही....तुम तैयार रहना....

लाल—मैं अब भी तैयार ही हूँ....

नयना–रेखा के पिता कप्तान हैं....मेरे मुँह से तुम्हारा परिचय और लखनपुर की घटना सुनकर वे कुछ न कुछ तो जरूर करेंगे....

लाल—(चौंककर) तुम इतना आगे बढ़ सकोगी....

नयना–निराश नारी बड़ी बलवान होती है लाल बाबू। इस चोट के लिये तुम तैयार रहो....

लाल—जिसने मेरे लिये इतना त्याग किया, क्या वह कुछ दिनों तक और धैर्य नहीं रख सकती ?

नयना—धैर्य किसी आशा पर रखा जाता है....कोई आशा न रहे तो खाली धैर्य किसी काम का नहीं....

लाल—तो तुम्हारा यह आखिरी फैसला है ?

नयना—हाँ...

लाल—तो तुम अभी मरने के लिए तैयार हो जाओ....

लाल का रिवाल्वर उसके हाथ में तन जाता है।

नयना भयभीत होकर उठ पड़ती है।

नयना—तुम....तुम...मेरा खून करोगे ?

लाल—तुम्हारे खून से मेरे हाथों में धब्बा नहीं लगेगा....वासना के पीछे बेहोश नारी की कोई कीमत नहीं....प्रेम को ऐसा घृणित रूप देनेवाली नारी बेहया है....

तभी बाहर से रेखा की आवाज आती है।

रेखा—लाल भैया ! नयना इधर आई है ?

लाल रिवाल्वर जेब में रख लेता है।

लाल—यहीं तो है....आ न रेखा !

रेखा आ जाती है। गौर से दोनों को देखने लगता है।

रेखा—(हँसकर) क्यों रे दुष्ट ! कल लाल भैया से शर्म लगती थी....और आज अकेले ही मिलने चली आई ?

लाल—रेखा ! इस लड़की का दिमाग तो ठीक है न ?

रेखा—है तो, कुछ कह दिया हो तो बुरा मत मानना लाल भैया ! गाँव की है न, शहर की सभ्यता क्या जाने ? चल नयना ! दाई बुला रही है....

लाल—इसे अभी यहीं रहने दो रेखा ?

रेखा—क्यों ? कुछ बातें करनी है क्या लाल भैया ?

लाल—हाँ....

रेखा—कल कर लेना....बातों से तो पेट भरता नहीं, समय ही बर्बाद होता है....

लाल—तो तेरे लिये केवल पेट भरना ही समय की सार्थकता है?

रेखा—और नहीं तो क्या? आओ चलें....लाल भैया से ज्यादा बातें मत करना....ये कभी-कभी काटने भी दौड़ते हैं....

नयना गम्भीर ही बनी रहती है। रेखा चली तो चुपचाप वह भी उसके पीछे हो लेती है। लाल कुर्सी पर बैठा सोचता रहता है। नयना कितनी नीचे गिर गई है। कीचड़ में लोट कर वह रेखा के चाँद को पकड़ना चाहती है। आज वह एकाएक इतनी हताश क्यों हो गई? हताश भी हुई, तो उसमें प्रतिशोध की इतनी प्रबल भावना कैसे आ गई?

यदि वह मिस्टर शर्मा से सब कुछ कह दे तो? कह दे कि लाल ही जज वाली हत्या की रात उसके घर टिका था, उसी ने जमनापुर थाने से उसे भगाया था। कह दे सब कुछ तो क्या होगा? सरकार के परमभक्त मिस्टर शर्मा क्या छोड़ देंगे लाल को? नहीं....कभी नहीं....

मिस्टर लालचन्द! (बाहर से कोई पुकारता हुआ आता है)

लाल—आइये मिस्टर बिलफार्ड!

बिलफोर्ड एक उंगली से माथा खुजला, कुर्सी पर आ डटता है।

बिलफोर्ड—बहुत गम्भीर हो लाल! क्या बात है?

लाल—नयना यहाँ भी पहुँच गई सरदार!

बिलफोर्ड—वह लड़की?....मुझे मालूम है....आजकल रेखा के साथ रह रही है न?

लाल—हाँ....वह मेरे पीछे पागल हो गई है सरदार!

बिलफोर्ड—पागल तो वह पहले से ही थी, तुम ठीक हो न?

लाल—मैं ठीक हूँ, मगर उसका पागलपन मुझे भी ले बीतेगा।

बिलफोर्ड—(साश्चर्य) कैसे?

लाल—अभी वह यहाँ आई थी....

बिलफोर्ड—क्या कहती थी वह ?

लाल—रेखा के साथ मेरी घनिष्ठता देखकर वह आवेश में आ गई है। कमजोर नारी का आवेश बड़ा खतरनाक होता है.... कहती थी, यदि मैंने उसे स्वीकार न किया, तो वह मिस्टर शर्मा से सब कुछ कह देगी....

बिलफोर्ड—(चौंक कर) मिस्टर शर्मा से कह देगी वह ?.... बेवकूफ लड़की !....तुमने उसे रोका नहीं लाल ?

लाल—कैसे रोकता उसे ?

बिलफोर्ड—तुम्हारा रिवाल्वर तो तुम्हारे पास था न ?

लाल—था, मगर तभी रेखा आ गई और उसे अपने साथ लिवा ले गई....मैं कुछ न कर सका। कहीं उसने जाकर मिस्टर शर्मा से कह न दिया हो....

बिलफोर्ड—अभी वे घर पर नहीं हैं....

लाल—मगर वह उनसे कहेगी जरूर....वह पागल लड़की जो न कर डाले...

बिलफोर्ड—उसे मैं देख लूँगा...तुम उधर से निश्चिन्त रहो। मैं आज दो बहुत ही जरूरी बात तुम्हें सुनाने आया हूँ....

लाल—कौन-कौन सी ?

बिलफोर्ड—एक दुःखद है और दूसरी गम्भीर....एक स्वयं तुमसे संबन्ध रखती है, दूसरी मण्डल से, तुम पहले किसे सुनना चाहोगे ?

लाल—(किंचित चौंककर) मुझे अपनी परवाह नहीं सरदार ! आप पहले मण्डल की बात सुनाइये....

बिलफोर्ड—शाबाश ! बादशाह का जन्म-दिवस मनाने के लिये देश के कोने-कोने से धन की वसूली हुई है...जनता ने स्वेच्छा से दान नहीं दिया है। कहीं-कहीं तो इस वसूली के लिये बेहद जुल्म भी किये गये हैं....देश के नेताओं ने भी इस अमानुषिक कार्य का

तीव्र विरोध किया है, परन्तु गुलाम देश के नेताओं की सुनता ही कौन है ? पूज्य बापू ने इसके विरोध में जो वक्तव्य दिया था, उसके कारण आज वे जेल की दीवारों में बन्द कर दिये गये हैं.... इस जुल्म की भी कोई हद है....

लाल—मैंने समाचार पत्रों में पढ़ा है....

बिलफोर्ड—यद्यपि बापू हमारे पूज्य हैं और उनका अहिंसात्मक आन्दोलन अनुकरणीय भी है, फिर भी किसी-किसी समय बल-प्रयोग आवश्यक हो जाता है। यदि इस समय हमने बलप्रयोग न किया तो गरीब देश की पिसी हुई जनता की कमाई शराब बन-कर गोरों के पेट में उतर जायगी....वह सारा धन कल ४-अप से राजधानी ले जाया जायगा....तुम शायद न जानते होगे कि आजकल मण्डल को धन की कितनी आवश्यकता है....हमें चाहे जैसे हो, इस धन पर अधिकार करना ही होगा....

लाल—मैं तैयार हूं सरदार !

बिलफोर्ड—४-अप दो बजे रात इधर से गुजरती है...हमारा ख्याल है कि हमें अधिक खतरा न उठाना पड़ेगा, क्योंकि सरकार को हमारे इरादे का कोई पता नहीं लग सकेगा....मण्डल के पचास जवान तुम्हारे साथ रहेंगे। तुम उनका कमाण्ड करोगे....

लाल—इसके लिये धन्यवाद सरदार ! मरकर भी आपके कुछ काम आ सका तो यह शरीर धन्य हो जायगा....

बिलफोर्ड—इसे याद रखो लाल ! कि खजाने की रक्षा के लिये काफी पुलिस साथ रहेगी, स्वयं इन्सपेक्टर जेनरल आफ पुलिस भी साथ आ रहे हैं....

लाल—मुझे परवाह नहीं सरदार !

बिलफोर्ड—तो ठीक है....कल तुम रेलवे क्रासिङ्ग के दक्षिण ओर एक फर्लाङ्ग पर उपस्थित रहोगे...तुम्हारे साथी तुमसे वहां आ मिलेंगे....

लाल—बहुत अच्छा....

बिलफोर्ड—कोई बात हो जाय, तो याद रहे लाल! तुममें से किसी का भी जीवित शरीर कोई न पा सके....

लाल—मैं इस पर ध्यान रखूँगा सरदार!

बिलफोर्ड—अच्छा अब दूसरी बात सुनो....घटना दुखद है और तुमसे सम्बन्धित है... सुनकर कमजोर तो नहीं पड़ जाओगे?

लाल—अगर आपको विश्वास न हो मुझ पर, तो वह बात मुझसे न कहें आप....

बिलफोर्ड—मुझे तुम पर विश्वास है....तुम कमजोर नहीं हो सकते लाल!... मातृभूमि के आँसू जिसने देखे हैं, वह अपनी माँ को मृत्यु पर आँसू नहीं बहा सकता....

लाल—(मर्माहत-सा सरदार!

बिलफोर्ड—लाल! तुम्हारी माता चल बसीं....गाँववालों ने उन्हें अग्नि के हवाले कर दिया....बूढ़ी भी तो हो चुकी थीं बहुत....

लाल—हाँ सरदार!

बिलफोर्ड—लाल! अपने नेत्र पोंछ लो....आँसू बह चले हैं....

लाल—नहीं सरदार! आँसू नहीं बह सकते....मैं इन्हें रोक लेता हूँ....मेरी माता मरी नहीं, अभी जीवित हैं, रो रही हैं गुलामी की बेड़ियों से जकड़ी हुई....मेरी माता मर नहीं सकती, उन्हें कोई नहीं मार सकता.... उन्हें कोई छू भी नहीं सकता....

बिलफोर्ड—(शान्त स्वर) अपने को सम्हाल लो लाल! कल तुम्हारी परीक्षा का दिन है....मैं चलता हूँ....कोई बात हुई तो फिर मिलूँगा, नहीं तो नियत समय पर कल तुम चल देना....

लाल—बहुत अच्छा।

बिलफोर्ड उठ खड़ा होता है और चला जाता है। लाल निश्चल बैठा रहता है। उसकी माँ मर गई, उसकी जन्मदात्री उसको देखने के लिए तड़पती-तड़पती चल बसी। उसने उसे पैदा किया,

अपने दूध से उसे जवानी दी, मगर बेटे का सुख वह न भोग सकी। जन्मभूमि के सुख-दुख पर मिटनेवाला युवक, मानवी-माता के लिए कितना दुख उठाये ? सोच ही रहा था कि रेखा आ जाती है।

रेखा—लाल भैया !

लाल—चली आ रेखा !

रेखा—माताजी चल बसीं, अभी वह साहब क्या कह गया ?

लाल—हाँ रेखा !....तू कब से बाहर खड़ी है ?

रेखा—अभी ही तो आई हूँ, केवल माँ की खबर सुन सकी हूँ....यह साहब तो पहले ही पहल आया है भैया ! कभी इसे देखा नहीं....कौन था ?

लाल—मेरा एक दोस्त !....मुझसे मिलने गाँव गया था, वहीं से उसे यह खबर मिली....क्या करूँ रेखा ! माँ का मोह तो सभी को होता है....

रेखा—लाल भैया ! देश के मोह के आगे माँ का मोह कुछ नहीं....तुम्हें बहुत कुछ करना है....अगर शिथिल पड़ गये तो कुछ भी न कर सकोगे....

रेखा लाल की कुर्सी के पीछे आ खड़ी होती है और उसे उठाकर चारपाई पर ला बैठाती है।

लाल के धैर्य का बाँध आँसू बनकर बहने-बहने को होता है।

रेखा की सान्त्वना पाकर वह और भी बह चलता है।

रेखा लाल के पास चारपाई पर बैठ जाती है।

उसके सर को अपनी गोद में रखकर, अपनी साड़ी के छोर से उसके आँसू सुखाने लगती है।

लाल—रेखा ! माँ तो चली गई। उन्हें सुख देना तो दूर रहा, मरते समय उन्हें कुछ धैर्य भी न दे सका....अपनी सफाई भी नहीं दे सका रेखा, कि माँ का बेटा इतना बेवफा नहीं, जितना समझकर वह मरी है....उसे अब कहाँ पाऊँगा रेखा ?

रेखा—लाल भैया ! क्या सभी नारियों में तुम अपनी माँ की सूरत नहीं देख सकते ?

लाल—देख सकता हूँ, तुम दिखाओ ....मैं देखूँगा माँ को...

रेखा—(लाल के शरीर को अपने सीने में छिपाते हुये) देखो लाल भैया ! मुझे देखो....मैं भी एक नारी ही हूँ....क्या अपनी माँ समझ सकोगे मुझे ?

लाल एकटक रेखा का मुख देखता रहता है। रेखा उसे अपने सीने से लगाये उसका सर सहलाती रहती है। धीरे-धीरे लाल की आँखें बन्द हो चलती है। बड़ी देर तक लाल बेसुध पड़ा रहता है। फिर धीरे से अपनी आँखें खोल उठ बैठता है।

रेखा—लाल भैया !

लाल—मुझे शान्ति मिल गई रेखा !....मेरी रेखा ! तुम पूर्ण नारी हो। माता की ममता, पत्नी का सेवा-भाव, बहन का भ्रातृप्रेम, बेटी की श्रद्धा....सब कुछ मिला है तुमसे....मेरे मन-मन्दिर की देवी ! तुम्हें कैसे प्रणाम करूँ मैं ?

वह विह्वल होकर रेखा के चरण छू लेता है।

रेखा—लाल भैया ! बड़े मूर्ख हो तुम ! मेरे पैर पड़ते हो, छोटी-सी बच्ची के ?....अपने पैरों का सहारा मुझे नहीं देना चाहते, तो तुम्हारे मस्तक का बोझ लेकर क्या करूँगी मैं।

लाल उठ बैठता है। गम्भीर ही रहा मौन।

रेखा—लाल भैया ! थोड़ा हँस लो तो ताक़त आ जायगी.... आँसू गिराने से तो सारी ताक़त बह निकलती है....हाँ, नयना को तुमने कुछ कह दिया था क्या ?

लाल—नहीं तो....

रेखा—अजीब लड़की है...यहाँ से जाकर रोने लगी। बहुत पूछा, मगर बताया नहीं तो तुमसे पूछने इधर आ गई....मुझसे कहती थी कि वह पिताजी से कुछ बातें कहना चाहती है....

लाल—(आश्चर्य के साथ) ऐसा कहती थी ? रेखा यह लड़की बड़ी खतरनाक है....

रेखा—कैसे ?

लाल—नारी जब फिसल पड़ती है, तो फिसलती ही जाती है....नयना निराश होकर चुड़ैल बन गई है....यह सर्वनाश करेगी अब....

रेखा—लाल भैया !....कैसी बातें करते हो ?....नयना किससे निराश हुई है ? क्या तुमसे ?

लाल—हाँ....

रेखा—तुमने उसे निराश क्यों किया ? वह क्या चाहती थी...

लाल—वह मुझे पंगु बनाना चाहती है, देश के पीछे पागल लाल को वह अपने प्रेम में पागल करना चाहती है....

रेखा—तुम कह रहे हो ऐसा, इसलिये विश्वास कर रही हूँ लाल भैया !....मगर नयना ऐसी लड़की नहीं, वह तुम्हें पाने की चाह रख सकती है, तुम्हारा सर्वनाश करने की नहीं....

लाल—वह ऐसा ही करेगी रेखा !....वह तुम्हारे पिताजी से मेरा सारा भेद कह देगी....

रेखा—वह तुम्हारा भेद कैसे जान गई लाल भैया ?

लाल—यह वही लड़की है जिसके घर में लखनपुर में जज के हत्या वाली रात ठहरा था।

रेखा—और जिसे जमनापुर थाने से भगा लाये थे ?

लाल—हाँ....

रेखा—मैं समझ गई लाल भैया !

लाल—मैं उससे घृणा करता हूँ रेखा !....ऐसी नारी का मोह मुझे नहीं। उस समय तुम न आ पहुँची होती तो मैं उसका खून कर डालता....

रेखा—मैं उसे रोकूँगी लाल भैया ! वह पिताजी से कुछ नहीं

बता सकती । रेखा के रहते वह ऐसा कभी नहीं कर सकती....

लाल—तुम उसे मत समझाओ रेखा !....मैंने उसका सब प्रबन्ध कर लिया है । यदि उसने तुम्हारे पिता के सामने मेरे विषय में जरा भी जबान खोली, तो....

रेखा—मैं उसे समझा दूँगी लाल भैया !

रेखा उठ खड़ी होती है । अपने घर आती है ।

नयना उस समय शान्त हो चुकी है और दाई के साथ बैठी हुई उसका खाना पकाना देख रही है ।

रेखा—नयना ! जरा इधर आ....

रेखा चुपचाप अपने कमरे की ओर बढ़ती है ।

नयना भी उसके पीछे-पीछे आती है ।

नयना—क्यों बुलाया जीजी ?

रेखा—कुछ बातें करनी हैं, तू बैठ जा....

नयना बैठ जाती है । रेखा दरवाजे बन्द कर लेती है ।

नयना—क्या कहती हो जीजी ?

रेखा—तू रो क्यों रही थी ?

नयना—जी भर आया था जीजी !

रेखा—शायद परदेसी की याद आ गई थी ।

नयन—हाँ !

रेखा—तेरा परदेसी तुम्हें नहीं चाहता ?

नयना—(घबराकर) नहीं....तुम्हें किसने बताया ?

रेखा—लाल भैया ने....

नयना—तो तुम सब जान चुकी हो रेखा जीजी ?....अब तुमसे अनजान बनने से क्या फायदा ? जिसे तुम चाहती हो, वह मुझे कब चाहेगा ?

रेखा—भूलती है नयना तू ! लाल सभी का है । उसके लिये हर नारी बराबर है । कमजोर नारी से वह घृणा करता है

जरूर....तू इतनी बेताब क्यों हो उठी है ?

नयना—रेखा जीजी ! अपना घर लुटता हुआ देखकर कौन धीरज रख सकता है ?

रेखा—देख नयना ! लाल फौलाद है, जिस पर कमजोर कलेजे की पीड़ा असर नहीं कर सकेगी....उसे पाना है तो तू भी फौलाद बन....उसका प्रेम पाना चाहती है, तो त्याग करती चल आँखें मूँद कर...

नयना—तुम्हारे रहते कुछ भी नहीं हो सकेगा जीजी !.... तुमने मेरा परदेसी मुझसे छीन लिया है....

रेखा—तू अपने को इतना कमजोर क्यों समझती है ?....अपने को मुझसे आगे बढ़ाकर उसे मुझसे छीन ले, तब जानूँ....

नयना—तुमने अपने पिताजी से उसके भेद खोल देने का भय दिखाकर उसे अपने वश में कर लिया है जीजी !....वह कभी मेरी नहीं सुनेगा....

रेखा—तू मुझे अपने रास्ते का काँटा समझती है नयना ?.... वही सही, मैं अपनी सफाई देना नहीं चाहती। लाल से हम दोनों प्रेम करती हैं....चल, अपनी किस्मत का फैसला कर लें...

नयना—कैसे ?

रेखा—एक कटार तू ले ले और एक मैं....जो जीती बचे, वह लाल की हो रहे....

नयना—(चीखती हुई) अरे बाप रे !

रेखा—इसी बल पर तू लाल को पाना चाहती है ? याद रख नयना ! इस जन्म में लाल तेरा कभी नहीं हो सकता....

नयना—मैं इसे जान चुकी हूँ....और निराश होकर ही मैं तुम्हारे पिता की शरण लेना चाहती हूँ....

रेखा—चुप रह, मेरी भलाई का बदला इस तरह मत दे....

नयना—यही एक बात मुझे रोक रही है जीजी ! मैं इस पर

विचार करूँगी....

रेखा—विचार कर ले, तेरा जो आखिरी फैसला हो वह मुझे बताकर ही पिताजी के पास जाने की सोचना....

नयना—बहुत अच्छा....

• •

शाम को सब साथ-साथ खाना खाते हैं। नयना गंभीर बनी रहती है। मिस्टर शर्मा सोने चले जाते हैं। रेखा भी अपने कमरे में आती है। नयना बूढ़ी दाई के कमरे में सोती है।

दाई तो पड़ते ही अपनी बिल्ली की तरह गुर्राने लगती है।

मगर नयना को नींद नहीं है। वह सोच रही है। करवटें भी बदल रही है, बेचैनी के साथ। एकाएक उठ बैठती है वह। दाई सो रही है। रेखा का भी कमरा शान्त एवं अंधेरा युक्त है। नयना दरवाजे के पास आती है। खोलकर सतर्क दृष्टि से चारों ओर देखती है, फिर मिस्टर शर्मा के कमरे की ओर बढ़ती है।

मिस्टर शर्मा पलंग पर लेटे हुए कुछ पढ़ रहे हैं।

मि० शर्मा—आ बेटी ! क्या बात है ?

नयना—मुझे आपसे कुछ कहना है पिताजी !....

मि० शर्मा—उस कुर्सी पर बैठ जा...रेखा की शिकायत लेकर आई है या अपने बुआ की ?

नयना—किसी की भी नहीं....मैं एक भेद की बात कहने आई हूँ....बहुत जरूरी बात....

नयना जिस दरवाजे से अन्दर आई है, वह खुला है और उसी के बाहर छिपकर खड़ी हुई एक काली शकल अन्दर की सब बातें सुन रही है। उसके हाथ में रिवाल्वर भी है, जो नीचे झुका हुआ पड़ा है चुपचाप ।

मि० शर्मा—कौन से भेद की बात है ? तू बेखौफ कह....

नयना—पिताजी ! मैं दाई की भतीजी नहीं....

मि० शर्मा—(चौंक कर) भतीजी नहीं है तू ?

नयना—नहीं, मुझे अब अपने जान की परवाह नहीं....मैं सब कुछ कह दूँगी आपसे....रेखा जीजी मुझे भिखारी जानकर यहाँ ले आई थी....

मि० शर्मा—कौन है तू ?

नयना—मैं लखनपुर के जियावन की बेटी हूँ....एक रात एक परदेसी मेरे यहाँ आकर ठहरा। मैंने उसे अपना दिल दे दिया....मगर वह डाकू निकला। उसके प्रेम में पड़कर मेरा घरबार बरबाद हो गया। बापू की जान मेरी आँखों के सामने चली गई, मगर मैं प्रेम में अन्धी होकर चुपचाप खड़ी देखती रही....

मि० शर्मा—मैं सुन रहा हूँ, तू कहती चल....

नयना—उस डाकू ने मुझे जमनापुर थाने से भगाया मगर मैं उसे पुलिस समझ कर भाग निकली....अब मेरे प्रेम को ठोकर लग गई है, निराश हो चुकी हूं। मैं सब कुछ बता दूँगी पिताजी ! सब कुछ....चाहे मेरी जान भी क्यों न चली जाय....

मि० शर्मा—तेरी जान की जिम्मेदारी मैं लेता हूँ तू उस डाकू को पहचानती है ?

नयना—हाँ....

दरवाजे के बाहर खड़ी हुई उस काली शकल का रिवाल्वर एकाएक नयना की ओर तन गया।

मि० शर्मा—कौन है वह ?

नयना—वह....वह....

धाय ! धाँय !!....

दो गोलियाँ लगातार छूटती हैं और नयना का शरीर लड़खड़ा कर कुर्सी के नीचे आ गिरता है, लहूलुहान। चीखकर नयना शान्त हो जाती है। मिस्टर शर्मा लपक कर उठ, पेटी से रिवाल्वर खोलकर बाहर दौड़ते हैं।

रेखा (अपने कमरे से चिल्लाते हुये) दाई ! ओ दाई ! यह आवाज कैसी है ? मर गई क्या ?....

मि० शर्मा—(बदहवासी से भरा स्वर) रेखा बेटी !....

उन्हें घबराया हुआ देख, रेखा झटपट बाहर आ जाती है।

रेखा—क्या हुआ पिताजी ? आप इतने घबराये हुए क्यों है ?

मि० शर्मा—गोली की आवाज नहीं सुनी तूने ?....नयना को किसी बदमाश ने गोली मार दी....

रेखा—नयना को ? मेरी नयना को किसी ने गोली मार दी ?....पिताजी ! कहाँ गया वह हत्यारा ?

मि० शर्मा—भाग गया ...तू मेरे कमरे में चल....मैं इधर-उधर देखकर अभी आया...

मिस्टर शर्मा दौड़ते हुए चले जाते हैं। रेखा रोती हुई दाई के कमरे में आती है। उसे जगाती है।

रेखा—दाई ! नयना....गोली....

दाई घबड़ाकर उठ बैठती है।

दाई—क्या हुआ नयना को ?....क्या हुआ मेरी बच्ची को ?

दोनों दौड़कर मिस्टर शर्मा के कमरे में आती हैं।

नयना का शरीर ठण्ढा पड़ गया है।

दाई—(फूट-फूटकर रोते हुये) मेरी बच्ची !....मैं लुट गई, किस हत्यारे ने मेरी लाड़ली की जान ले ली ?....मैं उसकी बोटी-बोटी नोंच डालूँगी....

रेखा—(रोती हुई) दाई मेरी अच्छी दाई ! रोओ मत.... जो होना था, हो चुका....

दाई—बिटिया ! यह चाण्डालिन यहाँ मरने को ही आई थी....

रेखा—दाई ! मैं जरा लाल भैया को बुला लाऊँ....

रेखा लाल के घर आती है। दरवाजा खटखटाने पर लाल नींद से उठकर दरवाजा खोलता है।

लाल—रेखा तू ?

रेखा—हाँ लाल भैया ! तुमने गोली की आवाज सुनी ?

लाल—नहीं तो....कैसी गोली ?

रेखा—नयना को किसी ने गोली मार दी....

लाल—किसने मारी गोली ?

रेखा—तुम्हीं ने मारी होगी....शाम को कहते थे न, कि अगर नयना ने पिताजी से जरा भी जबान खोली, तो....

लाल—चुप रह रेखा ! ...तू बार-बार मुझ पर ही शक करती है....चल, मैं भी चलता हूँ....

जब तक रेखा लाल को साथ लिये वापस आती है, तब तक मिस्टर शर्मा सभी जगह फोन कर चुके थे।

मि० शर्मा—(लाल को देखकर) लाल बेटा ! मैं पुलिस को फोन कर चुका हूँ। तुम यहाँ से जाओ, नहीं तो तुम्हें भी व्यर्थ का परेशान होना पड़ेगा....

लाल नयना को थोड़ी देर तक देखकर चला जाता है। आधे घण्टे बाद ही स्वयं कलक्टर साहब आ पहुंचते हैं। पुलिस की गारद भी आ जाती है। चारों ओर दौड़-धूप शुरू हो जाती है। पहलेवाले कलक्टर की बदली हो गयी थी और अब एक खूँखार अँग्रेज कलक्टर के पद पर था। वह हर हिन्दुस्तानी को सन्देह की दृष्टि से देखता था इसीलिए सरकार ने उसे यहाँ भेजा था।

● ●

रामलाल भी आया है। बहुत घबड़ाया हुआ है। मिस्टर शर्मा से वह एकान्त में भेंट करता है।

रामलाल—यह सब कैसे हो गया हजूर ? यह घटना तो बड़ी खतरनाक है....यह नया कलक्टर ब्राउन बड़ा ही बेरहम है। बाई-गॉड हर हिन्दुस्तानी को शक की निगाह से देखता है....

मि० शर्मा—बड़ा परेशान हूँ रामलाल ! यह सारी खुराफात

रेखा को है। इस भिखारिन लड़की को यहाँ ला रखा और दाई की भतीजी कहकर मशहूर किया....मगर....यह वही लड़की थी जिसके घर जज का खूनी टिका था...

रामलाल---और जो जमनापुर थाने से भगाई गई थी ?.... बाईगॉड पहली ही नजर देखकर मुझे शक हो गया था...मगर इस कलक्टर को यह हर्गिज मत बताइयेगा, वर्ना वह तूफान मचा देगा....सारा भेद छिपा रखिये....

मि० शर्मा---यही तो मैं भी सोचता हूँ....

तभी---

कलक्टर---(पुकारता हुआ) मिस्टर शर्मा !

मि० शर्मा---(पास जाकर) जी....

कलक्टर---यह लड़की कौन थी ?

मि० शर्मा---मेरी दाई की भतीजी....थोड़े ही दिन हुआ गाँव से आई थी....

रामलाल---बाईगॉड, गाँव से आते मैंने खुद देखा था हजूर !

कलक्टर---दाई को बुलायें....

दायी आती है।

कलेक्टर---यह तुम्हारी भतीजी थी ?

दाई---हाँ हजूर ! बुढ़ापे का सहारा थी सरकार ! किसी निर्दयी ने मुझ गरीब की आँखें फोड़ दी....कैसे जियूँगी....

कलक्टर---मिस्टर शर्मा ! मैं समझता हूँ कि यह भी बलवाइयों की कारगुजारी है। आपको मारने आये थे मगर गोली इस लड़की को जा लगी....

रामलाल---बाईगाड, यही बात है हजूर !

कलक्टर मिस्टर शर्मा, रेखा तथा दाई से अनेकों प्रश्न करता है। मिस्टर शर्मा उस भयङ्कर अंग्रेज की आँखों में खटकने के डर से नयना का वास्तविक भेद छिपा जाते हैं। नयना दाई की

भतीजी ही प्रमाणित होती है। खूनी क्रान्तिकारी दलवाले ही ठहराये जाते हैं। निश्चित यही होता है कि हत्याकारी मिस्टर शर्मा की हत्या करना चाहता था, परन्तु भूल से गोली नयना को लग जाती है। अंग्रेज कलक्टर तो यह चाहता था कि मिस्टर शर्मा के घर की तलाशी ले, मगर मिस्टर शर्मा भी तो ऊँचे अफसर थे। उनकी तलाशी लेने के पहले कलक्टर को भी खूब सोच लेना था।

अन्त में वह तलाशी लेने का विचार स्थगित कर देता है।

पिछले हफ्ते जब यह अंग्रेज कलक्टर यहाँ आया था तो उसने सभी स्थानीय अफसरों एवं कर्मचारियों का रेकार्ड ध्यानपूर्वक देखा था। मिस्टर शर्मा बहुत दिनों से सरकारी पद पर थे और सदैव अपने उत्कृष्ट कार्य के लिए पुरष्कृत किये गये थे।

पूछताछ खतम होने के बाद कलक्टर चला जाता है।

दूसरे दिन नयना का दाह-संस्कार किया जाता है।

अर्थी के साथ लाल और रेखा भी जाते हैं, मगर वे दोनों अर्थी में कन्धा नहीं लगाते।

• •

दोपहर को लाल नयना के दाह-संस्कार से लौटता है। उसका शरीर न जाने क्यों थका-थका सा लग रहा है।

उसे आज रात अपने जीवन की सबसे महान् और महत्वपूर्ण खतरनाक परीक्षा देनी है। सफलता के विषय में उसका विश्वास अडिग है, परन्तु प्रस्थान करने से पहले एक बार वह सरदार से मिलकर नवीन समाचार जान लेना चाहता है।

तभी बाहर से भिखारी की आवाज आती है। आवाज सुन लाल बाहर आता है। लाल को देख, भिखारी अपना सर खुजलाता है।

भिखारी—तैयार हो ?

लाल—बिल्कुल सरदार !

भिखारी—रात में दो बजे से पहले पहुँच जाना....स्पेशल ट्रेन है। ठीक वक्त पर आयेगी, तुम्हारे साथी वहीं आ मिलेंगे....अच्छी तरह कमांड करना....खजाना हाथ आ गया तो बड़ा सहारा मिलेगा....देश का धन गोरों के हाथ न पड़े....

लाल—मैं पूरी कोशिश करूँगा....जान की बाजी लगा दूँगा....

भिखारी—मैं तुम्हें सावधान करने आया था....

लाल उसके हाथ पर एक पैसा रख देता है।

भिखारी चला जाता है।

लाल तैयारी करने लगता है। बड़ा-सा शीशा उसने हटा दिया है और अब उसकी गुप्त एवं भयानक वस्तुयें उसके स्नानागार के दीवाल की एक गुप्त आलमारी में हैं। लाल आलमारी खोलकर अपना रिवाल्वर साफ करता है। फिर कारतूसों की पेटी दुरुस्त करता है। नकाब और चुस्त काली पोशाक भी चुन लेता है।

रात होते-होते वह अपनी सारी तैयारी पूरी कर लेता है।

तभी रेखा आ पहुँचती है, पहले से भी गम्भीर-गहन मुख लिये।

रेखा—क्या कर रहे थे लाल भैया ?

लाल—कुछ तो नहीं....

रेखा—मैं तीन बार आकर लौट गई, हर बार दरवाजा भीतर से बन्द।

लाल—तूने पुकारा क्यों नहीं ?

रेखा—सोची, जरूरी काम में बाधा क्यों डालूँ....एक बाधा को तुम अपने रास्ते से दूर करके चिता पर रख आये....मैं बची हूँ सो सावधान रहा करती हूँ....कौन-सी पहेली सुलझा रहे थे लाल भैया दरवाजा बन्द करके ?

लाल—तेरा सर सुलझा रहा था।

रेखा—मेरा सर तो तुम हमेशा ही सुलझाया करते हो लाल भैया ! अभी उस दिन अगर मैं चीखकर गिर न पड़ी होती, तो

तुम्हारी गोली ने मेरा सर सुलझा ही दिया था....नयना बेचारी बेखबर थी....सुलझकर भी उलझती ही चली गई....तुम्हारा निशाना दूसरों के लिये बड़ा पक्का है लाल भैया ! एक रेखा ही तुम्हारे निशाने को बेनिशाना कर देती है....

लाल—(भावावेश में) इधर आ रेखा !

रेखा—पास ही तो हूँ, बोलो न ?

लाल—आकर मेरे कलेजे से लग जा....(उसका स्वर कुछ व्यग्र हो चला था।)

रेखा—लो लग गई, अब तो खुश, (वह दौड़कर लाल के शरीर से लिपट जाती है) आज तुम बहुत पीले-पीले से नजर आ रहे हो लाल भैया ! बात क्या है ? नयना अपनी जान दे दी, मगर तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ी क्या ?....चुड़ेल कहते थे न तुम उसे ?

लाल—माँ मर गई है रेखा ! आज घर जा रहा हूँ....

रेखा—कब ?....कब जा रहे हो लाल भैया ?

लाल—एक घंटे बाद ही....

रेखा—चल दोगे....यहाँ दिल नहीं लगता क्या ?

लाल—लगता है रेखा !....मगर माँ के मरने पर गाँव भी तो जाना जरूरी है ! वे लोग क्या कहेंगे ?

रेखा—लौटोगे तो जल्द ही ?

लाल—शायद लौटूँ शायद न लौट सकूँ ?....दिमाग पागल हो रहा है रेखा ! माँ के मरने पर कौन बेटा स्थिर रह सकता है ?

रेखा—मुझसे तुम छिप नहीं सकते लाल भैया !....रेखा की सावधानी अब बड़ी सजग हो चुकी है....धोखा नहीं खा सकती मैं....दुनिया चाहे माँ के मरने पर पागल हो जाय, मगर तुम जिस माँ के पीछे पागल हो, उसे रेखा जानती है, केवल देख नहीं सकी है उसे....

(लाल के शरीर से लगी-लगी रेखा आँसू बहाने लगती है।

उसका सर नीचा था, सो लाल देख न सका उसके आंसू।)

रेखा—लाल भैया ! तुम कहीं भी जाओ, रेखा के लिये अपनी जान सुरक्षित लेकर लौटना....कहीं तुम्हारी जान की जरूरत हो तो रेखा की जान भी साथ लिये चलना....

लाल—कैसी बातें करती है तू रेखा ?....मुझे पागल कर देगी तो मैं लौटूंगा भी नहीं....

रेखा—तुम लौटो, चाहे न लौटो लाल भैया ! रेखा की जान अगर तड़प कर निकली, तो सीधे वहीं आयेगी तुम्हारे पास.... रेखा को छोड़कर तुम जाने न पाओगे....चले गये, तो रेखा तुम्हें पा ही लेगी कहीं न कहीं....

लाल—मैं जा ही कहां रहा हूं पगली !....दो-चार दिन के लिए गांव भी नहीं जाने देगी मुझे ?"

रेखा—(करुण स्वर में) मुझ पर तुम कब विश्वास करोगे लाल भैया !... अब भी तो कर लो....रेखा के पैर जब तुम्हारे पैरों से मिलकर चलेंगे, तो देख लेना जमाने की छाती दहल जायगी ... तुम गांव जा रहे हो, तो मुझे भी वहां ले चलो....गांव के लोग मुझे देखकर खुश नहीं होंगे क्या ?

लाल—मैं तुझे नहीं ले जा सकता। जिद मत कर...

रेखा—मैं तुम्हें नहीं जाने दूंगी लाल भैया ! तुम रेखा को छोड़कर भाग रहे हो....नहीं जाने दूंगी....नहीं, नहीं, नहीं।

रेखा लाल का पैर पकड़ लेती है। लाल छुड़ाना चाहता है, मगर पांवों की बेड़ी नहीं छूटती। लाल घड़ी देखता है। प्रस्थान करने में केवल एक घन्टे की देर है। वहां पहुंचते-पहुंचते उसे रात के दो अवश्य बज जायेंगे। वह व्यग्र हो उठता है।

लाल—रेखा ! मेरा पैर छोड़ दे....

रेखा—नहीं छोड़ूंगी लाल भैया ! जाना चाहो तो मुझे ठुकरा कर चले जाओ....

लाल—(तीव्र स्वर) छोड़ दे रेखा ! मुझे बहुत जरूरी काम है.... देर होने से बहुत बड़ा नुकसान हो जायगा....

रेखा—मुझे न छोड़ो लाल भैया ! रेखा का मोह मत तोड़ो....

लाल—रेखा ! कर्त्तव्य के आगे मुझे मोह की चिन्ता नहीं, नयना हो या रेखा, मेरे कर्त्तव्य-पथ पर जो भी अड़ेगी, उसे दूर कर दूंगा....छोड़ दे मेरा पैर....छोड़ दे रेखा !

रेखा—(लाल के पैरों को और जकड़ कर) नहीं छोड़ूंगी....

लाल—नहीं छोड़ेगी ?

रेखा—नहीं...नहीं....

लाल—तो ले, तू भी जा....

लाल रेखा की छाती पर कस कर लात जमा देता है। रेखा दूर छटक जाती है। मुंह से चीखती तक नहीं, चोट खाकर भी।

उठ खड़ी होती है वह।

रेखा—लात की एक चोट मोह की डोरी नहीं तोड़ सकती लाल भैया !

लाल—चली जा यहाँ से, नहीं तो....

लाल अपना रिवाल्वर निकाल लेता है। वह पूरे आवेश में है।

रेखा—नहीं तो गोली चला दोगे...नयना मत समझना मुझे लाल भैया ! मैं रेखा हूं और रेखा पर तुम्हारी गोली असर नहीं करेगी....दूर करना चाहो तो दो-चार लात और जमा दो...

लाल—नीच कहीं की....

दौड़कर लाल रेखा को पकड़ लेता है और कसकर कई तमाचे जड़ देता है, फिर उसे घसीटता हुआ ले जाकर बाहर ढकेल देता है और भीतर से दरवाजा बन्द कर लेता है।

रेखा विवश-सी क्षण भर लाल के कमरे की ओर निहारती रहती है, फिर झपटती हुई निकल जाती है। अपने कमरे में वह आकर पलंग पर गिर पड़ती है। लाल अपना मस्तक दीवार पर दे

मारता है और तभी सुनाई पड़ता है, बिलखती हुई रेखा गा रही है—

पहन-पहन चाँदी की चूनर आई रात सुहानी
होठों की हँसी बनी आँसू, आँसू की बनी कहानी
हँसते आसमान के तारे धरती की आँखें रोतीं
हरी-हरी घासों में लिपटी एक बूँद शबनम सोती
एक अगिन जलती है भीतर, बाहर बादल बरस रहे
दिल के अन्दर तूफान उठा मिलने को नैना तरस रहे
लेकर एक मिलन की आशा जलन वियोगिन की पलती
दिन की धूप चमक उठती है, रात-चाँदनी भी ढलती

• •

दस बजे रात लाल पूर्ण रूप से तैयार होकर बाहर निकलता है। वह ग्रेट कोट पहन लिया है। कोट के नीचे चुस्त नीला लबादा है, कमर की पेटी में दो रिवाल्वर हैं और कन्धे पर कारतूसों की पेटी। काली नकाब कोट की जेब में है।

उसे देखकर किसी को भी यह सन्देह नहीं हो सकता है कि इस ग्रेट कोट के नीचे इतनी भयंकर वस्तुयें छिपी हैं।

लाल अन्धकार में तेजी से पैदल बढ़ चलता है।

कई मील का रास्ता उसे तय करना है और ठीक दो बजे रात अपनी मंजिल पर पहुँच जाना है।

बढ़ता जा रहा है वह।

उसे खबर नहीं है कि उसके पीछे-पीछे कुछ दूर पर एक काली शक्ल भी उसका पीछा कर रही है।

• •

रामलाल मिस्टर शर्मा के बँगले में तेजी से घुसता है। सामने ही दाई खड़ी है, पागलों-सी शकल हो रही उसकी।

रामलाल—(डरकर, अपने आप) बाइगाड, आज यह कैट

फिर सामने पड़ी (जोर से) मुझे माफ करना ग्रैंड मदर....काम जरूरी था, वर्ना कभी न आता....

दाई—म्याऊँ

रामलाल (स्वतः) ह्वाट म्याऊँ...(जोर से) ग्रैंड मदर, हजूर घर में हैं या नहीं ?

दाई—म्याऊँ !

रामलाल—(स्वतः) बाइगाड, पागल हो गयी है—क्या मामला है ?....(जोर से) हजूर कहीं गये हैं क्या ?

दाई—म्याऊँ !

रामलाल—आज तो यह कम्पलीट बिल्ली बन गई है....

तभी अन्दर से मिस्टर शर्मा आ जाते हैं।

दाई अन्दर चली जाती है।

रामलाल—हजूर ! आज ग्रैंड मदर को क्या हो गया है ?

मि० शर्मा—पूछो मत....वह पागल हो गयी है रामलाल ! कुछ पूछो तो 'म्याऊँ' कहती है, बस....

रामलाल—बाइगाड, शाक भी तो तगड़ा लगा है....आप कहीं जा रहे हैं क्या ?

मि० शर्मा—कलक्टर साहब के यहाँ से फोन आया था... बुलाया है। कोई जरूरी मीटिंग है....तुम भी साथ चलो...

दोनों चल पड़ते हैं।

● ●

अंग्रेज कलक्टर का बंगला। रात के दस बजे हैं। जब से यह कलक्टर ब्राउन आया है, तब से बंगले के चारों ओर कड़ा पहरा पड़ने लगा है। ब्राउन के कमरे में इस समय कई बड़े-बड़े अफसर मौजूद हैं। कोई गुप्त मंत्रणा हो रही है।

ब्राउन—मिस्टर शर्मा अभी तक नहीं आये ?....पता नहीं क्या करने लगे ?

एक—घर पर ही तो थे, फोन पर बोले कि अभी आता है....

दूसरा—आज वे दाह-संस्कार में फँसे थे....थक गये होंगे....आ ही रहे होंगे....

ब्राउन—इतनी देर मैं बरदाश्त नहीं कर सकता, मैं स्वयं फोन करता हूँ....

लपककर ब्राउन दूसरे कमरे में चला जाता है। तब तक मिस्टर शर्मा रामलाल के साथ पूरी वर्दी में प्रवेश करते हैं।

कई एक साथ ही—आ गये आप....डी० एम० साहब अभी आपको याद करने फोन पर गये हैं....

मि० शर्मा—माफ करें....मुझे देर हो गई....

तभी तमतमाया चेहरा लेकर ब्राउन लौटता है।

मिस्टर शर्मा को देखकर वह उबल पड़ता है।

ब्राउन—कहाँ रह गये थे आप?....आपने क्या बिल्लियाँ भी पाल रखी हैं, जो फोन रिसीव करती हैं? फोन किया तो आवाज आई 'म्याऊँ....'बात क्या है?

मि० शर्मा—माफ करें साहब! दाई उस लड़की की मौत से पागल हो गई है और सुबह से ही बिल्लियों की बोली बोल रही है....रेखा भी नहीं रही होगी शायद....

ब्राउन बैठ जाता है। मिस्टर शर्मा भी बैठते हैं।

ब्राउन—अब काम की बातें हों मिस्टर शर्मा! आज ४-अप मेल से सरकारी खजाना कैपिटल जा रहा है....याद है आपको?

मि० शर्मा—जी हाँ....

ब्राउन—मैं इतने अफसरों से राय कर चुका हूँ....वक्त बहुत कम है....आपको थोड़े में सभी बातें बताता हूँ....हमारे जासूस खबर लाये हैं कि बागी लोग वह खजाना लूट लेना चाहते हैं। मुझे यह खबर दोपहर को ही मिल चुकी थी। मैंने फोन से सब इन्तजाम कर लिया है। ४ अप मेल अब मेन लाइन से न जाकर

लूप-लाइन से कैपिटल पहुँचेगी। ट्रेन पर पहरे का इन्तजाम बहुत बढ़ा दिया गया है। वह खतरे से बाहर है....आगा ठीक समय पर धावा बोलना चाहेंगे। वक्त बहुत कीमती है। इसे हाथ से न जाने देना चाहिये....

मि० शर्मा—मैं तैयार हूँ साहब! आप हुक्म दें....

ब्राउन—आप पुलिस की पूरी ताकत साथ लें और धावे के लिये अभी तैयार हो जांय....मैं भी चलूँगा साथ में....

• •

रेल की समानान्तर पटरियाँ दूर तक चली गई हैं। क्रासिंग से एक फर्लाङ्ग दूर घनी झाड़ियों के बीच पचास नकाबपोशों का गिरोह खड़ा है, चुपचाप, गतिहीन।

लाल सबसे आगे है। उस गिरोह का सरदार है वह। उसी की आज्ञा पर इतने बहादुरों का काम आधारित है।

लाल—नम्बर ३५!

जी! (एक नकाबपोश आगे बढ़कर बोलता है)

लाल—(अपनी घड़ी देखते हुये) पन्द्रह मिनट और हैं। सबको होशियार कर दो....तुम तीन-चार आदमियों को साथ लेकर पटरियों के बोल्ट निकाल डालो और लाइन अलग कर दो....

वह—बहुत अच्छा!

धीरे-धीरे चार नकाबपोश औजार लेकर रेलवे लाइन को ओर बढ़ते हैं। तेज हाथ अपना काम प्रारम्भ कर देते हैं।

तभी—

धाँय! दुम्म! धाँय!

नीरव वातावरण को चीरता हुआ कई रायफलों का स्वर गरज उठता है। लाइन उखाड़नेवाले नकाबपोश वहीं लोट पड़ते हैं।

लाल—(चिल्ला कर) खतरा!....सब लोग छिप जाओ....सावधान रहो....

फ्लैश मारते सभी नकाबपोश तितर-बितर होकर पास की झाड़ियों में छिप जाते हैं। लाल भी एक झाड़ी की ओट में चला जाता है। रेलवे लाइन के उस पार से फिर आवाज आती है—

धांय ! धांय ! दुम्भ !

नकाबपोशों में से कई एक चीख पड़ते हैं।

लाल—(चिल्लाते हुए) डटे रहो....फायर !....४—अप आती ही होगी....हाथ से निकल न जाय....

नकाबपोशों की तरफ से भी गोलियों की बौछार दगने लगती हैं। प्रतिद्वन्द्वियों की ओर से भी गोलियाँ चलती हैं, चीख-चिल्लाहट मच जाती हैं। गोलियाँ बराबर चलती रहती हैं।

घमासान युद्ध प्रारम्भ हो जाता है। दोनों ओर के गोली-बाज अपने रिवाल्वर और राइफलों की कला दिखाने लगते हैं।

लाल हैरान है, अपने ऊपर किये गये इस अचानक आक्रमण से। आक्रमणकारी पुलिस ही होगी।

उन्हें कैसे पता चला इस इरादे का ? (सोचता है)

गोलियाँ बराबर चल रही हैं। लाल घड़ी देखता है। ट्रेन आने में केवल दो मिनट रह गये हैं। वह बेचैन हो उठता है। यदि लड़ाई इसी प्रकार जारी रही, तो वह सरकारी खजाने पर अधिकार कैसे कर सकेगा।

बेचारे लाल को क्या मालूम कि ट्रेन ने रास्ता बदल दिया है और नकाबपोशों से चौगुनी संख्या में सशस्त्र पुलिस मिस्टर शर्मा और ब्राउन के साथ मोर्चे पर डँटी है।

दो मिनट भी बीत चलते हैं। ट्रेन नहीं आती है।

लाल हैरान हो उठता है। तभी, लाल के कन्धे पर कोई धीरे से हाथ रखता है। लाल चौंक पड़ता है। घूमकर देखता है, तो अपने ही दल का एक नकाबपोश।

लाल—(चौंककर) क्या है ?

वह—कुछ तो नहीं....

स्वर सुनकर लाल जैसे आसमान से गिरता है।

लाल—क्या करने आये हो ?

वह—तुम्हारा साथ देने...

गोलियाँ तेजी के साथ चल रही हैं। अन्धकार का शान्त वातावरण भयानक आवाजों से प्रकम्पित हो रहा है।

लाल आवाज पहचान लेता है। लपक कर वह उस नकाबपोश को सीने से लगा लेता है।

लाल—मेरी रेखा ! तुम यहाँ कैसे ?

रेखा—लात मारकर चले आये थे लाल भैया !....तुम्हारे पीछे-पीछे पैर सहलाने आ गई। सोची, चोट तो लगी ही होगी तुम्हें....

लाल—रेखा !...तुम भागो यहाँ से....मेरी रेखा !....तुम भाग जाओ....हम पुलिस के फन्दे में आ पड़े हैं....तुम्हारा यहाँ रहना ठीक नहीं....

रेखा—रेखा अब टल नहीं सकती....बहुत दिनों तक ठुकराते आये हो....आज नहीं ठुकरा सकोगे....अब तो रेखा के पैर तुम्हारे पैरों के साथ मिलकर ही आगे बढ़ेंगे....बहुत भागते थे, अब भागकर नहीं जा सकोगे....रेखा ने अपना रास्ता खुद बनाया है....

लाल—रेखा ! हमारे आदमी अब कमजोर पड़ रहे हैं....

रेखा—मै देख रही हूं लाल भैया !

लाल—तुम भागो यहाँ से....रेखा ! मेरे लिये तुम भागो....

रेखा—तुम्हारे ही लिये तो इतनी दूर से भाग कर आई हूं... अब कहाँ भगा रहे हो लाल भैया !

एक पुलिस कुछ नजदीक आ गया था, जिसे रेखा के रिवाल्वर ने धराशायी कर दिया।

लाल—रेखा ! तुम्हारे पास रिवाल्वर भी है ?

रेखा—हाँ लाल भैया !....एक खिलौना समझो इसे....

लाल—तुम्हारा निशाना काफी सध चुका है ?

रेखा—तुमसे कुछ ज्यादा ही....तुम्हारा निशाना कभी-कभी चूक भी जाता है लाल भैया !....मगर रेखा का सच्चा निशाना तो तुम कई बार देख चुके हो ...

लाल—कई बार ?....आज ही तो देखा है....

रेखा—झूठ न बोलो लाल भैया !....जज साहब की खोपड़ी पर मेरा निशाना कितना अचूक बैठा था...

लाल—तुम्हीं थी वह ?

रेखा—तुम्हारा काम मैंने पूरा कर दिया था....और नयना तो दो ही गोली खाकर ऐसी हो गई कि साँस भी न ले सकी।

लाल—नयना को तुमने....तुमने रेखा...

रेखा—हाँ लाल भैया ! वह चुड़ैल ही थी....तुम ठीक कहते थे....और अपने मस्तक की चोट तो तुम भूले ही जा रहे हो.... मैंने ही वह पीली फाईल ले जाकर तुम्हारे सरदार को भिक्षा के रूप में दी थी....

लाल—रेखा !....क्या हो तुम ?

रेखा—अब भी नहीं समझे तुम लाल भैया !....इतनी परीक्षा देकर भी रेखा तुम्हारे इम्तहान में फेल ही रही ?....

लाल—मेरी रेखा !....मेरी बच्ची !....तू रणचण्डी है....

रेखा—इस उपाधि से मैं बहुत खुश हूँ लाल भैया !....तुमने मुझे अपने योग्य समझा, यह दुनिया में मेरे लिये, सबसे बड़ा वरदान है....

तभी पीछे से भी रायफलें गरज उठती हैं।

लाल—(चौंककर) पुलिस हमें घेरकर आगे बढ़ रही है.... रेखा ! हम जल्द ही पुलिस के पंजे में घिर जायेंगे....हमारा दाँव उल्टा पड़ा है....तुम चली जाओ यहाँ से....

रेखा—यह अधिकार अब मत छीनो लाल भैया !....तुम्हारी

शरण में आ गई हूँ, तो लौट न सकूँगी अब....भाग भी चली, तो पुलिस घेर लेगी ...

रायफलें अब अगल-बगल से भी चलने लगती हैं।

क्रांतिकारी-चारों ओर से घिर गये हैं। पुलिस का दल घेरा बनाकर धीरे-धीरे पास आता जा रहा है। नकाबपोश भी प्राणपण से युद्ध में संलग्न हैं, परन्तु उनका वेग क्रमशः कम होता जा रहा है। पुलिस की रायफलों के आगे नकाबपोशों के रिवाल्वर कमजोर पड़ते जा रहे हैं।

लाल—उफ रेखा! तुमने यह क्या किया? तुम यहाँ क्यों आई?....अब मरने या पुलिस के हाथों पड़ने के सिवा और कोई चारा नहीं....

रेखा—मैं इतनी कमजोर नहीं लाल भैया कि तुम्हारे साथ मर भी न सकूँ....

उसी समय पुलिस दल पर लाल की दृष्टि पड़ती है।

लाल—रेखा! रिवाल्वर तैयार कर रखो....वे लोग पास आते जा रहे हैं....

रेखा—मेरा रिवाल्वर तैयार है लाल भैया!

धाँय! धाँय!

लाल और रेखा के रिवाल्वर गरज उठते हैं किसी का भी निशाना खाली नहीं जाता।

लाल—रेखा! उन लोगों को तुम रोको....मैं दूसरी तरफ....

धाँय! धाँय! धाँय!....

उस झाड़ी में से गोलियों की बौछार छूटने लगती है। उस ओर बढ़ता हुआ पुलिस का दल रुक जाता है। वे भी उसी झाड़ी को लक्ष्य करके रायफलें दागनी शुरू कर देते हैं।

लाल—रेखा मेरे पीछे हो जाओ....

रेखा—मैं तो लाल भैया के आगे ही रहूँगी....

लाल—शैतान लड़की ! मैं इस दल का सरदार हूँ....आज्ञा मान, नहीं तो उड़ा दूँगा गोली से....हाँ, अब ठीक है....मेरे ठीक पीछे छिपकर रह....मेरे सर के ऊपर से रिवाल्वर चला....

धांय ! धांय ! दुम्भ ! धांय !

जान हथेली पर लेकर डंटे हुए लाल-रेखा की मार से पुलिस भी घबड़ा उठती है। पुलिस के जवान एक के बाद एक गिरने लगते हैं। दोनों का निशाना इतना अचूक बैठता है कि पुलिसवाले हाहाकार कर उठते हैं। पुलिस का नया दल दोर्चे पर आ डंटता है।

दुम्भ !

रायफलों की नयी बाढ़ दगती है पूरे वेग के साथ।

क्रांतिकारियों का दल क्षीण हो चला है। कहीं-कहीं से रिवाल्वर की आवाज गरज उठती है। पुलिस समझ गई है कि अब शत्रुओं की संख्या क्षीण हो चली है। ब्राउन और मिस्टर शर्मा भी लाल-रेखा के मोर्चे पर डंटे हैं। पुलिस की लगभग सारी शक्ति उनके विरुद्ध एकत्र हो चुकी है। फिर भी लाल और रेखा के फायर इतने तीव्र हैं कि पुलिस को कुछ दूर पीछे हटकर पत्थरों की ओट शरण लेनी पड़ती है।

लाल—रेखा !....

रेखा—लाल भैया !

लाल—हमारे दलवालों के रिवाल्वर सुनाई नहीं पड़ते....सभी काम आये....केवल हम दो ही बच रहे हैं....

रेखा—हाँ लाल भैया !

रेखा लाल के शरीर की ओट में है। फायर के साथ-साथ बातें भी हो रही हैं। तभी एक गोली लाल के हाथ में आ धँसती है। वह कुछ लड़खड़ाता है फिर सम्हल जाता है।

लाल—रेखा....

रेखा—लाल भैया....

लाल--अब कोई उम्मीद नहीं....मरने के लिये तू तैयार है न ?

रेखा--हाँ लाल भैया !....

लाल--हमारे शरीर पुलिस के हाथ जीवित न पड़ें....रोक दे अपना हाथ....आ मिल लें आखिरी बार....

रेखा निकट आ जाती है। दोनों गले मिलते हैं।

लाल, रेखा का मस्तक चूमता है।

रेखा--लाल भैया ! तुम्हारी आवाज़ रो रही है...यह भी क्या रोने का वक्त है ?

लाल--नहीं रेखा !....मगर तू रणचण्डी है, तुझे समझ नहीं सका था अब तक....मुझे क्षमा कर दे रेखा !

रेखा--लाल भैया !...इस जन्म में तुम्हारा बहुत थोड़ा-सा साथ दे सकी....अगले जन्म में तुम्हारी सगी बहन होकर आऊँ, तब समझूँगी कि मेरा त्याग सफल हुआ....

दोनों फिर एकबार गले मिलते हैं। इनके रिवाल्वरों की बोछार बन्द होते ही, पुलिस दो-चार-बाढ़ और दागती है।

(ब्राउन और मिस्टर शर्मा पुलिस दल को आगे बढ़ने की आज्ञा देते हैं) दौड़कर पकड़ो....भाग न सकें ..

रेखा--एक बात कहनी है लाल भैया !....कान में कहूँगी....

(झुककर कुछ कहती है।)

लाल--(चौंककर) मुझे स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि....सावधान ! पुलिस पास आ गई....अपना रिवाल्वर मेरी ओर करो...तुम मुझे गोली मारोगी और मैं तुम्हें....निशाना न चूके....

रेखा--तुम अपने निशाने का ख्याल रखना, अच्छा विदा !

लाल--विदा रेखा !....मेरी जीवन रेखा ! विदा !

पुलिस का दल पास आ गया है।। उन लोगों ने इन दोनों को देख लिया है। वे पूरी तेजी के साथ दौड़े आ रहे हैं। लाल और रेखा एक दूसरे से दो कदम की दूरी पर खड़े हो जाते हैं।

दोनों के रिवाल्वर एक दूसरे के निशाने पर तैयार होते हैं।

लाल—रेखा! फायर!

मगर उसी समय कई पुलिसवाले आकर उन्हें विवश कर देते हैं। रिवाल्वर छीन लिए जाते हैं। मिस्टर ब्राउन की टार्च की रोशनी में मिस्टर शर्मा रेखा का मुख देखते हैं। उसकी नकाब पीछे को उलटी हुई है। रेखा को देखकर मिस्टर शर्मा का शरीर काँप जाता है। दूसरे ही क्षण वे गरजकर आज्ञा देते हैं।

मि० शर्मा—इन दोनों को कैद करो....मेरे नाम पर कलङ्क लगानेवाली, बागियों का साथ देनेवाली यह दगाबाज लड़की मेरी है....इसे अभी उड़ा दो गोली से....

ब्राउन मिस्टर शर्मा का साहस देखकर दङ्ग रह जाता है।

ब्राउन—ठहरो!....इसे कैद में रखा जाय....इससे बहुत कुछ पता लगेगा....मिस्टर शर्मा! मुझे बहुत अफसोस है कि आपकी लड़की को कैद किया जा रहा है....मगर हम मजबूर हैं....

मि० शर्मा—मैं खुद शरमिन्दा हूँ साहब! इस नालायक लड़की ने मेरी कई पुस्तों की वफादारी पर पानी फेर दिया....इसे कैद में रखें....मैं स्वयं इसे तड़पा-तड़पाकर इसकी जबान खुलवाऊँगा....इसे अपने हाथ से गोली मारूँगा....तभी मुझे आराम मिलेगा....

ब्राउन—आप शांत हों मिस्टर शर्मा!....आपके घर की तलाशी लेने पर मैं मजबूर हूँ। आप बुरा न मानें....हम लोग चारों तरफ से कानून की बन्दिश में हैं....

मि० शर्मा—आप तलाशी ले सकते हैं....अभी चलकर....

रेखा और लाल पुलिस के सख्त पहरे में जेल भेज दिये जाते हैं।

और ब्राउन उसी रात कुछ अफसरों के साथ मिस्टर शर्मा के घर की तलाशी लेता है। कुछ हाथ नहीं लगता।

ब्राउन—(चलते-चलते) मिस्टर शर्मा! हमें आपकी वफादारी

पर जरा भी शक नहीं, मगर कानून की पाबन्दी तो जरूरी है....
आप कल सबेरे आठ बजे मुझसे जेल में मिलें....

शर्मा—बहुत अच्छा....

● ●

मिस्टर शर्मा के बँगले के सामने वाली सड़क।

चारों ओर सशस्त्र पुलिस के जवान मुस्तैदी से भीड़ को तितर-बितर करने में लगे दीख पड़ते हैं।

पुलिस और सी० आई० डी० विभाग के कई उच्चाधिकारियों से घिरा ब्राउन लाल वाले कमरे से बाहर निकलता है।

बगल में स्वाभाविक गम्भीर मुद्रा में मिस्टर शर्मा खड़े हैं।

ब्राउन—मुझे अफसोस है मिस्टर शर्मा !

मि० शर्मा—(किंचित चौंकते हुए) सर !

ब्राउन—(अपना हाथ मिस्टर शर्मा के कन्धे पर रखता हुआ) आप जैसे राज-भक्त के ऊपर परिस्थितियों ने शक करने को मजबूर किया।

मि० शर्मा—कोई बात नहीं सर !

(ओंठों पर फीकी-सी, मरी-सी मुस्कान तिर उठती है।)

ब्राउन—मेरा ख्याल था, मिस शर्मा महज लड़कपन के कारण इस खूनी दल में आ गयी थीं मगर देखता हूँ...

मि० शर्मा—मैं लज्जित हूँ सर ! इस भयंकर लज्जा का दारुण अनुभव मेरे जैसा पिता ही कर सकता है। आप ही सोचिये, उस मरमूद के पेट से रहस्य उगलवाने के लिए मैंने क्या नहीं किया। पुलिस के महकमे में कड़ी-से कड़ी जो सजा हो सकती है....

ब्राउन—वेरी गुड, बाई गॉड, आप का कलेजा कितना सख्त है। एक पिता के हाथों बेटी को इतनी रोमांचकारी पीड़ा ! मिस्टर शर्मा, मेरा तो उस दृश्य की कल्पमात्र से अब भी कलेजा धड़क उठता है....

मि० शर्मा—हूँ....

ब्राउन—मिस रेखा और उस लालचन्द का मुकदमा शीघ्र ही शुरू होगा....और मेरा खयाल है....

मि० शर्मा—मेरा निवेदन है सर, आप रेखा को सजा देने का अधिकार जज से मुझे दिलवा दें। मेरी एकमात्र आन्तरिक इच्छा है, अपने कुल की उस कलंकिनी को खुद अपने हाथों गोली मारूँ....

ब्राउन—(क्षण भर मिस्टर शर्मा के दृढ़ मुख पर दृष्टि गड़ाकर) सो नहीं होने का मिस्टर शर्मा ! हमारी सरकार को गर्व है, आप जैसे वफादार कर्मचारी पर....

और वह श्रद्धापूर्वक मिस्टर शर्मा से हाथ मिलाकर पास ही खड़ी अपनी जीप में आ बैठता है। मिस्टर शर्मा के पैर कांप से उठते हैं। सशस्त्र पुलिस के दस्तों से भरी पुलिस की गाड़ियाँ धीरे-धीरे, ब्राउन की जीप के पीछे-पीछे जाती दीख पड़ती हैं। देखते ही देखते मिस्टर शर्मा अकेले रह जाते हैं।

न जाने क्यों उनके ओंठ दाँतों तले दब जाते हैं। आँखें विस्फारित-सी होकर सामने सड़क की ओर उन्मुख हो जाती हैं। उनके पैर लड़खड़ाते हैं। बँगले के अन्दर से पगली-सी बुढ़िया दाई आकर उन्हें सम्हाल लेती है।

दाई—साहब !

मि० शर्मा—दाई, रेखा गई, लाल भी गया और जानती हो, सरकार मेरी वफादारी पर कोई ऊँचा ओहदा तजबीज रही है... ऊँचा ओहदा....

विक्षिप्त से वे दाई का सहारा लिए लालवाले कमरे की ओर बढ़ जाते हैं।

पृष्ठभाग से अत्यन्त अस्पष्ट रूप में संगीत की सधी हुई लय के साथ—'वन्देमातरम्....वन्देमातरम्....' सुन पड़ता है और तब

सड़क, बंगला, सब कुछ घोर अन्धकार में खो जाता है।

• •

फोर्ट में आज बड़ी भीड़ है। सत्रह दिनों तक लगातार चलने के उपरान्त आज लाल और रेखा के मुकदमे का फैसला होने वाला है। पाँच सशस्त्र कान्सटेबिलों से घिरे हुए दोनों अलग-अलग कटघरों में खड़े हैं। कटघरे के पास ही कुर्सियों पर ब्राउन आदि अफसरों के साथ मिस्टर शर्मा दीख रहे हैं।

जज के आने पर सब उठकर उनका अभिवादन करते हैं। दर्शकों के बीच सनसनी व्याप्त हो जाती है। दबे-दबे स्वर में—'गोली मारी जायेगी दोनों को—नहीं-नहीं फांसी होगी—अजी, नहीं, गोली और फांसी तो मामूली सजायें हैं, इन्हें तो आजन्म कोड़े मारते रहने की सजा देनी चाहिए....' चर्चा का बाजार गर्म है।

रेखा और लाल की दृष्टि मिस्टर शर्मा की ओर केन्द्रित है।

जज अपना सिर ऊपर उठाता है और हाल में एकबारगी ही सन्नाटा व्याप्त हो जाता है।

लाल और रेखा अब भी अपनी आकुल दृष्टि मिस्टर शर्मा की ओर गड़ाये हैं। जैसे अपनी सजा के लिए उनके मन में कोई उत्सुकता ही न हो।

जज—अनेक प्रमाणों से अपराधियों का अपराध प्रमाणित हो चुका है। कानूनन् उन्हें फांसी की सजा मिलनी चाहिए परन्तु गवर्नर जनरल महोदय की विशेष आज्ञा से उनको आजन्म कठोर कारावास का दण्ड दिया जाता है। गवर्नर जनरल महोदय की ऐसी आज्ञा का तात्पर्य यह है कि भविष्य में, जेल की तकलीफों से बाध्य होकर अभियुक्तों से क्रान्तिकारी दल के सम्बन्ध में सूचना अवश्य प्राप्त हो जायेगी, अनुमान किया जाता है, इनके दल का मुखिया कोई ऐसा व्यक्ति है, जिसका रहस्य खुलने पर सरकार को

चकित हो उठना पड़ेगा....

इसके बाद वे अपने कथन की पुष्टि के लिए देर तक कानूनी बखिया उधेड़ते रहते हैं।

सजा सुनकर लाल और रेखा के मुख पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वे पूर्ववत् निर्विकार-भाव से मिस्टर शर्मा की ओर निहारते रहते हैं। मिस्टर शर्मा क्षणभर के लिए चौंकते हैं मगर उनका यह चौंकना सम्भवतः लाल और रेखा के अतिरिक्त और कोई देख नहीं पाता है।

इस अप्रत्याशित फैसले से सारे कोर्ट में देखते ही देखते गहरी अशान्ति व्याप्त हो जाती है।

• •

जेल का मुलाकाती कमरा। रेखा और लाल जंगले के पीछे खड़े दीख पड़ते हैं। उनकी बहुत दिनों की इच्छा पर, दया करके सरकार मिस्टर शर्मा से मिलने की व्यवस्था कर दी है। पुलिस के चार जवान बन्दूकें सीधी किये, उनके पीछे दूर पर खड़े हैं।

उसी समय मिस्टर शर्मा लपकते हुए आते हैं।

हथकड़ी-बेड़ी से विवश रहने के बावजूद दोनों झुककर उनका अभिवादन करते हैं।

मिस्टर शर्मा को आँखें भर आती हैं। परन्तु आँखों का यह भराव अदृश्य ही रहता है। अन्तर का उद्वेग मुद्रा पर छलक पाने में सर्वथा असफल ही सिद्ध होता है।

मि० शर्मा—(इधर-उधर देखकर) रेखा!

रेखा—पिताजी....नहीं-नहीं, सरदार....

लाल—(ओंठों पर मुस्कान) सरदार, आपने अपनी गलती अवश्य ही महसूस कर ली होगी। मेरे बार-बार अनुरोध करने पर कि दल में स्त्रियों का प्रवेश निषेध न रखा जाय, आप इनकार कर जाते थे। मगर अब देख रहे हैं न, रेखा जैसी दृढ़ता आपके

इस दाहिने हाथ, लाल में भी शायद नहीं....

मि० शर्मा—(भर्राये स्वर में) हाँ, बेटा !

रेखा—सरदार....नहीं, पिताजी !

मि० शर्मा—हाँ,....

लाल और रेखा एक दूसरे की ओर देखते हैं फिर दोनों के होठों पर क्षीण मुस्कुराहट दौड़ जाती है।

रेखा—पिता जी अब तो बेटी कहकर पुकार लीजिये....रेखा नालायक ही सही मगर आप की बेटी तो है....पुलिस कप्तान की निगाहों में रेखा बागी हो सकती है मगर बूढ़े भिखारी की नजर में तो रेखा महान देश-सेविका है....अब तो सारी उम्र जेल की दीवारों में ही कटेगी....फिर कभी आपको माथा खुजलाते भी नहीं देख सकूंगी....

मि० शर्मा—रेखा !

रेखा—पिता जी ! अब आप के माथे की खुजली दूर हो गई क्या ? लाल भैया के सामने भिखारी बनकर तो आप हमेशा माथा खुजलाते रहते थे....बागियों के सरदार ! हम से छिप नहीं सकते तुम ! अपनी वफादारी दिखाने के लिये रेखा की बगावत को जेल के सीखचों में भले ही बन्द कर दो तुम, मगर अपने बागी दिल पर कभी काबू नहीं पा सकोगे....

शर्मा—रेखा ! मेरी बच्ची ! तूने कब पहचाना मुझे ? लाल को भी शायद तूने ही बताया....

रेखा—लाल भैया की तरह बेवकूफ यह रेखा नहीं पिताजी ! मैं आपको बहुत पहले ही पहचान गई थी। शक तो बहुत दिनों से था, विश्वास तब हुआ जब नयना मारी गई और आप ने उसका भेद छिपाकर कलेक्टर से झूठी बात कही। मिस्टर शर्मा जैसा वफादार नौकर वैसा नहीं कर सकता था....वह बागियों के सरदार का ही काम था....

मि० शर्मा—मैं तेरी तरफ से होशियार था रेखा। मैं जानता था कि मेरी बेटी होकर तेरे दिल में भी गुलामी की जंजीरों को आवाज दर्द पैदा करती रहती है....लाल ने भी तुझे अपने साथ लेने के लिये कई बार सिफारिश की, मगर....सरकारी नौकरी की ओट में अपने देश के लिये मैं जो महान कार्य कर रहा था उसके लिये, मुझे होशियार रहना जरूरी था,.. मानी नहीं, आग में कूद ही पड़ी। अफसरों को शक न हो, इसलिये मुझे दिल पर पत्थर रख कर तुझे और लाल को....

रेखा—पिताजी! आपको पता रहा होगा कि खजाने वाली गाड़ी अब दूसरे रास्ते से जा रही है, फिर अपने लाल भैया को वहाँ जाने से रोका क्यों नहीं?

मि० शर्मा—(अनुतप्त स्वर) ब्राउन को मुझ पर सन्देह हो गया था बेटी! इसकी कोई सूचना मुझे नहीं दी गई थी। खैर, अब तो सब कुछ समाप्त हो चला....

लाल—(तीव्र स्वर) समाप्त हो गया, आपका तात्पर्य?

रेखा—क्या इतना सब करने पर भी सरकार आप पर सन्देह करती है?

मि० शर्मा—नहीं....

लाल—तो?

मि० शर्मा—हम भारतीयों को स्वतंत्रता के लिए रिवाल्वरों का नहीं अपितु बापू की अहिंसा का ही सम्बल ग्रहण करना चाहिये। मैंने सोचा था, अपने अन्तस की ज्वाला से हमारे मुट्ठी भर जवान, अंग्रेजों को भस्म कर देंगे मगर परिणाम की भयंकरता ने मेरे उस स्वप्न को स्वप्न ही बनाया—दुःस्वप्न! अपने इस भ्रम में, मैंने एक नहीं, तुम सब जैसे सैकड़ों, भारत माँ के सपूतों को बलिदान कर दिया परन्तु मिला क्या?

लाल और रेखा चौंक कर उनकी ओर देखने लगते हैं।

लाल—सरदार....पिताजी ! आप कह क्या रहे हैं यह ?

रेखा—(कम्पित स्वर) पिताजी ! पिताजी !!

मि० शर्मा—हाँ मेरे बच्चों, मैं ही कह रहा हूँ यह....अपने इस भ्रम का प्रायश्चित मैं कभी नहीं कर पाऊँगा....

लाल—और हमारा दल....

मि० शर्मा—उसे मैंने विघटित कर दिया है लाल बेटा !

लाल—आह, पिताजी ! क्या इस जीवन में हम अपने देश को स्वतंत्र नहीं देख सकेंगे।

मि० शर्मा—नहीं बेटा; आज सारा देश पूज्य बापू के पावन निर्देश पर स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ने को आतुर हो उठा है। अंग्रेजी हुकूमत की नींव हिलने लगी है और वह दिन दूर नहीं, जब हम दिल्ली के लाल किले पर, यूनियन जैक के अभिशाप को धोकर तिरंगा लहराता हुआ देखेंगे....

रेखा—पिताजी ! काश कि हम उस पावन घड़ी तक जीवित रह पाते....

मि० शर्मा—(भरे गले से) नहीं मेरे बच्चों ! चाहे जो भी हो, तुम्हें उस पावन घड़ी की प्रतीक्षा में जीना है, पूरी शक्ति और अदम्य विश्वास के साथ....मेरे आशीर्वाद तुम्हारे लिये...

और तभी मुलाकाती घड़ी की समाप्ति को सूचित करते हुए पहरेदार लाल और रेखा को अपने अधिकार में ले लेते हैं।

• •

शहर का सिविल लाइन्स एरिया ! चारो ओर अंग्रेजों के खुशनुमा बंगले। बगलों के सामने छोटे-मोटे सुसज्जित गार्डेन्स। ब्राउन के बंगले के सामनेवाले भव्य गार्डेन में एक बड़ी गोल मेज के चारो ओर कुर्सियों पर, पुलिस अधिकारियों, शहर के प्रतिष्ठित नागरिकों का जमघट।

मेज पर खान-पान की सामग्री यत्र-तत्र बिखरी पड़ी दीख रही है। कई वर्दीधारी वेटर तत्पर-भाव से खड़े हैं।

ब्राउन—मिस्टर शर्मा का सम्मान करके सरकार ने अपनी विशालता का परिचय दिया है। एक वर्ष की लम्बी छुट्टी के पश्चात् जब मैं मिस्टरशर्मा से पहली बार मिला तो वे अप्रत्याशित रूप से प्रसन्न दीख पड़े थे। अब आज जब मैं उनकी पदोन्नति की सूचना दूंगा तो विश्वास रखिये, वे प्रसन्नता से झूम उठेंगे बाडीगाड, वे आ रहे हैं।

सब लोग घूमकर फाटक से घुस रहे मिस्टर शर्मा की ओर देखने लगते हैं। मिस्टर शर्मा सादी पोशाक में हैं। पीछे-पीछे रामलाल चला आ रहा है। उन्हीं की-सी वेश-भूषा में।

ब्राउन—(प्रसन्न स्वर) आइये मिस्टर शर्मा !

मि० शर्मा—नमस्कार, मि० ब्राउन !

ब्राउन—(सम्बोधन से किंचित चौंकता हुआ) मिस्टर शर्मा ! सरकार ने आपकी आई० जी० के पद पर उन्नति की है। आप अपनी इच्छानुसार किसी भी प्रान्त को चुन सकते हैं और साथ ही दस हजार रुपये कल....

मि० शर्मा—(उसे बीच ही में रोकते हुए) मिस्टर ब्राउन ! सरकार के इस अनुग्रह का मैं आभारी हूँ, परन्तु शायद आपको मालूम नहीं कि मैंने सरकारी-सेवा से अवकाश ग्रहण करने का निश्चय कर लिया है। यह रहा मेरा इस्तीफा (वे अपनी जेब से एक कागज निकालकर उनकी ओर बढ़ा देते हैं) संसार में मेरा अपना शायद कोई नहीं....लड़की थी सो अब....

ब्राउन—(हड़बड़ाकर) मिस्टर शर्मा !

मि० शर्मा—आशा है, आपको इनकार न होगा। इतने दिनों की सरकारी-सेवा से थक चुका हूँ सो अब शान्तिपूर्वक किसी एकांत कोने में....

रामलाल—(आगे बढ़कर) और हुजूर। मैं भी शर्मा जी के चरणों की सेवा में....

वह भी अपना लिखित त्यागपत्र, ब्राउन के सामने रख देता है और मिस्टर शर्मा के पीछे-पीछे फाटक की ओर बढ़ जाता है।

सब चित्रलिखित-से बैठे रह जाते हैं। मिस्टर शर्मा की कार के चलने की आवाज आती है....

● ●

लालकिला दिल्ली, यूनियन जेक के स्थान पर तिरंगा लहरा रहा है। चारों ओर फूलों और ट्यूब लाइटों के अक्षरों में लिखा है—१५-अगस्त १६४७।

चारों ओर उत्साह का समुद्र लहरा रहा है।

सारा देश जैसे लाल किला दिल्ली की ओर उन्मुख हो उठा है। देश के अणु-अणु में स्वतन्त्रता के विजय-दीप झिलमिला उठे हैं।

भारत माँ के पैरों बन्धन टूट रहे हैं, उनके ओंठों पर मुस्कान है! विजय से पुलकित हुई-सी मुस्कान।

● ●

शहीदों की मजारों पर लगेंगे हर बरस मेले,
वतन पर मिटने वालों का यही बाकी निशा होगा।

मिस्टर शर्मा का बँगला राष्ट्रीय-पताकाओं से आवेष्ठित है। चारों ओर बल्बों का प्रकाश चमचम कर रहा है। लाउडस्पीकर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल' की आत्मा के उद्गारों को प्रसारित कर रहा है। मिस्टर शर्मा अन्दर से अत्यन्त व्यस्त-भाव से हड़-बड़ाये हुए आते हैं।

मि० शर्मा—अरे रामलाल!

रामलाल—जी!

मि० शर्मा—(उल्लासाधिक्य से काँपता स्वर)—अरे बेवकूफ,

जाकर दाई से कह, उसके लाल-रेखा अब आने ही वाले हैं....

रामलाल दौड़ता हुआ अन्दर भागता है।

उसी समय सहस्त्रों कण्ठों से निकला स्वर—

भारत माँ की जय !

लाल-रेखा की जय !!

मिस्टर शर्मा की जय !!!

राष्ट्रपिता बापू की जय !!!

जुलूस के आगे-आगे पुष्पमालाओं से ढँकी हुई कार में लाल और रेखा दीख पड़ते हैं।

लाल और रेखा कार से उतर कर दौड़ते हुए पुलकित से बड़े मिस्टर शर्मा के चरण पकड़ लेते हैं।

जुलूस एक बारगी ही जयजयकार कर उठता है।

दाई—(उन्मत्त-सी) अरे, मेरी बच्चो....मेरा लाल....

मि० शर्मा—दाई ! अपने को सम्हालो दाई !

दाई अपनी जीर्ण भुजाओं में लाल और रेखा को समेटने का प्रयास करती है।

मि० शर्मा—(लाल और रेखा को निहारते हुए)—देखा मेरे बच्चों, अहिंसा का प्रताप...विश्व के इतिहास में बापू का यह अप्रतिम सेनापतित्व स्वर्णाक्षरों में अंकित होगा....

लाल और रेखा ने देखा, कभी बापू की अहिंसा को खून में डुबो कर स्वतन्त्रता की आकांक्षा आज, वाह्य नहीं अन्तस में बापूमय हो रही है।

लाउडस्पीकर पर रिकार्ड चहक रहा है—

आज शहीदों की मजार पर जगमग है दीवाली
मातृभूमि की माँग चमकती लिये खून की लाली
माँ के लाल धन्य हैं वे, जो हँस-हँस फाँसी चूमें
आजादी के लिये बने पागल, लपटों में झूमें
बोटी-बोटी कटी देह की, फिर भी आह न आयी
बहनों की लज्जा में घुसकर संगीनें मुस्कायीं
बीते दिन की करुण कहानी, सोच हृदय भर आये
युग-युग की इस कठिन तपस्या से आजादी पाये

* बस *